Dr. N. Gopi ki Hindi mein Anudit Kritiya: Vishleshan aur Mulyankan

Thesis Submitted in Partial Fulfilment of the Requirement for the Degree of
"DOCTOR OF PHILOSOPHY" in Hindi

Submitted By

KONDRA RAVIKUMAR M.A., M.Phil.

Research Supervisor

Dr. M. Anjaneyulu

Department of Hindi, School of Humanities: University of Hyderabad
(P.O.) Central University, Gachibowli,
Hyderabad - 500 046, Telangana State.

February 2017

डॉ. एन. गोपि की हिंदी में अनूदित कृतियाँ :

विश्लेषण और मूल्यांकन

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पीएच.डी. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध)

फरवरी 2017

<u>शोधार्थी</u>

कोंड्रा रविकुमार एम.ए., एम.फिल.

<u>शोध-निर्देशक</u>

डॉ. एम. आंजनेयुलु

प्रवक्ता, हिंदी विभाग

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

<u>विभागाध्यक्ष</u>

प्रो. आर.एस. सर्राजु

अध्यक्ष, हिंदी विभाग

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय

हिंदी विभाग, मानविकी संकाय : हैदराबाद विश्वविद्यालय,

हैदराबाद – 500 046.

DECLARATION

I, KONDRA RAVIKUMAR here by declare that the thesis entitled **“Dr. N. Gopi ki Hindi mein Anudit Kritiya: Vishleshan aur Mulyankan”** submitted by me under the guidance and supervision of Dr. M. Anjaneyulu is a bonafide research work. I also declare that it has not been submitted previously in part or in full to this University or any other University or Institution for the award of any degree or diploma.

Date:

KONDRA RAVIKUMAR

Signature of the Student

Regd. No. 11HHPH07

CERTIFICATE

This is to certify that the thesis entitled **"Dr. N. Gopi ki Hindi mein Anudit Kritiya: Vishleshan aur Mulyankan"** submitted by KONDRA RAVIKUMAR bearing Regd. No. 11HHPH07 in partial fulfilment of the requirements for the award **Doctor of Philosophy** in School of Humanities is a bonafide work carried out by him under my supervision and guidance.

The thesis is free form plagiarism and has not been submitted previously in part or full to this or any other University or Institution for award of any degree or diploma.

Parts of this thesis have been:

A. Published in the following publications:

1. Dr. N. Gopi ki Rachanatmak chetana ka vikaas (ISSN No. 2348-6163), Chapter 2.
2. Dr. N. Gopi aur Jalgeetam, (ISSN No. 2277-9264), Chapter 3.

Further, the student has passed the fllowing courses towards fulfillment of coursework requirement for Ph.D. on the basis of the following courses passed during his M.Phil. Program and the M.Phil. Degree was awarded.

Course Code	Name	Credits	Pass/Fail
1. HH701	Research Methodology	4	Pass
2. HH702	Modern Thought	4	Pass
3. HH703	Sociology of Literature	4	Pass
4. HH704	Aesthetics and Stylistics	4	Pass

Supervisor	Head of the Department	Dean of the School
Dept. of Hindi	Department of Hindi	School of Humanities

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना I

प्रथम अध्याय 1

1. काव्यानुवाद : कविता के संदर्भ में 1

1.1. अनुवाद क्या है ? 4

1.2. साहित्य क्या है ? 8

1.3. अनुवाद और साहित्य का संबंध 13

1.4. कविता और अनुवाद 22

1.5. कविता को लेकर दी जानेवाली परिभाषाएँ 26

1.6. कविता का अनुवाद कठिन क्यों है? 34

1.7. तेलुगु और हिंदी भाषाओं के संदर्भ में अनुवाद की समस्याएँ 41

1.7.1. शब्द संबंधी 42

1.7.2. छंद संबंधी 43

1.7.3. शैली संबंधी 46

1.7.4 व्याकरण संबंधी समस्याएँ 47

1.8. समस्याओं का व्यावहारिक समाधान 50

द्वितीय अध्याय 51

2. डॉ.एन.गोपि की रचनात्मक चेतना का विकास और अनुवादकों के संक्षिप्त परिचय 51

2.1. बाल्य-जीवन 51

2.2. शिक्षा-दीक्षा 52

2.3. साहित्य-सृजन 62

2.4. शोधकार्य 73

2.5. पुरस्कार और सम्मान 78
2.6. प्रशासन क्षेत्र में प्रशासक के रूप में एन.गोपि 81
2.7. आन्ध्रप्रदेश के राज्य स्तर पर विभिन्न कमिटियों में एन.गोपि 81
2.8. अनुवादकों का संक्षिप्त परिचय 83
2.8.1. डॉ. पोली विजयराघव रेड्डी (नन्हे मुक्तक) 85
2.8.2. प्रो. पी. माणिक्यांबा (जलगीत) 88
2.8.3. श्रीमति आर. शांता सुंदरी 90
2.8.3.1.समय को सोने नहीं दूँगा 92
2.8.3.2. गोपि की कविता 93
2.8.3.3.गोवा, मैं और समुद्र 94
2.8.3.4.मेरा गाँव महाकाव्य 94
2.8.4. डॉ. सना (गोपि के नन्हे मुक्तक) 95
तृतीय अध्याय 97
3.'जलगीत': अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण 97
3.1. 'जलगीत' का औचित्य 97
3.2. 'जलगीत' रचना के कारण 98
3.3. 'जलगीत' का प्रतिपाद्य 99
3.4. 'जलगीत' का विश्लेषण 121
चतुर्थ अध्याय 148
4. 'जलगीत' के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक-मूल्यांकन 148
4.1. अंतर्वस्तु 148
4.2. रूप विधान 151
4.3. शब्द-चयन के स्तर पर 152
4.4.लोकोक्तियों एवं मुहावरों का अनूदित रूप 155
4.5. अनूदित पाठ का विश्लेषण एवं मूल्यांकन 160

पंचम अध्याय 168

5. 'समय को सोने नहीं दूँगा' और 'समुद्र, मैं और गोवा' संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यंकन 168

5.1. समय को सोने नहीं दूँगा 168

5.1.1. समय को सोने नहीं दूँगा लिखने का कारण 169

5.1.2. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण 169

5.1.3. अनुवाद संबंधी समस्याएँ 175

5.1.3.1. शब्द प्रयोग के स्तर पर 175

5.1.3.2. वाक्य निर्माण को लेकर 176

5.1.3.3. पद-बंधों के संदर्भ में (शब्द स्तर पर) 177

5.1.3.4.लिंगगत समस्याएँ 178

5.1.3.5. देशज शब्दों के संदर्भ में 179

5.1.3.6.शीर्षक को लेकर समस्याएँ 179

5.1.4. अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यंकन 180

5.2. समुद्र, मैं और गोवा 212

5.2.1.कविता लिखने के पीछे कारण 212

5.2.2. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण 214

5.2.3. अनुवाद संबंधी समस्याएँ 220

5.2.3.1.शीर्षकों का अनुवाद 220

5.2.3.2.शब्दानुवाद/भावानुवाद 221

5.2.3.3.लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग 222

5.2.3.4.अंग्रेजी शब्दों का हिंदी अनुवाद 224

5.2.4. अनूदित पाठ का विश्लेषण और मूल्यंकन 225

छठवाँ अध्याय 223

6. 'नन्हे मुक्तक' और 'गोपि के नन्हे मुक्तक' संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन 223

6.1.नन्हें मुक्तक 223

6.1.1. नन्हे मुक्तक क्या है ? 223

6.1.2. नन्हे मुक्तक लिखने के पीछे कारण 224

6.1.3. तेलुगु में नन्हे मुक्तकों का आगमन 226

6.1.4. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण और मूल्यांकन 227

6.1.5. अनुवाद संबंधी समस्याएँ 234

6.1.5.1. भावानुवाद / शब्दानुवाद 235

6.1.5.2. अंग्रेजी शब्दों का अनुवाद 236

6.1.5.3. उर्दू एवं फारसी शब्दों का प्रयोग 237

6.1.5.4. अनुवाद में अशुद्धियाँ 237

6.1.5.5. वाच्य के संदर्भ में 238

6.1.5.6. अनुवाद में कविता का बदलाव 239

6.1.5.7.मुहावरा/लोकोक्तियों का प्रयोग 239

6.2. गोपि के नन्हें मुक्तक 240

6.2.1. गोपि के नन्हे मुक्तकों के परिचय 240

6.2.2. अनुवाद संबंधी समस्याएँ 242

6.2.2.1.उर्दू, अरबी, फारसी एवं तुर्की शब्दों के अनुवाद 242

6.2.2.2.पाद-टिप्पणी 243

6.2.2.3.अनुवाद में नन्हे मुक्तकों के बदलाव 245

6.2.2.4.अंग्रेजी शब्दों का अनुवाद 249

6.2.3. अनूदित पाठ का विश्लेषण और मूल्यांकन 250

उपसंहार 251

संदर्भ ग्रंथ सूची 258

आधार ग्रंथ (तेलुगु) 258
आधार ग्रंथ (हिंदी) 258
सहायक ग्रंथ (तेलुगु) 259
सहायक ग्रंथ (हिंदी) 260
सहायक ग्रंथ (अंग्रेजी) 262
पत्र-पत्रिकाएँ 263
तेलुगु 263
अंग्रेजी 264
हिंदी 264
साक्षात्कार 264
कोश 265
वेबसाइट सामग्री 265
आलेख-1
आलेख-2

प्रस्तावना

प्रस्तावना

21 वीं शताब्दी के इस प्रारंभिक दशक में मानव जीवन के लिए अनुवाद की उपयोगिता अत्यधिक बढ़ी है। आज का मानव किसी भी देश, काल और भाषा विशेष की रचना को अत्यल्प समय में पढ़ने का आकांक्षी हो गया है। इसलिए अनुवाद की जरूरत मनुष्य की ज्ञान की भूख के समानांतर बढ़ी है। अनुवाद को आज दोयम दर्ज़े का कर्म नहीं माना जाता बल्कि उसे श्रमसाध्य एवं महत्त्वपूर्ण कर्म के रूप में स्वीकारा जा चुका है। भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है। सम्पूर्ण भारतीय साहित्य के समग्र अवलोकन के लिए अनुवाद का कर्म और उसे मूल्यांकन और विश्लेषण का महत्त्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। प्रस्तुत शोध विषयक ग्रंथ भी इससे इतर नहीं है।

डॉ.एन गोपि मूलतः कवि हैं। इसके साथ-साथ साहित्य की अन्य विधाओं में भी उन्होंने अपनी साहित्य-साधना की है। गोपि तेलुगु जगत में शोधकर्ता, अनुवादक, लेखक, निबंधकार, यात्रा-साहित्य के लेखक, पत्रिका संपादक, स्तंभ-लेखक और भूमिका लेखक के रूप में ख्यात हैं। इनके अनेक कविता-संग्रहों का भारतीय भाषाओं के साथ अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। आपके लेखन से तेलुगु-जगत के साथ-साथ अन्य भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं के पाठक सुपरिचित हैं। अभी तक इनके द्वारा लिखी गयी 45 साहित्यिक रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। इनमें से 21 कविता-संग्रह हैं, छः आलोचनात्मक ग्रन्थ हैं, पाँच यात्रा-वृत्तांत हैं, चार शोध ग्रन्थ हैं, पाँच अनुवाद ग्रन्थ तथा चार अन्य ग्रन्थ हैं। इनके द्वारा लिखित हर कविता-संग्रह पर इन्हें पुरस्कार मिले हैं।

मैंने अपने शोध-कार्य में इनके द्वारा लिखे गये पाँच कविता-संग्रहों का चयन किया है, जो इस प्रकार हैं- 1. जलगीत, 2. समय को सोने नहीं दूँगा, 3. समुद्र, मैं और गोवा, 4. नन्हे मुक्तक, 5. गोपि के नन्हे मुक्तक।

'जलगीतम्' प्रदीर्घ कविता इनका सर्वश्रेष्ठ काव्य-संग्रह है। कवि की यह महात्त्वाकांक्षी लम्बी कविता है। इस रचना की उपयोगिता अखिल भारतीय स्तर के साथ विश्व स्तर पर बन पड़ी है। एन.गोपि जी का काव्य-कौशल, तत्त्व दर्शन, मानवतावादी अभिगम, अभिनिवेश और उनके कवि रूप की प्रकट प्रच्छन्न छटाएँ हम जलगीत में देख सकते हैं। भारतीय साहित्य में जल पर लिखी गयी 'जलगीत' प्रदीर्घ एवं अन्यतम रचना है। इसमें प्रकृति के निसर्ग सूत्रों को नयी परिभाषा दी गयी है। इसमें जल को एक संस्कृति के रूप में देखा गया है। इस कविता का हिंदी में रचना दृष्टि से संपन्न अनुवाद प्रो. पी.माणिक्यांबा ने किया है।

साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2000 में पुरस्कृत मूल तेलुगु कृति 'कालान्नि निद्रपोनिव्वनु' यानी समय को सोने नहीं दूँगा की कविताओं में फूल है, बारिश है, सूरज है, आकाश है, समुद्र है, जल के रूप में आँसू की बूँदे हैं – यानी प्रकृति का स्वाधीन संसार है। इन कविताओं के माध्यम से इस संसार का मनुष्य-जीवन में महत्व व्यंजित किया गया है, प्रकृति के तत्व के समक्ष मनुष्य की लघुता का भी अहसास कराया गया है। प्रकृति का मानवीकरण जो इनमें किया गया है उसे एक अलंकार के या सरलीकृत के रूप में नहीं लिया जा सकता। यह गुण कवि श्री एन. गोपि की लगभग प्रत्येक कविता में है। बोध को संवेदना या भाव में परिवर्तित करने का यह ऐसा प्रयास है जो अब धीरे-धीरे समाप्त होता जा रहा है और एक तरह से दुर्लभ होता जा रहा है। इस कविता-संग्रह का हिदीं अनुवाद श्रीमति आर. शांता सुंदरी ने 'समय को सोने नहीं दूँगा' शीर्षक से किया है।

समुद्र, मैं और गोवा' एक छोटा सा प्यार भरा एहसास है जो डॉ.एन.गोपि को गोवा का दर्शन करने के बाद प्राप्त हुआ। हरी-भरी पहाड़ियों के साथ खेलती हुई बारिश, माण्डवी, जुआरी जैसी हमारे मन को खींचकर अपने दिल के पास रख लेनेवाली

लुभावनी नदियाँ, यहाँ के किनारों की चमकीली रेल पर आकर अपनी लहरों को दुलराने वाला समुंदर देखकर गोपि जी का मन खनक उठा है, गूँज उठा है, और उनकी ये जल-तरंगें उनके अंतर्मन में से खींच लाई हैं ये कविताएँ। इसमें केवल 18 कविताएँ हैं। इसका अनुवाद भी श्रीमति आर. शांता सुंदरी ने किया है।

नानीलु' (Epigrams) (नन्हे मुक्तक) कविता-प्रक्रिया का प्रयोग आधुनिक तेलुगु काव्य-जगत् में 20 वीं शती के अंतिम दशक से नवीन प्रवृत्ति की सृष्टि है। इसी काव्य-संग्रह से गोपि ने हिंदी जगत में प्रवेश किया। नन्हे मुक्तकों के रूप में रूपायित होकर तेलुगु 'नानीलु' ने न केवल पाठकों का हृदय स्पर्श किया अपितु तेलुगु साहित्यिक जगत् के युवा और प्रौढ़ कवियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। 'नानीलु' ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुए अभी पूरे ग्यारह साल नहीं हुए, लेकिन सैकड़ों कवि इस नए छंद को अपनाकर कविताएँ लिखने लगे हैं। एक सौ से भी अधिक 'नानीलु' के संकलन प्रकाशित हुए हैं। 'नानीलु' कविता संग्रह में पूरे 365 नानीलु (मुक्तक) हैं। इसे डॉ.पोलि विजयराघव रेड्डी ने हिंदी में 'नन्हे मुक्तक' शीर्षक से हिंदी में प्रकाशित किया था।

'गोपि नानीलु' (गोपि के नन्हे मुक्तक) द्वितीय संग्रह हैं। इस संग्रह में कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के कुल दिनों जैसा।) इसमें एन.गोपि की ढेर सारी अनुभूतियाँ मिलती हैं। मन का चित्रण, मनुष्य का चित्रण, राजनीति, साम्यवाद, मानव-जीवन के वैविध्य का अत्यन्त गहराई के साथ चित्रण किया गया है। कुछ मुक्तकों में स्त्री और स्त्रीवादी तत्व उल्लेखनीय हैं। प्रतीकात्मकता प्रशंसनीय है। सामाजिक चेतना अवलोकनीय है। सीमित अक्षर-सम्पदा में असीम भाव-संपन्नता की सृष्टि, एक और विशेषता है। यह भी हिन्दी और उर्दू दो भाषाओं में अनूदित हैं। डॉ. सना ने एन. गोपि द्वारा लिखित 'गोपि नानीलु' का हिंदी में 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक से अनुवाद किया।

प्रस्तुत शोध प्रबंध विषय का शीर्षक है - **"डॉ. एन. गोपि की हिंदी में अनूदित कृतियाँ : विश्लेषण और मूल्यांकन"** शोध विषय पर अभी तक कोई शोध-कार्य नहीं हुआ है। जो शोध-कार्य हुए हैं वे डॉ. एन. गोपि के जलगीत, नन्हे मुक्तक, समय को सोने नहीं दूँगा आदि कविताओं के अंतर्वस्तु को लेकर हुए हैं। ये शोध कार्य तेलंगाना, आंध्रप्रदेश के राज्य स्तर में स्थित विश्वविद्यालय के तेलुगु विभागों में हुए हैं। इसी विश्वविद्यालय के इसी विभाग में मैंने एम.फिल. में **"जलगीतम् का हिंदी अनुवादः विश्लेषण और मूल्यांकन"** शोध-कार्य किया है। मेरा शोध-कार्य अनुवाद से संबंधित है और तुलनात्मक पद्धति, व्याख्यात्मक पद्धति, साक्षात्कारपरक पद्धति से किया गया है। उपर्युक्त शोध-कार्यों से यह शोध-कार्य जुड़कर भी भिन्न इस रूप में है कि उनके मूल एवं हिंदी में अनूदित समग्र-साहित्य को लेकर अभी तक कोई भी शोध-कार्य नहीं हुआ है।

प्रस्तुत शोध विषय **"डॉ. एन. गोपि की हिंदी में अनूदित कृतियाँ : विश्लेषण और मूल्यांकन"** को मैंने शोध-कार्य दृष्टि से प्रस्तावना और उपसंहार के अलावा छः अध्यायों में विभाजित किया है। शोध-ग्रंथ के अंत में संदर्भ-ग्रंथ सूची भी दी गई है।

प्रथम अध्याय में **"काव्यानुवाद : कविता के संदर्भ में"** को दर्शाया गया है। इस अध्याय में अनुवाद क्या है, साहित्य क्या है, अनुवाद और साहित्य का संबंध, कविता और अनुवाद, कविता को लेकर दी जानेवाली परिभाषाएँ, कविता का अनुवाद कठिन क्यों है इन सारे बिंदुओं को संक्षिप्त रूप में सामने लाने का प्रयास किया है। वैश्वीकरण के दौर में अनुवाद का क्षेत्र एवं महत्त्व दोनों ही बड़ा है।

द्वितीय अध्याय **"डॉ.एन.गोपि की रचनात्मक चेतना का विकास और अनुवादकों के संक्षिप्त परिचय"** के अंतर्गत उनके द्वारा दिया गया साक्षात्कार एवं उनके जीवन के बारे

में लिखे गये लेखों को आधार बनाकर उनके बाल्य-जीवन, शिक्षा-दीक्षा, साहित्य-सृजन, पुरस्कार-सम्मान, प्रशासन क्षेत्र में प्रशासक के रूप में एन.गोपि, इसके साथ अनुवादकों के जीवन परिचय एवं अनूदित कृति से इनका संबंध, अनुवाद कार्य के लिए प्रेरित घटनाएँ इत्यादि बिंदुओं के अंतर्गत एन.गोपि के जीवन परिचय और अनुवादकों के परिचय को सविस्तार-रूप से दिया गया है।

तृतीय अध्याय **"जलगीत : अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण"** में 'जलगीतम्' की विषय वस्तु को 'जलगीत' का औचित्य, 'जलगीत' की रचना के कारण, 'जलगीत' का प्रतिपाद्य, 'जलगीत' के **विश्लेषण** बिंदुओं के माध्यम से विवेचन-**विश्लेषण** करने का प्रयास किया गया है।

चतुर्थ अध्याय **'जलगीत' के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन** के अंतर्गत मूल एवं अनूदित पाठ दोनों की अंतर्वस्तु, रूप-विधान, शब्द-चयन के स्तर पर, लोकोक्तियों एवं मुहावरों का अनूदित रूप, अनूदित पाठ का विश्लेषण और मूल्यांकन इन बिंदुओं के अंतर्गत शोध में विश्लेषण और मूल्यांकन किया गया है।

पंचम अध्याय में **"समय को सोने नहीं दूँगा' और 'समुद्र, मैं और गोवा' संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यंकन"** के अंतर्गत इस अध्याय को सुविधा के अनुसार दो छोटे खंडों में बाँटा गया हैं, जिसमें पहला समय को सोने नहीं दूँगा लिखने का कारण, इसकी अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण, अनुवाद से संबंधी समस्याएँ जैसे शब्द-स्तर पर, वाक्य-स्तर पर, पदबंधों के स्तर पर, मांडलिकों (देशज शब्दावली) को लेकर, शीर्षकों को लेकर, लिंगगत समस्याएँ आदि बिंदुओं का **विश्लेषणात्मक** मूल्यांकन किया गया है।

छठवाँ अध्याय में **'नन्हे मुक्तक' और 'गोपि के नन्हे मुक्तक' के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन** के अंतर्गत नन्हे मुक्तक क्या है, नन्हे मुक्तकों की शैली,अनुवाद से संबंधी समस्याएँ गोपि के नन्हे मुक्तक क्या है, इस संग्रह में आये अनुवाद संबंधी समस्याएँ आदि के बारे में विश्लेषणात्मक मूल्यांकन किया गया है।

यह शोध प्रबंध डॉ.एम. आंजनेयुलु जी के निर्देशन में संपन्न हुआ है। प्रस्तुत शोध प्रबंध को विषय चयन से लेकर प्रस्तुत करने तक अपने निर्देशक के द्वारा प्राप्त सहयोग तथा समय-समय पर मिलने वाले मार्गदर्शन के लिए मैं हृदय से उनके प्रति अपनी कृतज्ञता और श्रद्धा अर्पित करता हूँ। वे मेरी जिज्ञासाओं को लगातार शांत करते रहे एवं शोध से संबंधित सामग्री व अन्य आवश्यक जानकारी उन्होंने दी। उनकी प्रेरणा से ही मैंने हिंदी और तेलुगु टाइपिंग सीखी। इस वजह से यह शोध-प्रबंध खुद टाइपिंग करने में मुझे सफलता मिली। इन्होंने ही मुझे बार बार अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए हमेशा प्रोत्साहन दिये और पी.पी.टी. प्रस्तुति के लिए विशेष अनुमति दी। शोधकार्य के साथ अपने नौकरी तथा पारिवारिक संबंधी विशेष सुझाव भी दिये।

इस शोध-कार्य के लिए मैं हमारे वर्तमान विभागाध्यक्ष प्रो.आर.एस. सर्राजु जी के प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिन्होंने मेरे विषय की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता को समझते हुए इस विषय पर शोध प्रबंध करने की अनिवार्य अनुमति प्रदान की। विभाग की शोध सलाहकार समिति एवं सभी प्राध्यापकों को हृदय से धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से समय समय पर प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया तथा साहित्य के प्रति मेरी अभिरुचि को अग्रसर किया, विशेष रूप से डॉ.भीमसिंह जी। उन्होंने मुझे टाइपिंग सीखने में मदद की और कई बार मुझे आर्थिक सहायता की। इसके साथ साथ मेरा एम.फिल से लेकर पीएच.डी. तक तथा आर.जी.एन.एफ., ए.पी.सेट, यू.जी.सी. नेट., पाठशाला में नौकरी पाने तक इनका बहुत बड़ा योगदान रहा। इसके

साथ ही मैं डॉ. जे. आत्माराम जी को हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ, जिन्होंने मेरे इस शोध कार्य से संबंधी आवश्यक सूचनाएँ एवं सुझाव दिये और शोध-कार्य को सफल होने में सहायक बने।

इस शोध प्रबंध में जाने माने कवि डॉ.एन.गोपि जी के सहयोग के लिए मैं हृदय से उनका आभार मानता हूँ, जिन्होंने बिल्कुल अपनापन दिखाते हुए हर संभव सहयोग प्रदान किया। अपनी व्यस्तताओं के बीच भी उन्होंने समय निकालकर मुझे साक्षात्कार दिया और शोध संबंधी सामग्री मुझे पढ़ने को दी। इसके साथ हिंदी अनुवादकों के प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ जिन्होंने मूल एवं अनूदित पाठ के बारे में अधिक जानकारी दी और सुझाव एवं सलाह भी दिये।।

इस अवसर पर मैं उन दो त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिकाओं के संपादकों को भी धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ जिन्होंने मेरे शोध विषय से संबंधित दो आलेखों को छापा है जिनके शीर्षक इस प्रकार हैं- **1.डॉ. एन.गोपि की रचनात्मक चेतना का विकास** (साहित्य सेतु, जुलाई-सितंबर, 2016 अंक में), **2. डॉ. एन. गोपि और जलगीतम्** (संकल्य, जुलाई-सितंबर 2016 अंक में)

इसके अलावा मैं नहीं भूल सकता उन सभी अग्रज शोधार्थियों एवं मित्रों के प्रोत्साहन, सलाह एवं सहायता को, जिनके कारण मैं अपने मनोबल को बढ़ा पाया हूँ और इस शोध को पूरा कर पाया हूँ। उन सबके प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ। इनमें सी. सुरेश, बी. दुर्गाराव, श्रवणकुमार आर्य, गोरांग चरण राउत, नरेंद्र प्रसाद बेहेरा, सुभाष, मंजुला, सुजाता, सूर्या आदि के प्रोत्साहन को मैं कभी नहीं भूल सकता हूँ। अंत में मैं अपने बचपन का मित्र का नाम लेना चाहूँगा बी. सुरेष (प्रवक्ता, पालमूरु विश्वविद्यालय) जिसने मुझे इस शोध प्रबंध को सटीक रूप से तैयार करने में समय समय पर मदद की और पी.पी. टी. तैयार करनें में विशेष सुझाव दिया है।।

ऋणी हूँ अपने माता-पिता नर्सु बाई – बक्कन्ना का, जिन्होंने निरक्षर होते हुए भी मुझे इस योग्य बनाया है। मैं नहीं भूल सकता मेरी पत्नी श्रीमति गंगालक्ष्मी के असीम प्रोत्साहन को चूँकि पारवारिक समस्याओं को वे अकेली संबाली हैं। उन्होंने मुझे शोधकार्य करने में प्रोत्साहन दिया और इस शुभ अवसर पर मैं अपने बेटे गौतम कुमार को याद करना चाहूँगा। साथ ही मेरी बहन रम्या के प्यार ने मुझे सदा प्रेरणा दी है, कंप्यूटर से संबंधी विशेष जानकारी दी। इनके अलावा अपने परिवार के सभी सदस्यों एवं मित्रों के प्यार एवं प्रोत्साहन के प्रति मैं विशेष आभार प्रकट करता हूँ। अंत में मैं अपने कार्यस्थल जिला परिषद उन्नत पाठशाला, अन्नारम (मंडल रामारेड्डी) के प्रधानाध्यापक एवं मेरे सहकर्मचारीगण और विशेष रूप से सभी छात्र-छात्राओं को धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ जिनके प्रोत्साहन एवं प्यार ने मेरे इस शोध-कार्य को सफल बनाया है।

कोंड्रा रविकुमार

11HHPH07

हिंदी विभाग

मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय।

प्रथम अध्याय

काव्यानुवाद : कविता के संदर्भ में

प्रथम अध्याय

1.काव्यानुवाद : कविता के संदर्भ में

मानव की मूल संवेदना पूरे विश्व में समान होती है। इस संवेदना की अभिव्यक्ति का अन्यतम माध्यम साहित्य है। साहित्य में नाटक, उपन्यास, कहानी आदि बहुत-सी विधायें आती है, किन्तु साहित्य की सभी विधाओं में कविता ही सबसे लोकप्रिय और सशक्त रही है। मानवीय अभिव्यक्तियों का साहित्यिक रूप सर्वप्रथम कविता के माध्यम से प्रस्तुत हुआ। विश्व साहित्य में सबसे पहले कविता आयी। कार्ल मार्क्स ने कविता को तो मानव की मातृ-भाषा तक घोषित कर दिया। साहित्य तमाम चीजों का विराट रजिस्टर है- मिथक, दर्शन, मनोविज्ञान, धर्म सबका। वह जीवन के अंतर्विरोधों और अराजकता को सहन करने और समझने लायक बनाने वाली चीज है।

कविता में ही किसी व्यक्ति को सबसे ज्यादा 'रस' मिल सकता है- क्योंकि उसमें ध्वनि, लय, संगीत, भाव, संवेदनायें, विचार सब कुछ रचा-बसा होता है, जो मनुष्य की मूल सहज प्रवृत्तियों को अन्दर तक छूकर उसे आनंद प्रदान करता है। कविता अपनी प्रकृति से ही बहुत-सी विशेषताएँ लिए होती है, जिसके कारण कोई एक व्यक्ति उसके 'रस' को समेट कर भी समेट नहीं पाता है, वह हर बार कुछ-न-कुछ फिसल जाती है। कविता के संबंध में प्राचीन काल में काफी कुछ खोजने का प्रयास किया गया। कविता के 'रस' तत्व को जानने के लिए काव्यशास्त्र खड़े किये गये, परन्तु कोई विद्वान कविता के संपूर्ण पक्षों को विश्लेषित नहीं कर पाया है, हर बार कुछ-न-कुछ छूटता ही रहा है। जब कविता को लेकर ही इतनी बड़ी परम्परा विकसित हो गई है, तब यदि हम उसके अनुवाद की बात करें तो यह और भी अधिक आवश्यक हो जाता है कि कविता के छोटे-

से-छोटे तत्व को लेकर विवेचन-विश्लेषण प्रस्तुत किए जाएँ, जिससे अनुवादकों को काव्यानुवाद में कुछ मदद मिल सके। कविताओं को दूसरी भाषा में अनुवाद करने की बात नहीं होती, तो मूल कविता की ज्यादा जाँच-पड़ताल भी नहीं हो पाती। परन्तु अनुवाद की बात आते ही हर विचार, भाव, तत्व निश्चित तर्कपूर्ण हो जाते हैं, क्योंकि उसे किसी और भाषा-भाषी को सम्प्रेषित करना होता है। अनुवाद के कारण ही कविताओं की समीक्षायें तर्कपूर्ण होती जा रही हैं। काव्यानुवाद मूल कविता को स्पष्टता देता है, उसके छिपे हुए तत्वों को उद्घाटित करता है। कुछ भी कहे, कविता भाषा में होती है और अनुवादक को भाषा की अभिधा, लक्षणा, व्यंजना, शब्द शक्तियों को जानकर ही कविता का 'रस' मिल सकता है। अतः भाषा के प्रयोजनों को समझेंगे तो उन प्रयोजनों के माध्यम से कठिन-से-कठिन कल्पना तक पहुँचा जा सकेगा।

आज के युग में अनुवाद की उपयोगिता एवं व्यावहारिकता के बारे में अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। इसका महत्त्व तो निर्विवाद है। अगर मानव इतिहास में इस प्रमुख विधा का आगमन न होता तो संभवतः आज भी विश्व के भाषा-भाषी समुदाय एक-दूसरे से अनभिज्ञ होते। मानव सभ्यता के विकास से साथ ही जब एक भाषा-भाषी समुदाय दूसरे भाषा-भाषी के बारे में ज्ञान प्राप्त करने लगे तो अनुवाद की आवश्यकता जागृत हुई। " आवश्यकता आविष्कार की जननी", उसी तरह जब एक भाषा-भाषी ने दूसरे भिन्न भाषी को जानना चाहा तो अनुवाद जन्मा। अनुवाद मानव सभ्यता के साथ ही विकसित एक तकनीक है जिसका आविष्कार बहुभाषिक स्थिति की विडंबनाओं से बचने के लिए किया गया।

भारत भी बहुभाषी देश है। विभिन्न भाषाओं के कारण परस्पर संप्रेषणीयता में व्यवधान पड़ना स्वभाविक था। ऐसे समय में एक संपर्क भाषा की आवश्यकता महसूस की गई। स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद हिंदी को राजभाषा का स्थान दिया गया, जिसके

फलस्वरूप शिक्षा और प्रशासन में हिंदी को एक नई भूमिका मिली। साहित्य, प्रशासन, विधि, कार्यालय, वाणिज्य, विज्ञान आदि क्षेत्रों के ज्ञान को विभिन्न विदेशी भाषाओं से हिंदी में लाने में अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, इसी तरह हिंदी भाषा में उपलब्ध ज्ञान को भारत एवं विश्व की अन्य भाषाओं तक पहुँचाने का काम अनुवाद कर रहा है।

हिंदी में काव्यानुवाद की परंपरा बड़ी प्राचीन है। मध्यकाल में विद्यापति, तुलसी, सूर आदि संस्कृत से पर्याप्त मात्र में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अनुवाद किये। तुलसी ने परंपरा से चली आ रही रामकथा को मौलिकता व अनुवाद के सम्मिश्रण से समृद्ध किया। उन्होंने कहीं शब्दानुवाद किये तो कहीं भावानुवाद का सहारा लिया। तुलसी की इस चयनशील मधुप्रवृत्ति की ओर संकेत करते हुए श्री राम नरेश त्रिपाठी ने लिखा है- 'संस्कृत नंदन कानन में विचरण करके तुलसीदास काव्य में मधुप ने समस्त फूलों का रस लेकर जो मधु तैयार करके हिंदू जाति को दान दिया है, उसका तुलना संसार के किसी दान से नहीं की जा सकती।'[1] अनुवाद की आत्मीकरण की प्रक्रिया का श्रेष्ठ उदाहरण है। रीतिकाल में भी संस्कृत से ही आई है। बिहारी, रहीम, वृंद आदि के अनेक दोहे संस्कृत अनुवाद ही है।

भारतेंदु युग में अनुवाद कार्य काफ़ी तेजी से आगे बढा। विशेषकर इस काल में नाटकों का काफ़ी मात्रा में अनुवाद किया गया। सन् 1880 में उन्होंने शेक्सपीयर के नाटक 'मर्चंट ऑफ वेनिस' का 'दुर्लभ बंधु' या 'वंशपुर का महाजन नाम' से रूपांतरण किया। लाला सीताराम ने शेक्सपीयर के प्रायः सभी नाटकों का मुक्तानुवाद हिंदी में किया।

द्विवेदी युग में तथा उसके बाद तो काव्यानुवाद की एक परंपरा ही बन गई।

[1] अनुवाद के विविध आयाम, 1999, डॉ.किशोरी लाल व्यास नीलकंठ, पृ.सं. 92

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने स्वयं अनुवाद किये और इस कार्य को काफ़ी प्रोत्साहन दिया। उस काल में आचार्य शुक्ल ने 'एड्विन परनाल्ड' के काव्य 'लाइट ऑफ एशिया' का अनुवाद हिंदी भाषा में 'बुद्ध चरित' के नाम से किया। फिटजराल्ड द्वारा अंग्रेजी में अनूदित 'रूबाइयत ऑफ उमर खय्याम' के आपने हिंदी अनुवाद हुए। सर्वश्री मैथिली शरण गुप्त, सुमित्रानंदन पंत, बच्चन, केशव प्रसाद पाठ, गिरिधर शर्मा, नवरत्न, बलदेव प्रसाद मिश्र, सूर्यनाथ तकरु, इकबाल वर्मा सेहर, गया प्रसाद गुप्त आदि खैय्याम की इस रचना के अनुवाद हिंदी में किये। इसी तरह गीता के भी हिंदी में अनेक अनुवाद हुए। आज तो भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद की प्रक्रिया बड़ी तेजी से चल रही है। 'भाषा' और 'अनुवाद' जैसी पत्रिकाएँ इस कार्य को आगे बढ़ा रही है।

काव्यानुवाद की सारी कठिनाइयों के बावजूद विश्वभर में प्राचीनकाल से ही श्रेष्ठ कृतियों का अनुवाद होता रहा है। संस्कृत के रामायण, महाभारत हो या ग्रीक काव्य इलियड आदेर्स, शेक्सपीयर के नाटक हो या वड्र्सवर्थ, कीट्स की कविता, उमर खय्याम की रूबाइयाँ हो या गालिब की ग़ज़ले, प्रसाद की कामायनी हो या नारायण रेड्डी की विश्वंभरा इन सभी कृतियों के अनुवाद हुए ही हैं। भारतीय भाषाओं में परस्पर आदान-प्रदान की प्रक्रिया बड़ी तीव्र गति से चल रही है। भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार द्वारा अनुवाद कार्य को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

1.1. अनुवाद क्या है ?

'अनुवाद' शब्द का संबंध 'वद्' धातु से है जिसका अर्थ है 'बोलना' या 'कहना'। प्राचीन भारत में शिक्षा की एक स्थापित परंपरा थी, जिसमें गुरू कहते थे शिष्य दोहराते थे। इस दुहराने को ही 'अनुवचन' कहते थे। "शब्दार्थ चिंतामणि" कोश में अनुवाद का अर्थ

'प्राप्तस्य पुनः कथने' अर्थात् "पहले कहे गए अर्थ को फिर से दोहराना" आदि दिया गया है। इसके ठीक उल्टे न्यायसूत्र के वात्सायान भाष्य में कहा गया है कि "अनुवाद" पुनरुक्ति नहीं है। अनुवाद सार्थक पुनः कथन होता है। आज के प्रयोग में भी इसी अर्थ का बोध किया जाता है।

"Translating consists in producing in the receptor language the closest natural equivalent to the message of the source language first in meaning and secondly in style"[2] - Nida

"The replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language" - Cattord[3]

"Translation is the transference of the content of a text from one language into another, bearing in mind that we cannot always dissociate the content from the form." - Forestem[4]

'संस्कृति' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है – सम् (उत्तम), कृति (अभिव्यक्तियाँ) अर्थात् वे उत्तम अभिव्यक्तियाँ ही संस्कृति है, जिनके द्वारा मानवता को सतत भौतिक, अधिभौतिक और आध्यात्मिक विशिष्टता प्राप्त होती रहती है। इस प्रकार 'संस्कृति' शब्द की व्युत्पत्ति के मूल में है- संस्कार और संस्कार भूमि, जलवायु के अनुकूल आचार-विचार, कार्यकलाप, जीवन-शैली और जीवन दर्शन से ग्रहीत सभी प्रकार के भाव। ये ही

[2] अनुवाद विज्ञान, भोलानाथ तिवारी, पृ.सं. 16

[3] अनुवाद विज्ञान, भोलानाथ तिवारी, पृ.सं. 16

[4] अनुवाद विज्ञान, भोलानाथ तिवारी, पृ.सं. 16

घटक हैं, जो समन्वित रूप में एक देश की संस्कृति की दूसरे देश की संस्कृति से अलग पहचान बनाते हैं। यह पहचान संभव होती है, एक भाषा से दूसरी भाषा में किए गए अनुवादों के द्वारा। संस्कृति मूलतः आत्मा का गुण है और इसके उपकरण हैं साहित्य व कलाएँ, शास्त्र व विधाएँ। अनुवाद इस आपसी आदान-प्रदान की प्रक्रिया में भाषा-भेद की बाधा को पाटने हेतु सेतु बनता है। प्रत्येक भाषा का एक विशिष्ट सांस्कृतिक परिवेश होता है, इसलिए दो भाषाओं में विचार व अभिव्यक्ति की भिन्नता होना स्वाभाविक है। अनुवाद इन भिन्नताओं में तालमेल बिठाता है।

मूल रचनाकार अपनी भाषा के माध्यम से एक जगत की सृष्टि करता है तो अनुवादक दूसरी भाषा में उसके प्रसार-विस्तार का दायित्व निभाता है। अपनी सांस्कृतिक चेतना, अपनी अंतर्दृष्टि, अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा और भाषिक दक्षता द्वारा मूल रचनाकार के भाषा जगत का इतना संवेदनात्मक विस्तार कर देता है। डॉ. कुसुम अग्रवाल यह मानती है कि 'सांस्कृतिक सूक्ष्मताओं और अभिव्यक्तों की बारीकियों को समझकर ही वह अनुवाद के साथ न्याय कर सकता है।'[5] वास्तव में जब एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते हैं तब भाषा का तो केवल परिवर्तन करते हैं, परंतु अनुवाद मूल भाषा में संचित एवं निहित उसके बोलनेवालों की संस्कृति का ही करते हैं। भाषा तो केवल संवाहक होती है उन सब घटनाओं की जिनके सम्मिश्रण का नाम है 'संस्कृति'। अनुवादक भाषा के व्यवधान को हटाकर दो भिन्न सांस्कृतिक परिवेशों में रहनेवाले व्यक्तियों के बीच संपर्क सेतु बन उन्हें आमने-सामने लाकर खड़ा कर देता है। शब्द के द्वारा साहित्यकार एक समानांतर संसार रचता है, एक ऐसा संसार जिसमें हम अपने समय, अपने समाज और अपने आत्मीय अनुभवों की छवि पाते हैं। यह संसार वास्तविकताओं के नये-नये यथार्थों से हमारा परिचय कराता है। वास्तविकता, जैसा हम

[5] अनुवाद शिल्पः समकालीन संदर्भ, डॉ. कुसुम अग्रवाल, पृ.सं. 50

देखते हैं या महसूस करते हैं, उससे भी कहीं भिन्न, अधिक विचित्र और जटिल होती है। उसकी परतों को एक सृजनशील मस्तिष्क विभिन्न क्रिया-कलापों, मानवीय अंतःक्रियाओं से खोलता चलता है। इस प्रक्रिया में अनेक चीज़े घटती हैं और साथ ही साथ एक अलग किस्म की दुनिया हमारी आँखों के सामने खुलती चलती है। हर साहित्यकार अपनी अलग और स्वायत्त दुनिया बनाता है फिर भी वह बराबर हमारी आज की दुनिया से जुड़ा रहता है। साहित्य, कलाएँ आदि समुचित रूप से संस्कृति का निर्माण करती हैं। इसी अर्थ में साहित्य का अनुवाद उसकी संस्कृति का अनुवाद होता है।

अतः अनुवाद का मूल उद्देश्य है स्रोत भाषा की रचना के भाव या विचार को लक्ष्य भाषा में यथासंभव मूल के निकटतम रूप में लाना। अनुवाद एक सांस्कृतिक सेतु है, जिसके सहारे स्रोत भाषा के विचार, अभिव्यक्तियाँ, संस्कृति लक्ष्य भाषा में अनूदित की जाती हैं। अनुवाद एक ऐसी विधा है जिसका सिद्धांत पक्ष उतना ही समृद्ध है जितना कि प्रयोग पक्ष। या यूँ कहें कि प्रयोग के आधार पर ही अनेकों अनुवाद-सिद्धांत स्थापित होते चले जाते हैं। जैसे- अनुवाद केवल भावानुवाद ही नहीं है, यह शब्दानुवाद भी है जिसमें शब्दों का यथावत अनुवाद किया जाता है। साथ ही यह छायानुवाद भी है जिसमें प्रमुख बातों के सार का एक ही अनुवाद होता है।

इस प्रकार अनुवाद अपने अनुप्रयोगों के कारण कई विधाओं और वर्गों में विभाजित है। यह दो भाषा-बिंदुओं के बीच चलनेवाली प्रक्रिया है। व्यापक रूप से कहा जाए तो अनुवाद प्रतीकांतर है। क्योंकि हर भाषा अपने विचार प्रतीकों में अभिव्यक्त करती है इसलिए एक प्रतीक द्वारा व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा के प्रतीकों में स्थानांतरित करता है। अनुवाद का परम लक्ष्य स्थानांतरण है, जिसकी सार्थकता परिचालक यानी अनुवादक पर आश्रित होती है।

अनुवाद न केवल लक्ष्य भाषा में विचारों, अभिव्यक्तियों का रूपांतरण करता है, बल्कि विश्व की संस्कृतियों के संपोषण और संवर्द्धन में भी सहायक होता है। अनुवाद एक

ऐसी प्रक्रिया है जो दो भाषाओं की बीच जन्म लेती है और दो संस्कृतियों के बीच की दरारों को भी पूरा करती है।

अनुवाद का अपना एक गरिमामय इतिहास है। चीनी यात्री फाह्यान ने भारत आकर संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और संस्कृत के कुछ ग्रंथों का अनुवाद भी किया। भक्तिकाल में महाकवि तुलसीदास से पहले के और बाद के कवियों ने भी अनुवाद कला को अपनाया। तुलसीदास ने संस्कृत के कुछ पदों का अनुवाद करके उन्हें रामचरितमानस में स्थान दिया है। उदाहरणार्थ :[6]

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत
अभ्युत्थानम् अधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।"

अनुवाद

"जब-जब होई धरम की हानी
बाढ़ हि असुर महा अभिमानी
तब-तब धरि प्रभु मनुज सरीरा
हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।"

1.2. साहित्य क्या है ?

साहित्य का जन्म और विकास पशु से मनुष्य के कायांतरण के रूप में हुआ है। मनुष्य की चेतना, भावना, आकांक्षा के विकास का पर्याय ही साहित्य है। मनुष्य के मनुष्य बनने की प्रक्रिया और साहित्य की सृजनात्मक प्रक्रिया में बहुत अधिक भिन्नता नहीं है। मनुष्य के सुख-दुख में उसका वास्तविक भाविक सहयोगी साहित्य ही होता है।

[6] अनुवाद क्या है ? -डॉ. राजमल बोरा, पृ.सं. 141

हमारे पास आज जो साहित्य उपलब्ध है वह दरअसल विकसित मानव मन का ही प्रमाण है। साहित्य के द्वारा मानव अपने विचारों, हाव-भावों, अपने समय और मनुष्य का इतिहास है। जिस तरह समाज में भिन्नताएँ हैं साहित्य में भी हैं।

एक समाज का साहित्य दूसरे समाज के साहित्य से एक अर्थ में भिन्न भी होता है। ऐसा इसलिए क्योंकि संस्कृतियाँ, वेश-भूषा, विचार, रहन-सहन, मान्यताएँ, पद्धतियाँ सभी एक दूसरे से अलग रहती हैं। पहले विश्व बहुत बड़ा मालूम होता था, क्योंकि विज्ञान इतना विकसित नहीं था। लेकिन जब विज्ञान में आकस्मिक और अप्रत्याशित अभिवृद्धि होने लगी तो विभिन्न समाज के लोग एक-दूसरे के संपर्क में आने लगे। तब उन्हें मुश्किल हुई क्योंकि एक-दूसरे से भाषिक रूप से अनजान होने के कारण आपसी संवादों के लिए अनुवाद की आवश्यकता हुई। यूँ तो अनुवाद पुरातन काल से ही मानव के बीच संवाद के लिए प्रयोग में था लेकिन जब चीनी, अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि लोग भारत आने लगे तो यहाँ की संस्कृति उन्हें आकर्षित करने लगी और साहित्य में अनुवाद का दौर तेजी से शुरु हो गया।

आधुनिक युग में समूची विश्व की जनता में समकालीन साहित्य को पढने की रुचि, अन्य भाषाओं के साहित्य के प्रति जिज्ञासा का भाव जागृत हो रहा है। विश्व मानव के विश्व साहित्य की कल्पना साकार होने का स्वप्न मनुष्य देख रहा है। इसी कारण आज विश्व भर में साहित्यिक अनुवाद की माँग बढ़ रही है। हम लोग अनुवाद के सामान्यतया दो आयाम देख सकते हैं- 1. साहित्यिक अनुवाद, 2. साहित्येतर अनुवाद। कई विद्वानों की यह धारणा है कि तकनीकी और वैज्ञानिक अनुवाद की तुलना में साहित्यिक अनुवाद सरल होता है, पर वास्तविकता इसके विपरीत है। तकनीकी और वैज्ञानिक सामग्री का अनुवाद पर्याय शब्दों की जानकारी में सरल हो जाता है। पर किसी साहित्यिक रचना के अनुवाद के समय विशेषतः कविता का अनुवाद करते समय अनुवाद की भाषा के पर्यायों का ज्ञान काफ़ी नहीं है। क्योंकि कविता के अनुवाद में एक शब्द के स्थान पर उसके पर्याय

को रखने इच्छित भाव प्रकट नहीं होगा, क्योंकि कविता की भाषा रूढ़ नहीं, लाक्षणिक व ध्वन्यात्मक होती है।

कविता के सम्पृक्त रूप को अनूदित करना कई कारणों से मुश्किल होता है। कविता में कुछ जोड़ना-घटाना यानी कविता के कवितापन को घटाना ही सिद्ध होता है। छंद का बंधन अन्य समस्या को उभारता है। रचना में, प्रयुक्त मिथकों, प्रतीकों का अनुवाद एक समस्या होती है। इसलिए कविता का अनुवाद कड़ी-दर-कड़ी, प्रायः असंभव माना जाता है। परंतु लक्ष्य भाषा की संस्कृति में कविता ढाली जा सकता है। कई बार गद्य की अपेक्षा कविता का अनुवाद सरल भी होता है। वैसे समस्त रचनात्मक साहित्य के बारे में कहा जा सकता है, परंतु खासकर कविता के संदर्भ में यह बात लागू होती है। अनुवाद, दूसरे से अपनी पीठ खुजलवाने जैसा है, पीठ खुजलाई तो हो जाती है परंतु वह संतोष नहीं होता जो खुद खुजलाने में होता है। इस सिलसिले में अनुवाद को परोपजीवी कहने की बात पर थोड़ा गौर करेंगे। अनुवादक को मूल लेखक की मनोभूमि पर उतरकर समवृत्ति होना पड़ता है, मूल कथ्य को अवांछित रखते हुए दूसरी भाषा में ढालना पड़ता है, मूल के सम्यक प्रभाव को बरकरार रखना पड़ता है, सांस्कृतिक, सामाजिक आदि समस्याओं को पार कर मूल रचना के प्रति निष्ठा का निर्वाह करना होता है, अपने पाठकों के साथ निष्ठा रखनी होती है, उन्हें कुछ नवीन देना होता है, वाक्यों, प्रसंगों, शब्दों के अनुवाद के लिए बौद्धिक-मानसिक संघर्ष से गुजरना पड़ता है, मौलिक लेखन की तुलना में अधिक समय अनुवाद में लगाना पड़ता है, दोनों भाषाओं, समस्याओं, संस्कृतियों और भाषायी कौशलों का ज्ञाता होना पड़ता है, तब कहीं जाकर सफल अनुवादक बनना नसीब होता है। ऐसी स्थिति में अनुवाद को परोपजीवी कहना उचित नहीं होगा।

जिस प्रकार किसी देश की वैज्ञानिक उपलब्धि से अन्य देशवासी भी लाभान्वित होते हैं, उसी प्रकार किसी भाषा की साहित्यिक उपलब्धि से अन्य भाषा-भाषी को भी परिचित होने देना चाहते हैं। इसलिए अनुवाद सहायक रूप में एक सेतु के रूप में काम

करता है। विश्व के किसी भी कोने में प्रकाशित कृति अथवा घटित घटना से अनुवाद के माध्यम से सभी परिचित हो जाते हैं। अतः कहना न होगा कि विश्व-संस्कृति के भौतिक, भावना-परक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पहलुओं के विकास में आज अनुवाद एक समन्वयकारी अथवा संयोजनकारी प्रक्रिया के रूप में काम कर रहा है।

भारत एक बहुभाषी देश है और भारत की विभिन्न भाषाएँ देश की भाषिक समृद्धि की प्रतीक हैं और इन भाषाओं में रचे जा रहे साहित्य में संवाद अनुवाद के सेतु से ही संभव है। ऐसा नहीं है कि भारतीय भाषाओं में रचे जा रहे साहित्य का अनुवाद के माध्यम से परस्पर आदान-प्रदान नहीं हो रहा है। अनेकानेक भारतीय कृतियाँ भारतीय भाषाओं में अनूदित हो भारतीय साहित्य में अपनी ज्योत्सना विकिरण कर रही हैं, किंतु भारतीय भाषाओं की समृद्धि, विशाल फलक और विविध आयामों पर दृष्टिपात करें तो यह बात स्पष्ट हुए बिना नहीं रहती कि अभी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना शेष है।

भारतीय संस्कृति भाषाओं के आयने में तथा जीवन में किस प्रकार प्रतिबिंबित होती है ? यह कहना गलत न होगा कि आज तक हम भारतीय संस्कृति को विभिन्नता में एकता के माध्यम से परिभाषित करने का प्रयास करते रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हम विभिन्नता पर अधिक बल दे रहे हैं और उस पर एकता का मुलमा चढ़ा रहे हैं और फिर उसके किए क्षमा प्रार्थी होने की भावना का रूख़ अपना रहे हैं। जल चाहे, कुंभ में हो, नदी, तालाब या फिर गागर में हो, या फिर सागर में, उसकी मूल प्रवृत्ति तो शीतलता प्रदान करना है। भावों और विचारों की अभिव्यक्ति चाहे मलयालम में हो या बांगला में या गुज़राती, मराठी या फिर हिंदी में, मानव भावनाएँ तो एक समान होती है। भाषा की दीवार पार करते हुए प्रत्येक मानव रचनात्मक कृति में स्वयं को पाने लगता है।

भारतीय संस्कृति का गो-मुख गंगा-सा पावन उद्गम स्त्रोत विश्व की सर्वाधिक प्राचीनतम संस्कृत भाषा में प्राचीनतम समृद्ध संस्कृत साहित्य में सन्निहित है जो विश्व में किसी काल खंड में विस्तार या लगभग सभी संस्कृतियों का आधार बना। शायद यही कारण है कि विश्व संस्कृतियों में गुम्फित सर्वजनीन मानव मूल्यों का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि भारत समरसता, सामंजस्य एवं सहिष्णुता का संगम स्थल होने के कारण उसकी संस्कृति एवं साहित्य का मूल स्वर अनिवार्यता एक है। इसका एक कारण यह भी है कि भारत की समग्र संस्कृति का मूल उद्गम स्त्रोत एक है, आधार एक है, विस्तार एक है और उसका रंगा-बिरंगा आवरण भी एक है। संस्कृति की यह एकता हमें अपने अतीत से जोड़ती है, वर्तमान से जोड़ती है और भविष्य से जोड़ती है। इसलिए हमारा ध्येय यही होना चाहिए कि हम भारतीय संस्कृति के मूल स्वर को उद्घाटित करें और उसमें निमज्जित हों और विविधता का राग कम अलापें।

भारत की विभिन्न भाषाएँ हमारी राष्ट्रीय एकता के विनाश का नहीं, विकास का प्रतीक हैं। आज ज़रूरत है तो केवल इस बात की कि भारत में विभिन्न भाषाओं में रचित एवं रची जा रही साहित्यिक कृतियाँ देश में सभी को उपलब्ध हों। भाषाओं के अपरिचय के कुहासे में भारतीय साहित्य में प्रतिपादित समरसता, सामंजस्य एवं सहिष्णुता के अमूल्य मानव मूल्यों की महत्ता सभी तक उद्घाटित हो हर भारतीय के जीवन का अंग बने। संवादहीनता की स्थिति कहीं भी कभी सुखद नहीं होती, साहित्य में तो बिल्कुल नहीं। इसलिए भारतीय भाषाओं में रचित एवं रचे जा रहे साहित्य को परस्पर अनुवाद के माध्यम से समस्त भारतीयों तक पहुँचाने का आज दायित्व एवं चुनौति हमारे सामने हैं। भारतीय साहित्य की विभिन्न भाषाओं की कृतियों की अनुवाद के माध्यम से राष्ट्रीय स्तर पर पहचान बनती है और लेखक भी पूरे देश में प्रसिद्ध पा जाता है। बंगला, तमिल, मलयालम, तेलुगु आदि भाषाओं में रचित कृतियाँ हिंदि में अनूदित हो देश के कोने-कोने तक पहुँच रही है। रवींद्रनाथ टैगोर, विमल मिश्र, शरत चंद्र, महाश्वेता देवी तथा अन्य

बंगाली लेखकों की कृतियाँ हिंदी भाषा में अनूदित हो इतनी प्रसिद्ध हो गई है कि आम पाठक यही समझने लगता है कि उन कृतियों का लेखन हिंदी में ही हुआ है। अनुवाद पुनर्लेखन तो है ही, इस संदर्भ में भी अनुवाद का महत्त्व स्वतः स्पष्ट है।

1.3. अनुवाद और साहित्य का संबंध

'मिखाइल बाख्तिन' का मानना था कि भाषा ही समाज है। इस दृष्टि से समाज और भाषा एक ही है। समाज का बोध और समस्त सामाजिक गतिविधियाँ भाषा में प्रकट होती हैं। भाषा का साहित्य से और साहित्य का अनुवाद से भी गहरा नाता है। मेक्सिको के कवि, चिंतक 'आक्तेवियो पाज' ने साहित्य और अनुवाद को, भाषा के पर्याय के रूप में देखा है। वे कहते हैं कि- जिस तरह साहित्य, भाषा का परिचालक है, उसी तरह अनुवाद भी मुख्य रूप से साहित्य का परिचालक है। उपर्युक्त कथन से हमें यह ज्ञात होता है कि साहित्य भाषा का विशिष्ट कर्म है। हमारा उपलब्ध साहित्य तीन हज़ार वर्ष पुराना है। अलग-अलग युगों और क्षेत्रों में लिखा साहित्य अनुवाद के माध्यम से वर्तमान काल में प्रकट होता है। आज अनुवाद बहुत ही विस्तृत कार्य क्षेत्र बन गया है और साहित्य के विकास में तो आज यह एक विशिष्ट भूमिका निभा रहा है।

बीसवीं शती के अंत तक का यह साहित्यिक विकास दुनिया के कोने-कोने की भाषाओं में अनुवाद के माध्यम से पहुँचा है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि साहित्य के विकास में अनुवाद का विशिष्ट योगदान है। आधुनिक हिंदी गद्य का आरंभ अनुवादों के जरिए भी हुआ। एक नयी भाषा को विकसित होने में दूसरी भाषा का सहारा लेना आश्चर्यजनक नहीं है और इस तरह एक भाषा के साहित्य में वृद्धि के लिए दूसरी भाषा के साहित्य का सहयोग भी लेना पड़ता है। आश्चर्य की बात यह भी नहीं है कि कई साहित्यों के इतिहासों में स्वतंत्र साहित्य रचना का युग प्रायः अनुवाद युग के

बाद ही आता है। अनुवादों के जरिए पाठकों के लिए ज्ञान के लिए ज्ञान के नये-नये वातायन खुलते हैं।

विश्व के भिन्न प्रदेशों के पाठकों के बीच अंततः संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में अनुवाद की दार्शनिक एवं व्यावहारिक भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। अनुवाद मानव की मूलभूत एकता का, व्यक्ति चेतना एवं विश्वचेतना का प्रत्यक्ष प्रमाण है। विश्वसाहित्य के विकास में अनुवाद का योगदान अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। आज विश्व भर में साहित्य की विभिन्न विधाओं का जिस रफ्तार से विकास हो रहा है, वह अनुवाद के माध्यम से संभव हो पाया है। अनुवाद विचारों के आदान-प्रदान का सशक्त माध्यम है। उदाहरण के लिए बाइबल तथा पाश्चात्य साहित्य के भारतीय साहित्य के यूरोपीय भाषाओं में जो अनुवाद हुए हैं, उनसे पूर्व – पश्चिम की भौगोलिक दूरियाँ मिटी हैं।

रोम वासियों ने संपूर्ण यवन संस्कृति को अनुवाद के माध्यम से अपनाया। अरबों ने तो भारत के गणितशास्त्र, आयुर्वेद शास्त्र, खगोल विज्ञान के ग्रंथों का अनुवाद करके विश्व साहित्य के विकास का पथप्रदर्शन किया। चरक, सुश्रुत आदि के आयुर्वेद ग्रंथों एवं आर्यभट्ट, वराहमिहिर आदि के खगोल-विज्ञान के ग्रंथों का अनुवाद किया। आधुनिक भारत ने सांस्कृतिक नवोत्थान में भी पश्चिमी साहित्य के अनुवादों का बड़ा हाथ रहा है।

भूमण्डलीकरण के इस नए दौर में किसी भी देश की जनता को समझने के लिए उस देश के साहित्य को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है। आधुनिक यूरोप में जो भारतीय साहित्य की रचनाएँ अत्यंत लोकप्रिय हुई, उनमें 'शाकुंतलम्' का उल्लेखनीय स्थान है। टैगोर की 'गीतांजली' ने विश्व को भारतीय साहित्य की ओर खींचा। भारत का सबसे बड़ा महत्वपूर्ण कथाग्रंथ 'पंचतंत्र', विश्व कथा साहित्य के निर्माण के लिए अत्यंत उत्प्रेरक और सहायक रहा।

यूनेस्को तथा अन्य संस्थाओं और व्यक्तियों द्वारा कराए गए अनुवादों में प्रेमचंद के 'गोदान', प्रसाद की 'कामायनी', रेणु के 'मैला आँचल', महाश्वेता देवी के उपन्यास, विभूतिभूषण के 'पाथेर पांचाली', आदि ग्रंथों ने वर्तमान भारत के साहित्य में दिलचस्पी बढ़ाई है। मनुष्य की नयी चेतना के कारण एशिया, अफ्रीका एवं लैतीनी अमेरिका के साहित्य का अनुवाद अधिक महत्वपूर्ण बनता जा रहा है। इस कारण से पूरे विश्व में आज साहित्यिक अनुवाद की माँग बढ़ती जा रही है। भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में तो अनुवाद की उपयोगिता स्वयंसिद्ध है।

किसी भी भाषा में लिखित साहित्यिक कृतियों का दूसरी भाषा में अनुवाद वस्तुतः एक कठिन कार्य है। इसके लिए दोनों संबद्ध भाषाओं का मात्र सम्यक ज्ञान ही आवश्यक नहीं है वरन् दोनों भाषाओं की प्रकृति, मुहावरें, कथन-वैशिष्ट्य एवं आंतरिक संरचना का ज्ञान भी आवश्यक है। साथ ही दोनों भाषाओं के प्रयोक्ताओं की सभ्यता, संस्कृति, रीति-रिवाज, सोच-विचार और शैक्षणिक स्तर की जानकारी भी अपेक्षित है। यदि किसी भाषा की साहित्येतर पुस्तकों जैसे भूगोल, रसायन शास्त्र आदि का अनुवाद करना है तो इसके लिए मात्र दोनों-भाषाओं का सम्यक ज्ञान तथा विषय-संबंधी पारिभाषिक शब्दों की अच्छी जानकारी से काम चल जाएगा। लेकिन साहित्यिक कृतियों का मामला कुछ और ही है। कविता, नाटक, उपन्यास आदि का अनुवाद करते समय यदि अनुवादक भाषा से अनवगत है तो अर्थ का अनर्थ कर बैठेगा। साहित्येतर रचनाओं में सारी बातें तार्किक ढंग से कही जाती हैं। पर साहित्य में भावना की प्रधानता है जिसमें रचना प्रेम, घृणा, रीति-रिवाज, संस्कार, चिंतन, सोच, सभ्यता, शिक्षा आदि अनेक चीज़ों से जुड़ी रहती है। इसलिए इसके अनुवाद के लिए उस जाति, वर्ग, समाज, भाषा आदि की विशिष्टता की भी गहरी जानकारी आवश्यक है। इन सब जानकारियों के बिना अनुवाद में वह प्रभाविष्णुता तथा सम्प्रेषणीयता नहीं आ सकती जो मूल रचना में निहित

होती है। इसलिए साधारण "अनुवादक को कसाई कहा है, जो जीवंत रचना को निष्प्राण कर देता है।"[7]

अनुवाद के संबंध में 'श्याम सुंदर दास' ने ठीक ही कहा था कि मौलिक रचना की सारी विशेषताओं को अनुवादित रचना में लाना असंभव है। इस बात को और स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा-"जिस प्रकार इत्र को एक शीशी से दूसरी शीशी में ढाला जाए तो उसका कुछ न कुछ अंश पहली शीशी में ही रह जाता है।" मूल रचना का सिर्फ सार अनुवादित रचना में लाने को सही अर्थों में अनुवाद नहीं कहा जा सकता फिर भी यह विचार व्यावहारिक तौर पर कुछ अंशों में ही सही लगता है। किसी भी भाषा के साहित्य को तब तक ठीक-ठीक समझा नहीं जा सकता, जब तक उस भाषा के साहित्य में प्रयुक्त व्यक्ति और समाज की सही जानकारी न हो।

अनुवाद के मोटे तौर पर तीन प्रकार बताए जाते रहे हैं। शब्दानुवाद, भावानुवाद तथा छायानुवाद। सच तो यह है कि अच्छे अनुवाद के लिए अनुवादक इनसे अलग भी कई प्रकार की युक्तियाँ अपनाता है। यदि कोई अनुवादक जो हिंदी के मुहावरों से अपरिचित हो तो वह "मेरा सिर चकरा रहा है" और "दिल बाग-बाग हो गया" के लिए अनुवाद इस हास्यास्पद तरीके से कर सकता है-

"My head is rotating"

"My heart became garden-garden"

इसी तरह एक मुहावरे को लें, "लोग हँसते-हँसते लोट पोट हो गए" कोई उसका शब्दानुवाद इस तरह से कर सकता है-"People rolled (fell) on the ground with

[7] अनुवाद के विविध आयाम, डॉ.किशोरी लाल व्यास नीलकण्ठ, पृ.सं. 55

laughter" तो कोई और अनुवादक संदर्भानुसार "People burst into laughter" भी कर सकता है।

हम लोग अनुवाद के सामान्यतः दो आयाम देख सकते हैं- एक साहित्यिक अनुवाद व दूसरा साहित्येतर अनुवाद। साहित्येतर अनुवादों में तकनीकी और वैज्ञानिक सामग्री का अनुवाद होता है उपयुक्त पारिभाषिक शब्दों की जानकारी से सरल हो जाता है। पर साहित्यिक अनुवाद, विशेषतः कविता का अनुवाद करते वक्त अनुवाद की भाषा के शब्दों या पर्यायों का ज्ञान ही काफी नहीं क्योंकि कविता के अनुवाद में एक शब्द के स्थान पर उसके किसी पर्याय को रखने से इच्छित भाव प्रकट नहीं होगा। क्योंकि कविता की भाषा रूढ़ नहीं, लाक्षणिक व ध्वन्यात्मक होती है। अनुवाद प्रक्रिया में भाषा अपने कोशगत अर्थ के स्तर पर सार्थक नहीं होती, क्योंकि साहित्य एक व्यापक सांस्कृतिक प्रक्रिया है। अनुवादक को मूल भाषा के सांस्कृतिक आयामों की जानकरी होनी चाहिए। उदाहरण के लिए 'अतिथि' शब्द को लें प्राचीन भारतीय साहित्य में अतिथि को 'पूजनीय' माना गया है। तैत्तरेय उपनिषद में "अतिथि देव" कहकर उसे मानवीय माना गया है। पुराणों के अनुसार 'जो निरंतर चलता है, ठहरता नहीं वह अतिथि है'। जिसके घर अतिथि निराश होकर लौटता है वह उस घर को पाप देकर और उसके पुण्य लेकर चला जाता है।

उसी प्रकार 'चंदन' को लें, साहित्य की पर्याप्त उपमाएँ उससे अलंकृत हैं। चंदन घिसकर भगवान को अर्पित करने की पद्धति इतनी लोकप्रिय है कि भक्त स्वयं को भगवान के प्रति समर्पित होने की उपमा चंदन और पानी से देते हैं। भक्तकवि रैदास ने लिखा है -

"प्रभुजी तुम चंदन हम पानी"[8]

अगर "शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्" है तो हमारा सारा भाषा-व्यवहार काव्य बन जाता है। परंतु हम सारे वाक्-व्यापार को साहित्य नहीं कहते। विशेष उद्देश्यों से प्रेरित होकर जब शब्दार्थों में सौंदर्यात्मक अभिव्यक्ति होती है तो वह साहित्य होता है। साहित्य का अभिप्राय रचनात्मक लेखन से है जिसमें उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य, निबंध, रेखाचित्र, यात्रावृत्तांत, रिपोर्ताज, आत्मकथा, जीवनी आदि का समावेश किया जाता है।

हमारे राष्ट्रीय नवजागरण की पृष्ठभूमि में अनुवाद ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। भारतेंदु तथा उस युग के लेखक अनुवाद कार्य के महत्त्व को अच्छी तरह समझते थे। इस संदर्भ में डॉ.रीतारानी पालीवाल का कहना है "नवजागरण काल में अनुवाद के सामाजिक महत्त्व को रेखांकित करने वाले इस दृष्टिकोण से एक खास तरह का परिवेश बना और अनुवाद की एक परम्परा-सी चल पड़ी जो लंबे समय तक जारी रही। इससे हिंदी गद्य के ढाँचे में तो परिवर्तन हुआ ही, उसकी शैली और भाव-भंगिमा को भी नयी दिशाएँ मिलीं। साथ ही जहाँ एक ओर नयी विधा-उपन्यास, कहानी, निबंध आदि का सूत्रपात हुआ, वहीं दूसरी ओर वैचारिक धरातल पर विशिष्ट ढंग का बदलाव भी आया। सोच का कठमुल्लापन टूटा। भाषा ने पश्चिम के नये विचारों और आंदोलनों से जुड़कर नयी अभिव्यक्ति-क्षमता विकसित की.....स्वयं भारतेंदु मण्डली के विभिन्न लेखकों द्वारा संस्कृत, बंगला और अंग्रेज़ी नाटकों तथा उपन्यासों के प्रचुर मात्रा में अनुवादों से

[8] सांस्कृतिक प्रतीक कोश, शोभानाथ पाठक, पृ.सं. 110

अनुवादकों ने परंपरा की शुरूआत की, उसकी परिणति यह हुई कि लंबे समय तक हिंदी के अधिकांश रचनाकार अच्छे अनुवादक भी हुए।"[9]

भारतेंदु अनुवाद को महत्वपूर्ण कार्य समझते हैं। वे अन्य भाषाओं के श्रेष्ट ग्रंथों को हिंदी में अनूदित करने का आह्वान करते हुए कहते हैं :

"अंगरेजी अरू फ़रसी अरबी संस्कृत ढेर।
खुले खज़ाने तिनहि क्यों लूटन लागहू देर।
सबको सार निकालके पुस्तक रचहु बनाई।
छोटी बड़ी अनेक विध विविध विषय की लाइ।।"[10]

इस तरह अगर हम उपर्युक्त बातों पर गौर करें तो यह स्वीकारने में देरी न लगेगी कि अनुवाद ने न केवल सेतु का काम किया बल्कि स्वाधीनता या स्वतंत्रता संग्राम में भी परोक्ष रूप से महत्वपूर्ण योगदान दिया।

अनुवाद को अगर हम साहित्य का परिवर्तन माने तो हमें यह भी मानना होगा कि अनुवाद भी गतिशील है, कालक्रमिक है। पहले अनुवाद केवल अनुवाद करने तक सीमित था यानी कि अनुवाद का मुख्य उद्देश्य मोटे तौर पर महत्वपूर्ण पाठ का अनुवाद था। पर आजकल अनुवाद राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि अनेक दृष्टिकोणों को लेकर भी किया जाता है।

साहित्य का अनुवाद से गहरा ताल्लुक है क्योंकि इसके जरिए कई विदेशी अभिव्यक्तियाँ और शब्द भाषा में जुड़ जाते हैं जिससे भाषा की अभिवृद्धि ही होती है। इसके उदाहरण के रूप में अंग्रेज़ी भाषा को लिया जा सकता है जिसमें Spanish,

[9]अनुवाद चिंतन की परंपरा, डॉ.सुरेश सिंहल, पृ.सं. 14

[10] अनुवाद-1995, अंक-84

Portuguese, French, Italian आदि के शब्द मौज़ूद हैं। आज अंग्रेज़ी अगर दुनिया के बड़े हिस्से में बोली और समझी जाती है, तो अंग्रेज़ी साम्राज्य-विस्तार के अलावा इसका यह भी कारण है कि अंग्रेज़ी ने हर भाषा के शब्दों को अपना लिया है, अनुवाद के जरिए। साहित्य, अनुवाद के बगैर वृद्धि नहीं कर सकता, आज-कल के ज़माने में अच्छे लेखकों से ज्यादा अच्छे अनुवादकों की ज़रूरत है, क्योंकि अच्छा अनुवादक भूमि से सोना उगाने तक की क्षमता रखता है। यह हम सब जानते हैं कि शेक्स्पीयर ने इंगलैंड में रचनाओं को रचा, कालिदास ने भारत में संस्कृत में रचनाएँ रचीं, पर इन दोनों को जानने के लिए अनुवाद अति महत्त्वपूर्ण है।

साहित्य के संदर्भ में Allen Tate ने कहा "Translation is forever impossible and forever necessary"[11] साहित्य के संदर्भ में अनुवाद मुश्किल हो सकता है, पर असाध्य नहीं। साहित्य एक संस्कृति का द्योतक है, और एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति में डालना कठिन काम है, पर अनुवादक अगर दोनों संस्कृतियों से परिचित है तो काम आसान हो जाता है। साहित्य रचनात्मकता से जुड़ी हुई चीज़ है। भाषा व्यवहार से इसके भाषिक स्वरूप को समझ लेना बेहतर है। इस मौके पर यह विचार सहायक हो सकता है कि साहित्य भाषा मात्र में नहीं होता बल्कि भाषा का भी होता है। भाषा जिस अर्थ को सूचित करती है उसकी सभ्यता, संस्कृति के साथ होने वाली प्रतिबद्धता बहुत महत्व की बात है। साहित्य की भाषा चूंकि एक सामाजिक-सांस्कृतिक वस्तु है, अतः हर रचना में साहित्य रचना के तत्व के अनुवाद के साथ-साथ सामाजिक तत्वों एवं संस्कृति का भी अनुवाद करना पड़ता है।

---

11 "Virtual Article Reason" in the Art of Translation (Tutun Mukerjee) P.170 (Translation from Periphery to Centre stage)

रचनात्मक साहित्य में कविता एक मुख्य विधा है। कविता के अनुवाद को लेकर विद्वानों में बहुत मतभेद होता रहा है। विद्वानों की धारणा है कि कविता का अनुवाद असंभव है। कविता के अनुवाद को केंद्र में रखकर विद्वानों ने अलग-अलग मत प्रस्तुत किये हैं। कविता में शब्द उतने ही महत्वपूर्ण होते हैं जितने भाव। सिड्नी का इस संदर्भ में कहना है कि भावों का तो अनुवाद संभव है किंतु शब्द-सौंदर्य का नहीं- “Ideas can be translated but not the words and their associations”[12]

इस कथन से यह स्पष्ट है कि कविता का अनुवाद करना कठिन है। पर देखा जाए तो यह असंभव भी नहीं है क्योंकि विश्व में आज तक लाखों कविताओं का अनुवाद हो चुका है और अब भी हो रहा है। कविता अगर एक वरदान है तो, काव्यानुवाद भी। इसलिए हुम्बोल्टन का मानना है कि “अनुवाद का प्रयत्न ही वृथा है।” यह बात अलग है कि कविता का अनूदित रूप कभी-कभी मूल से हट जाता है, ऐसा इसलिए भी हो सकता है क्योंकि कविता को ग्रहण करने वाला पाठक या अनुवादक अपनी दृष्टि से कविता को पढ़ता है, जिससे शैली एवं अभिव्यक्ति में भिन्नता आ जाती है।

कविता के अनुवाद में अलंकारों के अनुवादों की समस्या अलग है। स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों में कभी-कभी एक उपमान होते हैं, किन्तु दोनों भाषाओं में व्यक्त विचार या भाव असमान होते हैं। जैसे ‘उल्लू’ अंग्रेजी में बुद्धिमान का द्योतक है जबकि हिंदी में मूर्खता का।

अतः सफल काव्यानुवाद बहुत ही कठिन कार्य है, किंतु असंभव नहीं। कवि जब कविता को रचता है तो स्वयं को पूर्ण रूप से विषय में केंद्रित कर अपनी संवेदनाओं, अनुभूतियों और विचारों को प्रस्तुत करता है। जब अनुवादक उस रचना का अनुवाद

[12] काव्यानुवाद की समस्याएँ, डॉ.भोलानाथ तिवारी, पृ.सं. 50

करता है तो अक्सर असफल हो जाता है। शुद्धतावादियों की नज़र से देखा जाए तो कविता एक अनुभूति है और वास्तविक अनुभूति का कोई अनुवाद नहीं कर सकता। इसलिए उनके अनुसार अनुवाद के द्वारा हमें कविता का एक बिंब मात्र मिल सकता है पर असल कविता नहीं। या यूँ कहें कि कविता एक फूल के समान है जिसको अनुवाद में पकड़ा या महसूस किया जा सकता है। पर उसकी असली खुशबू को नहीं पाया जा सकता। शुद्धतावादियों की यह धारणा है कि कविता उस फूल के समान है जो पेड़ पर ही फलता-फूलता अच्छा लगता है पर जैसे ही उसे तोड़ा या अनूदित किया गया वह उसी क्षण मुरझाकर नीरस और क्षीण हो जाता है।

कविता इतनी महीन वस्तु होती है कि जब हम इसे स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनूदित करने की कोशिश करते हैं तो इसका कुछ अंश इस प्रक्रिया के दौरान छूट जाता है। यह अनुवाद की मुख्यतः काव्यानुवाद की स्वाभाविक विवशता है। इस विवशता को शैली (Shelley) ने इस तरह परिभाषित किया है- "हर काव्य मूलतः पुष्प-सा ही प्राकृतिक समग्रता से ही समन्वित है। पुष्प के स्वाभाविक सौंदर्य का अनुकूलन नहीं किया जा सकता। वैसे समग्र काव्य न तो प्रत्यारोपण (Re-plantation) हो सकता है और न रचनान्तरण (Transcription) !"[13]

1.4. कविता और अनुवाद

कविता के प्रसंग में 'अर्थ' से क्या तात्पर्य हो सकता है ? क्या कविता वहीं है जो कि उसकी अन्तर्वस्तु ? किसी कविता में 'अभिव्यक्ति विचार' को एक भाषा से दूसरी में

[13] कामायनी और आँसू के संदर्भ में काव्यानुवाद, जय किशन साहनी, पृ.सं. 15

कर देने मात्र से अनुवादक का कार्य पूरा हो जाता है ? इसी प्रकार के अनेक अन्य प्रश्न भी पैदा होते हैं, जैसे- 'अभिव्यक्ति करने' से क्या तात्पर्य है ? स्वयं विचार उन शब्दों से जिनमें कि वे पिरोये गये हैं, कहाँ तक पृथक किये जा सकते हैं ? आदि बहुत से प्रश्न कविता के संबंध में समय-समय पर उठाए जाते रहे हैं।

कविता में सन्दर्भ (कवि का देशकाल, परिस्थितियाँ, व्यक्तित्व) का काफी महत्व होता है। कवि एक वक्ता है जो अपने समय और परिवेश का ध्यान से परीक्षण-विश्लेषण कर यथार्थ को पाठकों तक पहुँचाने का कार्य करता है। ऐसे में एक कविता के अनुवादक के लिए- सामान्य अनुवादकों के लिए जो योग्यतायें चाहिए उसके अतिरिक्त भी कुछ विशिष्ट गुणों का होना आवश्यक होगा। अनुवादक को कितनी छूट दी जा सकती है इस बात का तथा उसके अनूदित पाठ के मूल्यांकन के मानदण्डों का निर्धारण करना बहुत ही कठिन कार्य है।

कविता की व्याख्या को अनुवाद में बाँध पाना मुश्किल है। कविता जहाँ भावों, विचारों आदि का संक्षिप्त रूप है वहीं उपन्यास, नाटक, कहानी विधायें उनको ज्यादा ठोस और व्याख्यायित करके प्रस्तुत करने का प्रयास करती है। कविता स्वतंत्र होती है, उसकी यही स्वतंत्रता अनुवाद व व्याख्या में समस्या उत्पन्न करती है। कविता में वाक्य पूर्ण नहीं होते हैं, उनमें निश्चिततावाची शब्द अधिकतर लुप्त ही रहता है। कविता को लेकर एक ओर तर्क यह दिया जाता है कि उसमें अधिक-से-अधिक पूर्वपद (Preposition) समुच्चायी बोधक तत्त्व लुप्त होते हैं। भाषा का कम-से-कम प्रयोग कर बड़ी-से-बड़ी भावनाओं, अनुभूतियों को एक इंच भर शब्द में पिरोने का काम किया जाता है। यह स्थिति अनुवादक के लिए समस्या उत्पन्न करती है। कविता को लेकर एक और प्रश्न उठता है कि जब सभी भाषाओं में उसकी निजी काव्यगत संरचनात्मक

विशेषताएँ हैं तो स्रोत भाषा की संरचना को लक्ष्य भाषा में लाने का प्रयास क्यों किया जाए ? काव्यानुवाद में कवितत्त्व कितना आ पाता है ? कविता की कई व्याख्या, अर्थ किए जा सकते हैं। वह स्वतंत्र है। फिर उसके अनुवाद में कौन से पक्ष को लिया जाये ? कोई अनुवादक कविता के उतने गुणों को महत्त्व देता है तो कोई उसके अन्तर में जाने का प्रयास करता है। इन दोनों में से किसको कसौटी माना जाए ? कविता में किसी शब्द के अर्थ की परिधि उससे सम्पृक्त तत्त्वों, उनके प्रयोगों को ही देखना होगा ?

कविता के संदर्भ में कहा जाता है कि जिस प्रकार इत्र को दूसरी बोतल में डालने पर थोड़ा गिरना ही है और यदि हम उसे खुले भगोने में डाले तो उसकी सुवास उडने का डर रहता ही है उसी तरह काव्यानुवाद में स्रोत भाषा की कविता के सारे तत्त्वों, विशेषताओं को ला पाने की माँग करना कहाँ तक सम्भव है ? कविता में स्पष्ट और ठोस अर्थ नहीं होते हैं। वास्तव में कविता में ऐसा क्या है जो हमें इतना आकर्षित करता है ? कविता में अर्थ महत्त्वपूर्ण है या शब्द या लय ? कविता में वस्तु महत्त्वपूर्ण है या शैली ? ऐसे प्रश्नों पर विचार करने के बावजूद कविता में ऐसा कुछ होता है जो सदैव छूट जाता है, जिसको खोजने की आवश्यकता बनी रहती है।

कविता अन्य विधाओं की अपेक्षा मनुष्य की सहज प्रवृत्ति के अत्यधिक निकट होती है, इसलिए तो महाकाव्यों में बच्चों जैसी चंचलता की बात कहीं गई है अर्थात् भाषिक रूप से बहुत सरल होती है। फिर वे कौन-से-तत्त्व हैं जो उसे इतना जठिल, दुरूह बना देते हैं ? इसको जानना होगा।

कविता का अनुवाद और किन-किन विधाओं में हो सकता है इस पर भी काफी विचार विद्वानों द्वारा कर चुकने के पश्चात् कुछ समाधान प्रस्तुत किए जाते रहे हैं।

कविता में सबसे पहले क्या आता है - भाव, कल्पनाशीलता, प्रस्तुतीकरण या उद्धेश्य ? आदि को लेकर भी अनुवादकों ने अपने तर्कों – सहित मत देने का प्रयास किया है। परन्तु इन सबमें से कौन-सा सटीक है कह पाना बहुत कठिन है। कविता में काव्यानुवाद को लेकर सजातीय और विजातीय की बात भी समय – समय पर उठाई गई है। परीक्षणों, विश्लेषणों से यह तथ्य सामने आया है कि सजातीय भाषाओं की सांस्कृतिक पृष्टभूमि प्राय मिलती-जुलती होने के चलते उसमें विजातीय भाषाओं की अपेक्षा अनुवाद में कम कठिनाईयाँ उत्पन्न होती हैं। इस तथ्य को कई सफल अनुवादकों द्वारा समय-समय पर प्रामाणित किया गया है।

जब किसी विशिष्ट सुगन्ध भर से ही उसके साथ जुड़ा सारा परिवेश सामने मूर्त रूप धारण कर लेता है तो फिर किसी भाषा के शब्द से जुड़ी उन सारी सम्पृक्तियों को एक अनुवादक कहाँ तक लक्ष्य भाषा में लाने में समर्थ होगा ? उसके मूल्यांकन, समीक्षा के क्या मानदण्ड होंगे, इसे देखना होगा।

कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि कविता को देखने के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं। ऐसे में काव्यानुवाद करने की भी कई दृष्टियाँ विकसित की जा सकती हैं। कविता में केवल एक रस ही नहीं है, बल्कि कविता बहुत से रसों का आस्वादन भिन्न-भिन्न स्तरों पर मनुष्य को कराती रहती है। कविता में भाव, संवेदनाएँ, अनुभूतियाँ, विचार आदि सब कुछ हैं, जिनसे प्राप्त स्तरों की मात्राएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। यह तो अनुवादक व पाठकों पर निर्भर करता है कि वह कितना रस ले पाने में सक्षम हैं। सोचने की बात यह है कि जब मूल कवि ही अपने अनुभूतिओं को उसके संपूर्ण संदर्भों के साथ भाषा में नहीं व्यक्त कर पाता है तो अनुवाद में सम्पूर्णता की बात करना कहाँ तक उचित

होगा ? भाषा की भी अपनी सीमा होती है जैसे कि वह बहुत-सी अनुभूतियों को व्यक्त करने में असमर्थ होते हैं।

1.5. कविता को लेकर दी जानेवाली परिभाषाएँ

'काव्य' प्रेमी लगभग दो हजार वर्षों से कविता की सटीक परिभाषा देने के प्रयास करते आ रहे हैं। कुछ लोगों के अनुसार "कविता को हम उसकी लय में पढ़, सुन कर ही समझ सकते हैं तथा जिस कविता में अपनी ओर आकर्षित करने की शक्ति तथा कालजयी तत्त्व होते हैं, वहीं वास्तविक कविता है।"[14] पर इस तरह की परिभाषा सब को संतुष्ट न कर पाई। जिसके परिणामस्वरूप और भी कई दृष्टिकोणों से कविता को लिखने का प्रयास किया गया।

'डब्ल्यू.एच.ऑडैन' ने "कविता को 'स्मरणीय कथन' कहा।"[15] 'मैथ्यू ऑर्नल्ड' के अनुसार कविता जीवन की आलोचना है।[16] 'विलियम वर्डसवर्थ' ने "कविता को 'निरंतर

[14] The Health Guide to literature (1984), David Bengman & Daniel Mark Epstein (पृ.सं. 419) के अनुसार- "It would enable us to know a real poem when we hear it, and help us understand the power & long life of great poetry."

[15] वही, पृ.सं. 419 पर उद्धृत

[16] वही, पृ.सं. 419 पर उद्धृत

रूप से प्रवाहमान तीव्र संवेदनाओं का सहज उच्छलन माना"[17] 'राबर्ट फ्रॉस्ट' ने "कविता को ऐसा वाक् घोषित किया, जो 'अनुवादनीय' है।"[18]

उपर्युक्त सभी कवि इस बात को स्वीकार करते हैं कि "कविता साहित्य की अन्य विधाओं जैसे गद्य, नाटक आदि से अलग अपना एक विशिष्ट अस्तित्व रखती हैं। कविता सच्चे संवेगों की भाषा है। मनुष्य-जीवन में प्रेम, दुख, खुशी आदि भावनाओं का अनुभव करता रहता है, और इसके साथ ही वह इन क्षेत्रों को व्यक्त करना भी चाहता है, परन्तु इन अनुभूतियों को व्यक्त करने में हमेशा शब्द उसका साथ नहीं देते हैं, ऐसे क्षणों में कविता ही ऐसा माध्यम बनकर मनुष्य के समक्ष खड़ी हो जाती है, जो उसकी इन अतिसूक्ष्म भावनाओं को सम्प्रेषित करने में सफल होती हैं।"[19]

कविता को संवेगों की भाषा कहने का तात्पर्य यह नहीं कि उसमें विचार होते ही नहीं हैं, बल्कि कवि विचारों तथा अस्तित्व से संबंधित दार्शनिक प्रश्नों की भी चर्चा किसी-न-किसी रूप में कविता के भीतर करता है। उदाहरण के लिए 'शेकस्पियर' ने 'हैमलेट' में 'होना' और 'न होना' जैसे अमूर्त प्रश्नों को लेकर विचार किया है। इसलिए तो यदि कवि अपनी संवेदनाओं और विचारों को समुचित शब्दों में सफलतापूर्वक सम्प्रेषित नहीं कर पाता, तो उसके द्वारा रचित कृति सही अर्थों में कविता नहीं कही जा सकती।

---

[17] वही, पृ.सं. वही "A Spontaneous overflow of powerful feelings recollected in Tranquility"

[18] वही पृ.सं. 420 'Poetry is what is left in Translation.'

[19] वही, पृ.सं. वही।

'एजरा पाउण्ड' ने कहा था कि "साहित्य समाचार है और अंततः समाचार ही रहता है।"[20] उनके अनुसार कविता अनन्तकाल तक ताजी रहती है। क्षण में जो सबसे महत्त्वपूर्ण होता है, उसे कवि अत्यन्त आत्मीयता और स्पष्टता से कविता में प्रस्तुत करता है। जैसे ही एक पारखी कवि अपने अनुभवों को कविता में रूपांतरित करने लगता है, वैसे ही अनुभव के अनुसार शब्द, लय आदि बनते जाते हैं।

कविता में प्रायः अन्य साहित्यिक विधाओं से अतिरिक्त खाली स्थान देखे जाते हैं, जिसके कारण कविता विशिष्ट बन सबका ध्यान आकर्षित करती है। 'जे. एस.मिल' ने वाग्मिता और कविता के अन्तर को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "जहाँ वाग्मिता को सुना जाता है वहीं कविता को प्रच्छन्न रूप से सुनना पड़ता है।"[21] 'हार्डर' के शब्दों में "हमारा सारा जीवन ही काव्यशास्त्र है हम केवल देखने नहीं बल्कि देखने की प्रक्रिया में बिम्बों की रचना करते हैं।"[22]

समाजशास्त्री 'इपोलाईत तैन' ने कविता की संरचना और उसके सामाजिक सरोकार पर विचार करते हुए लिखा है कि "कविता विविध आवेगों की अनायास पुकार है, यह अत्यधिक प्रभावपूर्ण आत्मा की एकांत अनावृत्ति हैं।"[23] कविता ऐसी रचना है जो जितनी पुरानी होती है उतनी ही नयी भी। 'कार्डवेल' ने कविता के स्त्रोत निर्दिष्ट करते

---

[20] वही, पृ.सं. वही। "To be or not to be, that is the questions आदि।"

[21] Poetry festival India, 1985, Ed: Shrikant Verma, P – 4. "Distinguishing between eloquence & poetry, John Stuart Mill wrote that eloquence is heard, but poetry is overheard."

[22] साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजर पाण्डेय पृ.सं.34

[23] वही

हुए लिखा था 'कविता मानवीय मस्तिष्क के आरंभिक सौंदर्य बोधात्मक व्यापारों में से एक हैं।'[24] काव्य (Poetry) और पद्य (Verse) का अंतर उपस्थित करते हुए 'महर्षि अरविंद' ने लिखा है कि 'कवि होने के लिए मनोवेगात्मक प्रत्ययशीलता, असाधारण भाषाधिकार और प्रेरणाशक्ति अर्थात् रचनात्मक ऊर्जा का होना आवश्यक है, अन्यथा वह केवल पद्यकार है।'[25]

'टी.एस.इलियट' के अनुसार 'कविता मनोभावों का उन्मोचन नहीं वरन् मनोभावों से पलायन हैं। यह व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं, व्यक्तित्व से पलायन है।'[26] 'थोरो' के अनुसार 'कविता पूर्ण सत्य को ध्वनित करती है, दर्शन उसके एक कण को अभिव्यक्त करता है।'[27] 'जॉर्ज पियर्स' की परिभाषा में "कविता सौंदर्य के प्रतिमान पर जीवन की आलोचना है।"[28] मार्क्सवादी चिंतकों ने कविता की व्युत्पत्ति और विकास को समाजशास्त्र, मनोविज्ञान और भाषाविज्ञान की समस्या से जोड़ते हुए कहा कि 'कविता के प्रादुर्भाव को जानने के लिए भाषा व मनुष्य के विकास की प्रक्रिया को जानना जरूरी है।'[29]

---

[24] Illusion & Reality (विभ्रम और यथार्थ), क्रिस्टोफर कॉर्डवेल, पृ,सं.56

[25] Letters of Sri Aurobindo: Third series (1949), p – 6.

[26] काव्य रचना प्रक्रिया, 1974, सं.डॉ.कुमार विमल, "काव्य – रचना – प्रक्रिया तथा शब्दानुबंध" – निशांत केतु पृ.सं. 227 पर आधृत।

[27] वही, पृ.सं.228 पर उद्धृत। "Poetry implies the whole truth, philosophy expresses of it."

[28] वही, पृ.सं.228 पर उद्धृत। "Poetry is a criticism of life in term of beauty."

[29] मार्क्सवाद और कविता (1985), अनुः रामनिहाल गुंजन।

कविता में जीवनानुवाद या अनुभूति से रूप का संबंध दूसरे साहित्य रूपों की तुलना में अधिक आत्मीय और कुछ जटिल होता है। बिम्ब, प्रतीक, संकेत, फैंटेसी आदि कविता के सिर्फ साधन ही नहीं होते, कई बार साधन और साध्य में अद्वैत या अभेद की स्थिति होती है। फिर लय, छन्द और संगीत की आंतरिक संरचना से भी भूमिका अधिक निर्णायक और महत्त्वपूर्ण होती है। यहाँ भाषिक संवेदनशीलता में सामाजिक संवेदनशीलता छिपी रहती हैं। इसी बात की ओर संकेत करते हुए 'अडोर्नो' ने लिखा है कि, "उदात्त प्रगति वे होते हैं, जिनमें कवि अपनी भाषा में खुद इसी बात को इस तरह विलीन कर देता है कि उसकी उपस्थिति का आभास नहीं होता और भाषा का अपना स्वर कविता से गूँजने लगता है।"[30] इसी प्रक्रिया में जब भाषा के स्तर पर कविता समाज से जुड़ती है तब कविता की भाषा केवल कवि की मानसिकता को ही व्यक्त नहीं करती, वह अपने समय और समाज की मानसिकता को भी व्यक्त करती हैं। ऐसी स्थिति में कवि की भाषा-चेतना उसके जीवन-बोध का पर्याय बन जाती है। तभी तो कवि त्रिलोचन ने कहा हैः

"भाषा की लहरों में जीवन की हलचल है
ध्वनि में क्रिया भरी है और क्रिया में बल है।"[31]

कविता के विशिष्ट स्वरूप, उसकी बनावट और कला की बारीकियों में उतर कर ही हम उसके पीछे छुपे ऐतिहासिक, सामाजिक सन्दर्भों को उभार सकते हैं। कविता की विषय-वस्तु कवि के दृष्टिकोण समाज के सन्दर्भ, घटनाओं के संकेत और कविता की विचारधारा की खोज रचना के सामाजिक परिवेश और प्रभाव का विवेचन करके ही

---

[30] साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, मैनेजर पाण्डेय।

[31] वही।

उसके विस्तृत परिप्रेक्ष्य को समझ सकते हैं। कविता को कल्पना की रचना कहा गया है। कविता साहित्य का निचोड़ है। यह ऐसी विधा हैं, जो मनुष्य के आदिम से लेकर अद्यतन यथार्थ का संवहन करती आयी है। उसकी इसी सामाजिक भूमिका को दृष्टि में रखकर 'क्रिस्टोफर कॉर्डवेल' लिखते हैं कि कविता मनुष्य का वह स्वेद है जो उसने प्रकृति से अपने निरन्तर संघर्ष के दौरान निष्पन्न किया है। "जीवन का यथार्थ जब कविता में प्रवेश करता है तो वह अधिक सूक्ष्म, सघन और संकेंद्रित रूप में होता है। कहीं प्लॉट का रूप ग्रहण करता है, कहीं बिम्ब बनता है, तो कहीं प्रतीक बनता है और कुछ नहीं तो भाषिक संरचना की शैली-विशेष में ही यथार्थ प्रवेश पा जाता है।"[32]

हमारे चारों ओर रोजमर्रा का एक जीवन है। इसी का अतिक्रमण करने की कोशिश कविता करती है। काव्यानुभूति अपने आप में एक तरह का अतिक्रमण है। कविता के जन्म में ही निषेध का तीर बिंधा हुआ है। कविता सिर्फ जन्म ही नहीं लेती वह कवि से अलग होकर एक सार्वजनिक अस्तित्व भी ग्रहण करती है। शून्य से, नितांत न कुछ से, कविता का जन्म होता है। 'शमशेर' का वक्तव्य है कि कविता में अपनी भावनाओं की सच्चाई खोजते हैं। 'शमशेर' ने कविता रचना की प्रक्रिया और प्रेरणा पर विचार करते हुए कहा है - "सुंदरता का अवतार हमारे सामने पल-छिन होता रहता है। अब यह हम पर है कि हम अपने सामने और चारों ओर की इस अनंत और अपार लीला को कितना अपने अन्दर घुला सकते हैं।"[33]

---

[32] छायावाद का समाजशास्त्र (1988), डॉ.शशि मुजिराज, पृ.सं.8.

[33] छठवाँ दशक, 1987, विजयदेव नारायण साही, पृ.सं. 199.

तस्वीर, इमारत, मूर्ति, नाच, गाना और कविता इन सबमें बहुत कुछ एक ही बात अपने – अपने ढंग से खोलकर या छिपाकर या कुछ खोलकर या कुछ छिपाकर कही जाती है। कविता शब्दों और शब्दों के संयोग से नहीं बनती बल्कि शब्दों का जाल जो यथार्थ पर फेंका जाता है, उससे बनती है। यह फेंका हुआ जाल ही अर्थ है और अगर यथार्थ स्थिरता नहीं गत्यात्मक प्रक्रिया है, तो शब्दार्थ को भी गत्यात्मक प्रक्रिया होना पड़ेगा।[34] डॉ. जगदीश गुप्त का कहना है कि जो कथन सृजनात्मक तथा संवेदनीयता से रहित हो, उसे किसी भी स्तर पर कविता नहीं कहा जा सकता। कविता की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए डॉ. जगदीश गुप्त ने कहा है कि - "कविता सहज आंतरिक अनुशासन से युक्त अनुभूतिजन्य सघन लयात्मक शब्दार्थ है, जिसमें सह अनुभूति उत्पन्न करने की यथेष्ट क्षमता निहित रहती है।"[35]

कविता के बारे में संसार भर में धारणा प्रचलित है कि 'वह सामान्य से हटकर असाधारण अभिव्यक्ति है। कवि 'अरविन्द' कविता के उच्चताबोधक कर्म के बहुत बड़े समर्थक थे।'[36] 20वीं सदी की कविता में दो परम्पराएँ देखी जाती रहीं- पहली जिसमें कविता हमारे चित्त के अज्ञात कोनों को दीप्त करती है। दूसरी जो कविता को मानवीय ज्ञान का अंग मानती है। 'कॉलरिज' ने कविता के बारे में कहा है कि- "वह हमें तब और भी अधिक आनंद देती है जब हम उसे सामान्य तौर पर न कि संपूर्ण रूप से समझने का

[34] वही, पृ.सं.200.

[35] कविता के नये प्रतिमान, 1990, नामवार सिंह, पृ.सं. 17.

[36] अनुवाद पत्रिका, अक्तूबर – दिसम्बर, 1991. अंक – 51, गार्गी गुप्त, पृ.सं.30.

प्रयत्न करते हैं।”[37] कविता में शब्दों को उनकी भीड़ अलग करके इस तरह रखा जाता है, जिस तरह पहाड़ी पर मंदिर।[38]

कविता के अनुवाद को लेकर काफ़ी विवाद रहा है। बहुतों की धारणा यह रही है कि कविता का अनुवाद हो ही नहीं सकता। मुख्यतः काव्यानुवाद को ही दृष्टि में रखकर इस प्रकार की बातें कही गयी हैं-

1. All translation seems to me simply an attempt to solve an unsolvable problem. _Humboldt[39]
2. There is no such thing as translation. –May[40]
3. The flowering moments of the mind drop half their petals in speech and three-fourth in translation. -Dante[41]
4. Translation of a literary work is as tasteless as a stewed strawberry. –H. de Forest Smith[42]
5. Ideas can be translated but not the words and their associations. -Sydney[43]

---

[37] अनुवाद पत्रिका,अक्तूबर–दिसम्बर,1991.अंक–69,गार्गी गुप्त, पृ.सं.77.

[38] आंद्रेई वोज्नेसेन्सकी की कविताएँ,1985,अनुःवरयाम सिंह,पृ.सं. 5.

[39] काव्यानुवाद की समस्याएँ, 1980, भोलनाथ तिवारी, पृ.सं. 50.

[40] काव्यानुवाद की समस्याएँ, 1980, भोलनाथ तिवारी, पृ.सं.50

[41] काव्यानुवाद की समस्याएँ, 1980, भोलनाथ तिवारी, पृ.सं.50

[42] काव्यानुवाद की समस्याएँ, 1980, भोलनाथ तिवारी, पृ.सं. 50

[43] काव्यानुवाद की समस्याएँ, 1980, भोलनाथ तिवारी, पृ.सं. 50

कविता क्या है इसे संक्षेप में जानने के बाद कविता कितने प्रकार की हो सकती है यह जानना भी जरूरी है। साहित्य की विधाओं का एक अंग कविता है, फिर आगे चलकर कविता का भी कई उपशाखाओं में विभाजन किया जा सकता है। जैसे- लयात्मक, प्रतीकात्मक, छंदात्मक, विवरणात्मक, नाटकीय, संगीतात्मक कविता आदि। इन सभी अलग-अलग उपशाखाओं की अपनी पृथक विशेषताएँ भी होती हैं, जो इन्हें दूसरी से अलग विशिष्ट रूप प्रदान करती है। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि कविता इन सबके अतिरिक्त शेष रह जाती है। वैसे वास्तविक रूप में संपूर्णता केवल एक 'आदर्श' है, उस तक पहुँचने का प्रयास मात्र मनुष्य अपने तरीके से अपने स्तर पर करता रहता है। इसी प्रक्रिया के चलते बहुत से गूढ़ रहस्य खुलते रहते हैं और मनुष्य को समस्या के समाधान मिलते रहते हैं, विकास के नये-नये मार्ग खुलने लगते हैं।

जहाँ 'कविता' को समझना ही इतना जटिल कार्य है वहीं उसके अनुवाद को लेकर बातचीत करना सरल नहीं हो सकता। पहले तो अनुवादक को कविता की समझ हो। पढ़ने के ढंग, भाषागत, बाह्य व आन्तरिक संरचनाओं का ज्ञान हो। लक्ष्य भाषा में उसको अनूदित करने के हेतु अनुवादनीय तत्त्वों को पहचाने, फिर कहीं जाकर वह काव्यानुवाद करने के प्रयास में कुछ सफल होगा। अनुवादक के लिए यह दोहरा जीवन जीने-जैसा कार्य होता है।

1.6. कविता का अनुवाद कठिन क्यों है?

कुछ लोगों के लिए तो कविता का अनुवाद कठिन ही नहीं, असम्भव कार्य हैं। कविता एक ऐसी निर्मित है जिसे, ज्यों – का - त्यों, उसकी अपनी भाषा में भी अन्य शब्दों द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता। दूसरी भाषा में करने का तो कोई सवाल ही नहीं उठता। बिम्ब, ध्वनि, संगीत आदि के मामले में ही नहीं, कितने ही अन्य सूक्ष्म और

जटिल स्तरों पर भी एक कविता भाषा के इतने व्यापक और विस्तृत आयाम अपने आप में संजोये रहती है कि उसका बिल्कुल यथासंभव अनुवाद नहीं किया जा सकता। पदान्वय या लगभगीकरण भले ही कर लिया जाये।

कविता के अनुवाद में एक शब्द के स्थान पर उसके पर्याय को रखने से अर्थात् शब्दानुवाद से इच्छित भाव प्रकट नहीं होगा, बल्कि कहीं तो अर्थ का अनर्थ हो सकता है। कविता की भाषा तो प्रायः लाक्षणिक और ध्वन्यात्मक होती है, जिसमें लक्षण और व्यंजना शब्द-शक्तियों का चमत्कार अधिक होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि साहित्यिक रचनाओं का, खास कर कविता का, अन्य भाषा में अनुवाद उतना सरल कार्य नहीं है, जितना कुछ लोग प्रायः समझते हैं। साहित्य की विभिन्न विधाओं में कविता एक ऐसी विधा है, जिसका अनुवाद अपेक्षाकृत कठिन होता है। कहा जाता है कि कविता में प्रयुक्त प्रतीकों, रूपकों, श्लेष, यमक आदि भाषा में अनुवाद असम्भव है। असम्भव न भी हो, पर बहुत कठिन अवश्य है।

साहित्यानुवाद के क्रम में जो कठिनाइयाँ आती हैं वे दो-तीन तरह की होती है। सबसे बड़ी कठिनीई तो मूल लेखन के भावों को दूसरी भाषा में सही-सही संप्रेषित करने की होती है। ऊपर से यह काम बहुत आसान लगता है, मगर वास्तव में ऐसा होता नहीं। भाव, भाषा का सहचर होता है और भाषा की लय, उसके प्रवाह, उसके मुहावरों और उसकी स्थानिकता से संचालित, स्थिर और अनुशासित होता है। इसलिए भावानुवाद के साथ-साथ अनिवार्य रूप से भाषा के स्तर पर भी कई जोखिम जुड़े होते हैं जिनसे अनुवादक को जूझना पड़ता है। भाषा भी चूँकि किसी संस्कृति-विशेष की संतान होती है और उससे अनिवार्य रूप से जुड़ी होती है, इसलिए भाषांतर एक अर्थ में एक संस्कृति की संवेदनाओं को दूसरी संस्कृति के बीच तलाशना है।

एक भाषा में प्रणीत साहित्यिक कृतियाँ दूसरी भाषाओं में अनूदित होती हैं तो विभिन्न भाषा-भाषी भी उनसे लाभान्वित होते हैं। 'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल' भारतेंदु की यह काव्योक्ति आज भी संगत और सार्थक है।

भाषा लोगों को जलरोधी खण्डों में विभाजित करनेवाली दीवार नहीं है, उनको आपस में मिलाने के लिए वह एक सशक्त सेतु है। हर भाषा में कुछ युगद्रष्टा साहित्यकार होते हैं। उनकी युगांतकारी रचनाओं को अन्य भाषाओं में अनूदित करने पर पाठकों का युगबोध व्यापक बनता है। मनुष्य को विश्व नागरिक बनाने में यह सहायक होता है।

जर्मन कवि गेटे को 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का अनुवाद पढ़कर नवोन्मेष मिला था। भारतीय उपनिषदों के अनुवाद पढ़कर शापनहॉवर के हृदय को नई रोशनी मिली। टैगोर की 'गीतांजलि' का अनुवाद पढ़कर यीट्स महोदय को भारतीय चिंतनधारा के प्रति बड़ा आकर्षण पैदा हो गया। मार्टिन लूथर ने 'बाइबल' का जर्मन अनुवाद प्रस्तुत किया। तभी यूरोप में नवजागरण का शंखनाद बजा था।

साहित्य की अनेक विधाएँ होती है। इन विधाओं की अनुवाद प्रक्रिया एक जैसी नहीं है। उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबंध और समालोचना साहित्य के अनुवाद में उत्पन्न न होनेवाली कई समस्याएँ काव्यानुवाद में परिलक्षित होती है। काव्यानुवाद की प्रक्रिया पेचीदा है। उत्कृष्ट कविताओं में सपाट बयानी नहीं है। सपाट बयानी के अभाव में अनुवाद में अनुवाद भी मुश्किल बन जाता है। **डॉ. सामुएल जॉनसन** कविता के अनुवाद को असंभव को संभव मानते हैं। लेकिन आज के संदर्भ में

उनकी राय पूर्णतः सही नहीं मानी जायेगी। क्योंकि कई उत्कृष्ट काव्यों का उत्कृष्ट अनुवाद निकल चुके हैं।

टी.एस. इलियट की कविता का हिंदी अनुवाद **मुक्तिबोध** ने सफलतापूर्वक किया है-

“We are the hollow men

We are the stuffed men

We measure our life with

Coffee spoons”.

“हम पोले थोथे आदमी हैं।

हम भुस भरे लोग हैं।

हम कॉफी के चम्मचों से अपनी

जिंदगी मापते हैं।”

कविता के शब्दों का अन्वय भी महत्वपूर्ण है। पंक्तियों के क्रम को भी कभी-कभी बदलना आवश्यक हो जाता है। **“छोड़ो मत, जोड़ो मत”** यह अनुवाद-विज्ञान का बुनियादी नियम है।

पास्टरनाक की '**डे ब्रेक**' शीर्षक कविता का अनुवाद **डॉ. धर्मवीर भारती** ने किया। अनूदित कविता का शीर्षक '**प्रातःकाल**' है।

"In me are people without names

Children / stay at homes, trees

I am conquered by them all

And this is my only victory".

"मुझ में है अज्ञातनामा लोग,

बच्चे, अपने घर में तमाम उम्र गुजारने वाले लोग, वृक्ष

मैं उन सबके द्वारा जीत लिया गया हूँ

यह मेरी एकमात्र जीत है।"

हर भाषा की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। अनुवाद करते समय स्रोत-भाषा की सारी विशेषताओं को लक्ष्य-भाषा में ठूँस देने के प्रयास काव्यात्मकता के संरक्षण में साधक नहीं, बाधक होंगे। किसी एक तत्व का ही संरक्षण संभव होता है तो प्राथमिकता काव्यात्मकता को ही देनी चाहिए। स्रोत-भाषा के छंद को लक्ष्य भाषा में सुरक्षित रखकर काव्यानुवाद करने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन काव्यात्मकता ही मुख्य तत्व है। खेद की बात है कि कविता का स्वछंद प्रवाह अनुवाद में अवरुद्ध है।

अधिकांश तौर पर अनूदित कविता मूल कविता की अपेक्षा निम्न स्तर ही रखती है। मशहूर कवि **डॉ.प्रभाकर माचवे** ने प्रथम कोटि की जानकारी के साथ कहा है कि काव्यानुवाद सुगंध-शीशी के बदलने के बराबर है। एक शीशी की सुगंध को दूसरी शीशी में उँड़लने की प्रक्रिया में सुगंध का कुछ अंश हवा में विलीन हो जाता है। अद्वितीय और औसत अनुभूतियों के संबंध में ऊपर कुछ कहा गया है। इन पंक्तियों के लेखक का विश्वास है कि काव्यानुवाद की प्रक्रिया में अद्वितीय अनुभूतियों के रूप में परिणत हो जाती है। यह काव्यानुवाद की सीमा है। एक प्रकार से यह इलाज से परे बीमारी है।

कविता का अनुवाद करते समय कविता के रूप के अनुवाद की ही समस्या अनुवादक के सामने नहीं आती, बल्कि एक भाषा के काव्यात्मक मुहावरे को दूसरी भाषा में रूपांतरण की समस्या भी सामने आती है। प्रत्येक भाषा में अभिव्यंजना की परम्परागत रूढियाँ होती हैं, जो उसके संगठन से निबद्ध होती है। कुछ विद्वानों का मानना है कि कविता का अन्य भाषा में अनुवाद सम्भव ही नहीं है। जो कुछ सम्भव है, उनके अनुसार वह छायानुवाद हो सकता है (जिनमें मूल कविता की धुँधली छाया मात्र हो) अथवा मूल कविता से प्रेरणा लेकर या भाव ग्रहण करके अन्य भाषा में एक नई सर्जना हो सकती है पर वह भी तब जब अनुवादक एक सर्जक भी हो।[44]

मूल कविता के शब्दों, प्रतीकों, मुहावरों, लोकोक्तियों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों आदि में कुछ–न–कुछ ऐसा भी होता है जो परंपरा से अनुवाद की (लक्ष्य) भाषा में भी उपलब्ध होता है, चाहे वह मूलभाषा के शत–प्रतिशत समान न हो पर उसके निकट या उससे मिलता–जुलता अवश्य हो। इस समान या निकट के तत्त्वों का

[44]अनुवाद पत्रिका,अप्रैल–जून 1985,अंक–43,गार्गी गुप्त,पृ.सं. 71.

अन्य भाषा में अनुवाद अनुवादक की थोड़ी कल्पनाशीलता से ही सहज हो सकती है। इसके लिए उसे दोनों भाषाओं के सांस्कृतिक परिवेश से पूरी तरह परिचित होना पड़ेगा। वहीं से उसे मिलते – जुलते मुहावरे, प्रतीक, उपमान आदि मिल सकते हैं, जिनके कुशल उपयोग से वह मूल कविता के भाव को मार्मिकता के साथ व्यक्त कर सकता है। मूल कविता में इन्हीं से जुड़े ऐसे अनेक तत्त्व भी होते हैं, जो अन्य भाषा में भी नहीं हो सकता।[45]

चित्र, संगीत, मूर्ति इत्यादि कला के अन्य रूपों की अपेक्षा और स्वयं भाषिक माध्यमों में भी कविता भाषा में होने के कारण अपनी खास संस्कृति, मानसिक बुनावट, स्वभाव वातावरण और मिथकों इत्यादि में इस कदर गुँथी रहती है कि उसका तद्वत अनुभव असंभव है।[46]

मूल काव्य कृति का सम्पूर्ण रूप से दूसरी भाषा में प्रत्यारोपण नहीं हो सकता है, कुछ अर्थ और लालित्य तो खो सकती है। यह अनुवाद की स्वाभाविक विवशता है। 'शैली' ने ठीक कहा है, "हर काव्य मूलतः पुष्प सा ही प्राकृतिक समग्रता से समन्वित है। पुष्प के स्वाभाविक सौंदर्य का अनुकूलन नहीं किया जा सकता। वैसे ही समग्र काव्य का न तो प्रत्यारोपण (Transplantation) हो सकता है और न रचनान्तर (Transcription) रचनांतरण मामूली कृति से अति दूर होने की संभावना अधिक रहती है।"[47] वास्तव में मूल काव्य रचना का रचनान्तरण हो ही नहीं सकता। मूल रचना की समग्र अनुकृति

[45] अनुवाद पत्रिका,अक्तूबर–सितम्बर 1991,अंक–69,'कविता का अनुवादः बीसवीं सदी की फ्रांसीसी कविता के संदर्भ में'– गिरधार राठी,पृ.सं.73.

[46] वही, पृ.सं. वही।

[47] अनुवाद पत्रिका, जनवरी–मार्च, अंक–56, गार्गी गुप्त,"कामायनी और आँसू के संदर्भ में काव्यानुवाद" – जयकिशन सहानी, पृ.सं.15.

अनुवाद में संभव नहीं क्योंकि मौलिक कृति एक ही रचना का अस्तित्व स्वीकार करती है। मूल कृति का लेखक भी यदि दो भाषाओं की अच्छी जानकारी रखता हो तब भी वह एक भाषा में लिखी हुई अपनी काव्य–कृति का अनुवाद दूसरी भाषा में समग्र रूपेण नहीं कर सकता।

कविता में समानार्थवाची शब्द स्थानापन्न नहीं किये जा सकते। कविता को अगर कोई चीज दुरूह है तो वह है कवि द्वारा कविता और जीवन के बने बनैए चौखटे से देखने की आदत को तोड़ने की कोशिश। जुरूहता की शिकायत प्रायः वहीं लोग करते हैं जो इन चौखटों से अलग नहीं होना चाहते।[48] भारतीय अंग्रेजी के साहित्यकार 'खुशवन्त सिंह' का मानना है कि हम कविता की पुनः रचना नहीं कर सकते हैं। 'फिजराल्ड' ने उमर-खैय्याम की रूबाइयों का जो काव्यानुवाद किया, वह मूल से काफी दूर है, इसीलिए उसे सही मायने में काव्यानुवाद नहीं कह कर पुनः सृजन कह सकते हैं। 'फिजराल्ड' ने उमर-खैय्यम की रूबाइयों के भावों, संदेशों को सम्प्रेषित करने के लिए काफी छूट ली। अतः कविता की इतनी छूट अवश्य ले सकते हैं कि उसका पुनःसृजन किसी अन्य भाषा में कर सकें।[49]

1.7. तेलुगु और हिंदी भाषाओं के संदर्भ में अनुवाद की समस्याएँ

काव्य में शब्द और अर्थ का समान महत्व होता है। काव्य में शब्द और अर्थ का अद्वैत रूप सिद्ध रहता है। इसी कारण कविवर कालिदास को अर्धनारीश्वर के रूप में पार्वती और परमेश्वर के अखण्ड सहभाव का भावन करते समय वाक् और अर्थ के

---

[48] आंद्रोई बोज्नेसेन्स्की की कविताए, 1985, अनुः वरयाम सिंह, पृ.सं. 5–6.

[49] The Hindu, Sunday (News paper), March 1993, "The fine Art Translation" (खुशवन्त सिंह से बातचीत)

सहभाव का उपमान ही स्फुरित हुआ था। काव्य में भी कविता की स्थिति सर्वाधिक विशिष्ट है। शब्द और अर्थ का जैसा संश्लेषण कविता में पाया जाता है, वैसा अन्य किसी साहित्य-रूप में नहीं।

तेलुगु कविता के हिंदी रूपांतरण से संबंधित तीन विशिष्ट शैलीपरक समस्याओं का विश्लेषण के बारे में अत्यंत आवश्यक है।

1.7.1. शब्द संबंधी

जैसा ही पहले कहा जा चुका है, काव्य में शब्द, शास्त्र की भाँति केवल अर्थ का भारवाही नहीं होता, वह तो अर्थवान होने के साथ-साथ उससे कहीं अधिक एक अमूर्त भाव का प्रतीक होता है। इसीलिए काव्यानुवादक मूल शब्द में निहित अर्थ, भाव, संगीत अथवा रसगत सौंदर्य को आत्मसात् करके उसे अनुवाद की भाषा में किसी एक अथवा अनेक शब्दों द्वारा अभिव्यक्त करता है। शेकस्पियर कृत 'मैकबेथ' में लेडी मैकबेथ की चिकित्सा करने में असमर्थ डॉक्टर की उक्ति है-

'More needs she the divine than the physician'[50]

इस पंक्ति के दो हिंदी अनुवाद उपलब्ध हैं-

1. 'उन्हें तो किसी महात्मा या संत की आवश्यकता है, डॉक्टरो उन्हें ठीक नहीं कर सकता।'
2. 'मैं तो ख़ाली तन का रोग मिटा सकता हूँ,

   इन्हें चाहिए मन की मैल छुड़ाने वाला।'

[50] काव्यानुवाद की समस्याएँ, प्रथम संस्करण जनवरी 1980, संपादकः डॉ.भोलनाथ तिवारी, महेंद्र चतुर्वेदी, पृ.सं. 68

1.7.2. छंद संबंधी

अपने हजार वर्षों के इतिहास में तेलुगु कविता छंद की दृष्टि से मुख्यतः तीन सरणियों में अभिव्यक्त हुई है- 1. संस्कृत वर्ण वृत्तों में, 2. तेलुगु के देशी छंदों में तथा 3. गेय रूप में या मुक्त छंद में।

1. संस्कृत वर्ण वृत्तों में अभिव्यक्त कविता

तेलुगु में

'इंतिं तै वटुडिंतयै मरियु तालिंतै नभोवीथिपै
नं तै तोयद मनत्वाभ्रमुन ललल तें प्रभाराशिपै
नं तै चंद्रुन कंतये ध्रुवुनिपैनंतै मःवीटिपै
नं तै सत्यपदोन्न तुंडगुचु ब्रह्माण्डान्न संविधियै।'[51]

हिंदी मेः

'इस प्रकार भूमिदान, स्वीकृत कर तब राजन्। इतना-सा बौना वह डेढ़ हाथ का बौना। इतना बन, इतना बढ़ उतना चढ़, नभ पथ पर घन-मण्डल के ऊपर, प्रभापुंज को ढकेल पीछे अपने, शशि का लंघन कर लाघव से ध्रुवहद सर्वोन्नत का अतिक्रमण कर शर-सा, महर्लोक पर चढ़, बढ़ सत्यलोक से दृढ़तर, ब्रह्माण्ड कटाह फोड़, सीमाएँ सभी तोड़, बढ़ता ही चला गया। चढ़ता ही चला गया।'[52]

उसी प्रकार और एक कविता का अनुवाद देखें

'तल्लियु तंड्रियुं गुरुवु दैववु लॅल्लरू मोर, मोरले
चॅल्लगनिरूयरेनि यिक चॅल्लॅन नादगु पून्कि यॅच्चट्न

[51] अनुवाद कार्यदक्षता :भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं. 148
[52] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 148

गल्लयाँ सत्यमो एरूग, कर्मविपाकत नेर्पुवेल मे
नॅल्ल परोपकारमुनके यनि पल्कितिरट्लु चेसॅदन्।।'[53]

हिंदी में

'माता, पिता, गुरु, देव मेरे सभी तो आप ही हैं।
कैसे प्रतिज्ञा मन निभे यदि निरोध आप ही हैं
जाने झूठ हो या सत्य, पर आपही ने सिखाया।
हो जीवन परहितार्थ, इसको लक्ष्य मैंने बनाया।।'[54]

2. तेलुगु के देशी छंदों में अभिव्यक्त कविता :

तेलुगु में

'अक्करकु रानि चुट्टमु
म्रोक्किन वरमीनि वेलपु, मोहरमुनदा
नेक्किन बारनि गुर्रमु
गक्कुन विडुवंग वलयु गदरा सुमती।'[55]

हिंदी में

'वक्त पर जो बंधु सबका काम आता है नहीं,
पूजादिकों से तृप्त हो जो, देव वर देता नहीं
युद्ध में जो अश्व बिल्कुल, काम देता है नहीं
छोड़ देना लाजमी उन, सभी को सुमती वहीं।'[56]

---

[53] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 148

[54] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 148

[55] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 149

3. मुक्त छंद के रूप में अभिव्यक्त कविता

तेलुगु में

'देशमुनु प्रेमिंचुमन्ना
मंचि यन्नदि पेंचुमन्ना
वट्टि माटलु कट्टि पेट्टोय
गट्टि मेल् तलपेट्ट वोय'[57]

हिंदी में

'देश-प्रेमी हो चलो रे।
जग-भलाई में ढलो रे।
कभी बातें मत बनाओ
ठोस नेकी मन जनाओ।'[58]

तेलुगु की कविताओं के उपर्युक्त रूपांतरणों के विश्लेषण से दो बातें स्पष्ट हैं-

1. तेलुगु में प्रयुक्त वर्णवृत्तों का और तेलुगु के देशी छंद का भी अनुवाद हिंदी में या तो हिंदी के मात्रिक छंदों में हुआ है या फिर मुक्त छंद में। कहीं भी अनुवादकर्ताओं ने अपने अनुवादों में वर्णवृत्तों का प्रयोग नहीं किया है।

2.गेय रूप मुक्त छंद में किया गया अनुवाद हिंदी के मात्रिक छंदों में संपन्न अनुवाद की तुलना में प्रायः ही अधिक संतोषजनक व प्रभावशाली बन पड़ा है।

---

[56] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 149

[57] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 150

[58] अनुवाद कार्यदक्षता : भारतीय भाषाओं की समस्याएँ 2006, सृजन एवं संपादन डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, पृ.सं 150

1.7.3. शैली संबंधी

शब्दों अथवा छंदों तक ही सीमित न रहकर उपर्युक्त वर्ग के विचारक यह आग्रह भी करते हैं कि अनुवाद में मूल कृति की शैलीगत विशेषताओं का भी पूर्णतः समावेश होना चाहिए। अतः वे अनुवाद में उनका अभाव होने पर अनुवाद-कार्य का महत्व ही अस्वीकार कर देते हैं। तथापि वह इस प्रकार की विशेषताओं के भाषांतर में अथवा रूपांतर में अपनी ओर से कोई कसर नहीं उठा रखता, इसका प्रमाण ‘रामचरितमानस’ के निम्न अवतरण के अंग्रेजी अनुवाद से प्राप्त हो जाता है-

कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि, कहत लखन सन राम हृदय गुनि।
नाहुँ मदन दुंदुभि दीन्हीम, मनसा बिस्ब विजय कहुँ कीन्हीं।।[59]

“At the sound of the tinkling of anklet and bangle, said Rama to Lakshman, as thought`s gan to mingle, ‘I hear sound that seem’ tid the Love-God who comes with world-conquering cymbals and beating of drums”.

उपर्युक्त कथन से हमें यह पता चलता है कि अनुवादक को अनुवाद करते समय भावात्मक एकता की संपूर्ति, भाव-भावनाओं का उन्नयन एवं हृदय पक्ष की समृद्धि के लिए काव्यानुवाद आवश्यक ही नहीं बल्ति अनिवार्य हो जाता है। मानव जीवन में सबसे सुंदर वस्तु अगर खोजनी हो तो वह न उसका रंग है, न रूप, न शक्ति है, न संपत्ति, वह तो भावना है। तात्पर्य यह है कि भाव या भावना वह चीज है जो व्यक्ति-विकास में एक प्रतिमान सिद्ध होती है।

---

[59] काव्यानुवाद की समस्याएँ, प्रथम संस्करण जनवरी 1980, संपादकः डॉ.भोलनाथ तिवारी, महेंद्र चतुर्वेदी, पृ.सं. 69

1.7.4 व्याकरण संबंधी समस्याएँ

तेलुगु से हिंदी में अनुवाद करते समय कई व्याकरण संबंधी समस्याएँ आते हैं। मुख्य रूप से निम्नांकित समस्याएँ आते हैं।

लिंगगत समस्याएँ, कारकों से संबंधी समस्याएँ, वचन संबंधी समस्याएँ, तत्सम एवं तद्भव संबंधी समस्याएँ, ने प्रत्यय संबंधी समस्याएँ, लोकोक्ति एवं मुहावरों के संदर्भ में इत्यादि।

हिंदी और तेलुगु दो भिन्न परिवारों की भाषाएँ हैं। उत्तर और दक्षिण के संगम-स्थान पर स्थित होने के कारण आंध्र प्रदेश और तेलंगाना की भाषा और साहित्य पर संस्कृत भाषा का अधिक प्रभाव पड़ा है। शब्दावली, वाक्य-रचना, छंदोविधान, संधिविधान आदि में हिंदी से तुलना करें तो समानता नहीं है। इसीलिए तेलुगु और हिंदी में अनुवाद करते समय प्रथमतः भाषागत इन विशिष्टताओं से परिचित रहना अत्यंत आवश्यक है।

मूल रचना के वातावरण के यथार्थ को अनूदित कृति में ज्यों का त्यों उतार देना। केवल भाषा का रूपांतर, पर्यायवाची शब्दों का प्रस्तुतीकरण तथा आशय का वर्णन कर देने भर से अनुवाद पूर्ण नहीं हो सकता। किसी देश अथवा समाज के रीति-रिवाज, सभ्यता-संस्कृति आदि का सजीव चित्रण करना अनुवादक के लिए कठिन महसूस होता है। ऐसी समय में केवल अभिधा-शक्ति से काम नहीं चलता। लाक्षणिक शब्दावली तथा गागर में सागर भरना वाली शैली से वातावरण की सजीवता को यथावत् प्रस्तुत करना संभव है।

प्रभूत शब्द-संपदा तथा पर्यायवाची शब्दों का समृद्ध भण्डार के लिए परम आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य है। विशेषकर कहावतों तथा मुहावरों का अनुवाद

करने में तो और भी अनिवार्यता बन आती है। अनुवाद को तत्सम शब्दों का प्रयोग भी अत्यंत सावधान होकर करना चाहिए।

तद्भव शब्दों के लिए भाषा के अनेक शब्द होते हैं। अतः किसी भी आशय एवं विचार को अपने निजी सामर्थ्य से प्रकट करने की क्षमता रखते हैं। नये शब्दों की सृजनशीलता से अनुवादक शब्द-संपदा तो अधिक समृद्ध करता है।

अनुवाद करते समय शब्दों के चयन में अनुवादकों को बड़ी सतर्कता बरतनी पड़ती है, वरना उसका अर्थ कुछ का कुछ बन जाता है। उदाहरण के लिए तेलुगु में तत्सम शब्द जिस अर्थ मे प्रयुक्त होते हैं, वे शब्द हिंदी में भिन्नार्थ में प्रयोग में लाये जाते हैं।

तेलुगु में साधारणतः वाक्य के मध्य में आने वाले स्वर का उच्चारण नहीं होता। यदि दो स्वर हैं तो पूर्व स्वर का लोप होकर, उत्तर-स्वर पूर्व व्यंजन में मिल जाता है। अनुवादक को इस स्वर लोप के बारे में सावधानी से रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त नकारांत शब्द के बाद आने वाले प्रथम अक्षर वर्ग तृतीय अक्षर में बदल जाता है। इस अक्षर परिवर्तन से भी अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। अनुवादक को इस अक्षर परिवर्तन को बड़े ध्यान से समझना होगा।

उदाहरण के लिए चरित्र शब्द तेलुगु में इतिहास के अर्थ में प्रयुक्त होता है, जहाँ हिंदी में चाल-चलन अथवा शील-स्वभाव के अर्थ में। इसी प्रकार व्यवसाय शब्द जहाँ तेलुगु में कृषि प्रयत्न, साधना या खेती के अर्थ में प्रयोग में लाया जाता है, वहाँ हिंदी में उद्योग के रूप में। संगति का शब्द तेलुगु में समाचार के अर्थ में लिया जाता है जबकि हिंदी में साहचर्य के रूप में।

लिंग संबंधी कठिनाइयाँ भी अनुवादक के सामने प्रश्नचिह्न खड़ा कर देती है। उदाहरण के लिए एक ही वस्तु के विविध शब्द भिन्न लिंगों में प्रयुक्त होते हैं- जैसे

पुस्तक, किताब स्त्रीलिंग हैं, पर ग्रंथ पुलिंग है। इसी भाँति आत्मा स्त्री लिंग है। नयन और नेत्र पुलिंग हैं। टांग स्त्रीलिंग है। पैर पुलिंग है। यहाँ तक कि पुरुष बोधक मूँछे स्त्रीलिंग है।

तेलुगु स्वरांत भाषा है, जबकि हिंदी व्यंजनांत भाषा है। अतः उच्चारण संबंधी कठिनाइयों के साथ अनुवादक को लेखन में भी मुसीबत का सामना करना पड़ता है। जैसे- रामाराव- रामारावु यहाँ पर हम राव शब्द का प्रयोग ऊ स्वर के साथ उच्चारित करते हैं। इसी प्रकार जमुन शब्द का तेलुगु में न ह्रस्व लिखा जाता है जबकि हिंदी में आकारांत जुड़ कर जमुना होता है।

'ने' प्रत्यय संबंधी कठिनाइयाँ

तेलुगु में 'ने' प्रत्यय का प्रयोग नहीं होता। 'ने' के प्रयोग से हिंदी वाक्य में होने वाले परिवर्तनों पर भी अनुवादक को ध्यान रखना चाहए।

उदाहरण के तौर पर मैं ने एक रोटी खाई।

राम ने दस रोटिय़ाँ खाई।

मैं ने एक रोटी को खाया।

इसी प्रकार मुहावरे और लोकोक्तियों में भाषा की प्राण-शक्ति निहित होती है। ये प्रत्येक भाषा के सौंदर्यवर्धक और प्रभाववर्धक तत्व होते हैं। मुहावरों तथा लोकोक्तियों के अनुवाद में भी व्यावहारिक दृष्टि से अनुवादक को माथा-पच्ची करनी होती है। अनुवाद के संदर्भ में नये मुहावरों व शब्दों को गढ़ने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। उसकी सफलता उनके प्रचलन में सार्थक होती है। इनका अनुवाद करते समय अनुवादक को सावधानी बरसनी पड़ती है।

1.8. समस्याओं का व्यावहारिक समाधान

काव्यानुवाद में उपर्युक्त समस्याओं के कारण जो कठिनाइयाँ खड़ी होती हैं, उन्हीं को देखते हुए यह विषय विवाद का बन गया। उक्त समस्याओं के कारण ही कविता का अनुवाद कठिन है से लेकर 'कविता का अनुवाद एक प्रकार की असाध्य साधना ही है।'[60] सफल काव्यानुवाद बहुत ही कठिन कार्य है, किंतु असंभव नहीं है और 'Translation of verse is one engaged in sera plaiting sunbeams'[61] तक के मत-मतांतर काव्यानुवाद के बारे में मिलते हैं। किंतु जहाँ समस्याएँ होती हैं वहाँ समाधान का होना भी निश्चित है। इसी वजह से अनेक समस्याओं के होते हुए भी काव्यानुवाद दुनिया की अनेक भाषाओं से और भाषाओं में संपन्न हो रहे हैं।

अनुवादक काव्यानुवाद करते समय यह अवश्य देखे कि स्त्रोत काव्य-कृति में प्रयुक्त छंद लक्ष्य भाषा में प्रचलित है अथवा नहीं ? यह वह लक्ष्य भाषा में भी प्रयुक्त मिलता हो तो यथा संभव उसी छंद में मूल रचना का अनुवाद संपन्न किया जाए। किंतु अगर स्त्रोत भाषा की काव्य कृति में जिस छंद का प्रयोग है वह लक्ष्य भाषा में प्रचलित या प्रयुक्त न हो तो अनुवादक के सामने कठिनाई आ जाती है। ऐसे समय वह मूल छंद के समान प्रभावान्वित करने वाला जो छंद लक्ष्य भाषा में प्राप्त है उसी को अपनाकर अनुवाद संपन्न करें। यहाँ पर याद हो कि मूल छंद का यथावत संप्रेषण करने के चक्कर में अनुवाद बढ़ेगा न हो। अतः छंदबद्ध रचना के अनुवाद में लक्ष्य भाषा की प्रकृति का ध्यान रखना भी अनिवार्य है।

---

[60] अनुवाद विज्ञानः सिद्धांत एवं अनुप्रयोग, संपादक डॉ.नगेंद्र, पृ.सं. 132

[61] अनुवाद सूक्तियाँ, संपादक डॉ.गार्गी गुप्त, हेइन विचार से, पृ.सं. 25

अनुवादक काव्यानुवाद करते समय यह अवश्य देखें कि मूल रचना में किस प्रकार रस ओतप्रोत है। इस हेतु वह अनूद्य रचना को अत्यंत सूक्ष्मता से और बार-बार पढ़े। तत्पाश्चात ही उसका लक्ष्य भाषा में उसी रसानुभूति के साथ अनुवाद किया जाए। काव्यानुवाद में मूल रचना की कलात्मकता तथा भावात्मकता समान रूप से महत्त्व रखती है। अतः इन दोनों का संप्रेषण समान रूप से होना आवश्यक है। मूल की कलात्मक अनुभूति और भावात्मक अभिव्यक्ति के लिए अनुवादक का संवेदनशील होना जितना महत्त्वपूर्ण है उतना ही महत्त्वपूर्ण है अनुवाद कार्य का अभ्यास होना। विशेषतः काव्यानुवाद के लिए अनुवाद कार्य का अभ्यास सफल अनुवादक के लिए आवश्यक हो जाता है।

अनुवादक को काव्यानुवाद में मूलकृति की अभिव्यंजना को नहीं भूलना चाहिए। वही काव्यानुवाद सफल काव्यानुवाद माना जाता है जिसमें मूल काव्य-कृति की अभिव्यंजना को यथावत बरकरार रखा जाता है। अतः अनुवादक पूरी सतर्कता से मूल अभिव्यंजना को आत्मगत करे। तभी वह उसका सही संप्रेषण कर सकता है। काव्यानुवाद में मूल की लय अर्थात् संगति, गेयता और संगीतात्मकता को असाधारण महत्त्व होता है। अनुवादक को यह याद रखना चाहिए कि मूल रचना में ये प्रवृत्तियाँ कितनी मात्रा में निहित हैं। यदि मूल रचना में गेयता तथा संगीतात्मकता हो तो लक्ष्य भाषा में इनकी रक्षा अनिवार्य है।

किंतु इनको बरकरार रखते समय अनुवादक लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुसार उनकी आयोजन करें। यदि मूल रचना लयबद्ध हो तो उसे लक्ष्य भाषा की रचना को मद्देनजर रखते हुए प्रतिस्थापित किया जाए। वरना अनुवाद भद्दा हो सकता है। अंततः कविता का अनुवाद कठोर परिश्रम, सृजन क्षमता एवं प्रतिभा की माँग करता है। मूल के साथ तादाम्य स्थापित करने की तन्मयता एवं सूझ-बूझ भी काव्यानुवाद को सफल

बनाने में सहायक सिद्ध होती है। आज ऐसी कई प्रसिद्ध काव्य-कृतियों के श्रेष्ठ एवं सफल अनुवाद प्रायः इसी वजह से संपन्न हुए दिखाई देते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि कविता का अनुवाद असम्भव तो नहीं है, परन्तु कठिन अवश्य है। कविता के अनुवाद में कठिनाई के कई कारण हो सकते हैं, जैसे- शैलीगत, ऐतिहासिक, मिथकीय, आर्थी आदि। लेकिन इन सबके बावजूद हम यह कह सकते हैं कि क्योंकि कविता भाषा में लिखी जाती है और भाषा में निश्चितता होती है इसलिए कविता का अनुवाद हो सकता है। हाँ, यह अलग बात है कि उसके स्तरों को देखकर उसकी गुणवत्ता को आँका जा सकता है और साबित किया जा सकता है कि काव्यानुवाद को लेकर इतनी कठिनाइयों के चलचे भी मूल से बेहतर अनुवाद किया जा सकता है।

द्वितीय अध्याय

डॉ.एन.गोपि की रचनात्मक चेतना का विकास और अनुवादकों के संक्षिप्त परिचय

द्वितीय अध्याय

2. डॉ.एन.गोपि की रचनात्मक चेतना का विकास और अनुवादकों के संक्षिप्त परिचय

2.1. बाल्य-जीवन

डॉ.एन. गोपाल (गोपि) का जन्म दक्षिण तेलंगाना क्षेत्र के नलगोंडा जिले के भुवनगिरी नामक गाँव के पोचम्मावाडा इलाके में 25 जून, 1950 को हुआ। इनके पिताजी का नाम 'नक्का चेन्नय्या' और माताजी का नाम 'नक्का लक्ष्मम्मा' हैं। इनके माँ-बाप के साथ परिवार के लगभग सभी सदस्य निरक्षर थे। अपने परिवार में पहला शिक्षित व्यक्ति एन. गोपि ही है। लेकिन इनके पिताजी को छोटे-मोटे हिसाब करने का अक्षर ज्ञान था। ये जाति से जुलाहा हैं। माँ-बाप के अशिक्षित होने के कारण इनकी जन्म-तिथि में दो साल का अंतर आ गया अर्थात् पाठशाला में इनका जन्म 25 जून, 1948 लिखा गया है। इनका परिवार कपड़े बुनने का काम करते थे। इनके पिताजी कपड़ों की गठरी को सिर पर रखकर गाँव-गाँव में घूमकर कपड़े बेचने का कार्य करते थे।

बचपन में इनके परिवार को आर्थिक संकट तो नहीं था, लेकिन उतने भी धनवान नहीं थे। सामान्य परिवार में जन्मे गोपि को बचपन से ही पुस्तक पढ़ने का विशेष शौक रहा। उन दिनों में इनके घर में बिजली की व्यवस्था नहीं थी, लेकिन गोपि ने किरोसिन दिया के नीचे बैठकर ध्यान से पढ़ाई की। उस समय इनसे पिताजी पूछते थे कि क्या होता है बेटा, इतनी मेहनत करके पढ़ने से पढ़-पढ़ कर आँखें पूरी खराब हो जा रही है और इनकी माता भी कहती थीं कि जिस घर में सरस्वती रहती है उस घर में कभी ल्क्ष्मी नहीं निवास करती है। तुम्हारी पढ़ाई की बात भगवान जाने, दिये में तेल पूरा खत्म हो रहा है। परन्तु कितनी भी मुसीबत आयीं, गोपि ने अपनी पढ़ाई को कभी भी नहीं छोड़ा।

बचपन में इनका नाम किताबी कीड़ा रखा गया। कितनी भी कठिनाइयाँ सामने आयीं, मगर गोपि को अपने माँ-बाप का बहुत प्यार मिला। गाँव का वातावरण, माँ-बाप का प्यार, शिक्षकों का प्रोत्साहन, मित्रों से अच्छे संबंध, बावड़ी-तालाबों में तैरना, पहाड़ों में घूमना जंगलों से फूल तोड़कर 'बतुकम्मा' मनाना इन सबने बचपन में इनके बाल-मानस पर गहरा प्रभाव डाला था।

2.2. शिक्षा-दीक्षा

अपने गाँव में ही इन्होंने प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा प्राप्त की। उन दिनों में सरकार ने पी.यू.सी. को निकालकर एच.एस.सी. का प्रावधान किया था। इसका मतलब दसवीं कक्षा के साथ ग्यारवीं कक्षा एवं बारवीं कक्षा भी पढ़ना अनिवार्य है। इन्होंने पहली कविता 12 साल की अल्पायु में लिखी। दरअसल गोपि को बचपन से ही कविता लिखने की विशेष रुचि थी।

एन.गोपि के कवि बनने में बचपन की तीन घटनाओं का विशेष अवदान हैं। पहली घटना उनके विद्यार्थी-जीवन से है। गोपि के भाई पुस्तक प्रिय थे। इस कारण से कई किताबें वह घर लाया करते थे। उन सब किताबों को गोपि मन लगाकर पढ़ते थे। किताबों के प्रति यह आकर्षण को देखकर उनके भाई ने माँ-बाप के मना करने पर उनको समझा-बुझाके पाँच रूपये रखकर अपने गाँव के पुस्तकालय 'तालुका शाखा ग्रंथालय' में मेम्बरशिप दिलवाया जिसमें से उन्होंने हजारों किताबें आठवीं-नौवीं में ही पढ़ लीं थी। भले ही किताबें समझ में आये या न आये। इससे इनके कठोर परिश्रम करने के व्यक्तित्व का विकास हुआ। साथ ही विभिन्न विषयों की जानकारी से इनका ज्ञानवर्द्धन बढ़ा। इन्हें बचपन में 'नार्ला चिरंजीवि', 'कविराव', 'बी.वी.नरसिंह राव' जैसे कवियों के द्वारा

लिखित बाल-साहित्य ने विशेष रूप से आकर्षित किया। सबको पढ़कर उसी तरह लिखने का प्रयास करते थे। इनके द्वारा लिखित पहली कविता 'श्री नल्ला मल्लारेड्डी' द्वारा संकलित 'ऊयाला' (झूला) नामक कविता संग्रह में प्रकाशित हुई।

कविता इस प्रकार है-

उंडालोय उंडालोय
चल्लनि नील्लकु कूजा
पेल्लिकि तप्पक बाज़ा
जडलो एर्रनि रोजा।।"

अर्थात्   "चाहिए, चाहिए
ठण्डा पानी के लिए घड़ा
शादी के लिए बाज़ा
खोपड़ी में गुलाब की फूल।।[62]"

जब पहली बार अपनी कविता को पत्रिका में देखकर खुशी से अपने पिताजी के पास गये और चरण स्पर्श करके कविता को दिखाये। इनके पिताजी को भी बहुत खुशी हुई और गोपि से पूछा कि ऐसा करने से क्या मिलता है ? तुरन्त गोपि ने विनम्र से उत्तर दिया, कुछ नहीं, ऐसा भेजने में हमारा ही पच्चीस पैसे खर्च होते हैं। तब इनके पिताजी ने कहा, तो ऐसा करना बेकार है। लेकिन उस बेकार का मूल्य उस दिन वे समझ नहीं पाये और देख नहीं पाये। इसके पश्चात् 'प्रजा मता' (बेंगुलुरू से प्रकाशित) 'कृष्णा पत्रिका' (बन्दरु से प्रकाशित) एवं 'नेता' (हैदराबाद से प्रकाशित) पत्रिकाओं में कई बार इनकी

[62] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.16 (दिल्ली, तेलुगुवाणी, 2000)

कविताएँ प्रकाशित हुई। गोपि आठवीं कक्षा में ही ‘कृष्णा’ पत्रिका में लगभग पचास तक बाल-गेय लिखे हैं। गोपि जब नौवीं कक्षा के छात्र थे उसी समय उन्होंने ‘विश्वनाथ सत्यनारायण’ द्वारा लिखित बहु-चर्चित उपन्यास ‘वेयिपडगलु’ (सहस्त्र फण) को पढ़ लिया था। इसी उपन्यास ने गोपि के साहित्य के प्रति आकर्षण की बुनियाद रखी। इन्होंने विद्यार्थी-जीवन में ही छन्दोबद्ध कविताएँ सैकडों लिखीं। इन कविताओं में मुख्य रुप से ‘उत्पलमाला’, ‘चंपकमाला’ आदि विशेष छंद थे। उसमें से कई कविताएँ पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर आयी थीं। इनके विद्यार्थी-जीवन में ही एक ही दिन में ‘शशि’ नामक पद्य शतक लिखी जो ‘शशि शतकम्’ शीर्षक से 1967 में हैदराबाद से ‘रामा नर्सय्या जी’ के संपादन में प्रकाशित ‘नेता’ साप्ताहिक पत्रिका में लगातार प्रकाशित हुई। दरअसल उस समय हर दिन कम-से-कम उन्होंने दो कविताएँ लिखें बिना खाना नहीं खाने का नियम बना लिया था। पाठशाला में इनके शिक्षक ‘रामदास राव’ का प्रोत्साहन बहुत मिला। इनके द्वारा लिखित पहली व्यासम् ‘भारती’, ‘कलगूरगंपा’ संकलन में ‘वचना कवित्वम् पदगुंभनम्’ नाम से प्रकाशित हुआ।

गोपि पर गुरजाड़ा अप्पराव, श्री श्री साहित्य से परिचय होने के बावजूद उसी समय उर्दू से तेलुगु में आये हुए, तेलंगाना पदबंधों एवं सौष्ठवों के कारण ‘डॉ.सी.नारायण रेड्डी’ की कविता शैली ने अत्यधिक आकर्षित किया। इनके गेय, कविता पर ‘डॉ.सी.नारायण रेड्डी’ का प्रभाव, पद-रचनाओं पर ‘देवरेड्डी’, ‘दाशरथि’, ‘दुव्वुरी रामिरेड्डी’ के प्रभाव और वचन कविता में स्वनिर्मित शैली ईजाद की। इसी आकर्षण के

कारण गोपि ने आठवीं कक्षा में पहली बार प्रमुख कवि डॉ.सी.नारायण रेड्डी द्वारा लिखित साहित्य एवं गेय संकलित काव्य से प्रभावित होकर एक खत लिखा था, जिसका उत्तर भी इनको मिला। उस समय डॉ.सी.नारायण रेड्डी उस्मानिया विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के रूप में कार्यरत थे। उसके बाद लम्बे समय तक इनके बीच में पत्राचार चलता रहा। नौवीं कक्षा में इन्होंने डॉ.सी.नारायण रेड्डी से मिलने के लिए अपना गुल्लक को फोड़ा और उसमें से पैसे निकालकर भुवनगिरी से सिकंदराबाद पहली बार आये। उस समय भुवनगिरी से सिकंदराबाद तक का रेल का टिकट किराया 95 पैसे था। सिकंदराबाद से उस्मानिया विश्वविद्यालय परिसर तक पैदल चलते हुए, कई लोगों से पता पूछते हुए वे आर्ट्स-कॉलेज तक पहुँच गये। लेकिन कॉलेज के अंदर जाकर उनसे मिलने का साहस वे नहीं जुटा पाये क्योंकि उस समय तक उन्होंने डॉ.सी.नारायण रेड्डी को कभी प्रत्यक्ष रूप से देखा भी नहीं था। इसके अलावा वे भयभीत और डर के कारण किसी से पता पूछने में संकोच करने लगे। क्योंकि शहरी जीवन से उनका पहला साबका पड़ा था। इसलिए वह सुबह 11 बजे से लेकर दोपहर 3 बजे तक इंतजार करते रहे। जब डॉ.सी.नारायण रेड्डी बाहर निकलकर आये, उस समय उनसे मिलकर अपना परिचय उन्हें दिया। डॉ.सी.नारायण रेड्डी (सी.ना.रे.) उन्हें देखकर कुछ देर तक चकित रह गये क्योंकि इतना छोटा बच्चा मेरी साहित्यिक कृतियाँ पढ़कर मुझे खत लिखता रहा और इस जुनून के कारण वह मुझसे मिलने भी आया। वे तुरन्त गोपि को अपने घर ले गये। इस तरह दोनों गुरु-शिष्य की पहली मुलाकात हुई। उस समय डॉ.सी.नारायण रेड्डी ‘स्रवंति’ नामक पत्रिका (जो अभी भी प्रकाशित हो रही है) के तेलुगु संपादक थे। उस समय तक उस पत्रिका में गोपि द्वारा लिखित कविता ‘कन्नीरु’ (आँसू) और दो-तीन कविताएँ भी प्रकाशित हो चुकी थीं। इसके अलावा नौवीं कक्षा में ‘रासलीला’ नामक गेय-पद्य कविता-

संकलन जो 'देवरेड्डी वेंकटरेड्डी' द्वारा लिखा गया को पढ़कर उन्होंने रचनाकार को भी एक खत लिखा। वेंकटरेड्डी ने भी प्रत्युत्तर में एक खत लिखा। उसके बाद उनसे भी मिलने के लिए उन्होंने दोबारा अपना गुल्लक फोड़ा और भुवनगिरी से बोल्लारम आये और उनसे मिले। इन दोनों के बीच में कविता के रूप में गीतात्मक संवाद खत के रूप में लिखे जाते रहे।

बाल-रचनाकार एन.गोपि में नायकत्व के लक्षण बचपन से ही विद्यमान थे। इसलिए वे पाठशाला के लिटररी सेक्रेटरी लीडरशिप के रूप में चुने गये। उस समय उनकी पाठशाला में कुल मिलाकर 1200 वोटों में से इनको 990 वोट मिले। क्योंकि एन.गोपि स्कूल में अच्छा भाषण देते थे और ढेर-सारी कविताएँ लिखते थे। इसके प्रभावस्वरूप कई विद्यार्थियों के साथ जुडने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ।

दूसरा अनुभव- एन.गोपि के गाँव से 8 मील दूरी पर 'यादगिरि गुट्टा' ब्रम्होत्सव मेला प्रतिवर्ष मनाया जाता है। इस लोकोत्सव का असर इनके बाल-मानस पर अत्यधिक पड़ा। आज भी इनकी रचनात्मक प्रेरणा की विषय-वस्तु इसी मेले से प्रभावित परिवेश से निकलकर इनकी रचना का हिस्सा बनी है। इस लोकोत्सव में विभिन्न संस्कृतियों, संप्रदायों, लोक-संगीत और लोक-कलाओं के लोगों का जीवन-दर्शन मुखरित होता है। इस स्थानीयता के प्रति आत्मीयता और लगाव के कारण एन.गोपि के रचना-कर्म में स्थानीय-बोध, अनुभव का अनुभूति में विलयन देखा जा सकता है। इनका मानना है कि "यदि मैं हमारे गाँव में प्रदर्शित हरिकथाओं को नहीं सुनता था तो मैं इतना बड़ा कवि नहीं बनता।"[63] गोपि जब भी हरिकथा सुनने के लिए जाते थे, साथ में एक छोटा-सा नोट बुक ले जाते थे और वहाँ जो भी कठिन शब्द अर्थात् जो शब्द समझ में नहीं आता था,

[63] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.56 (नदी, मास पत्रिका, अप्रैल 2009)

उस शब्द को लिखकर घर आने के बाद शब्द-कोश में देखते थे। उदाहरण के लिए 'चषकमु', 'पीयूषमु' दो शब्दों का अर्थ जानकर अपनी कविता में 'उत्पलमाला' में प्रयोग करते थे। उन दिनों में गोपि के गाँव में साहित्यिक वातावरण बहुत कम था। इसलिए गोपि अपने मित्रों को घर बुलाकर चाय पिलाते हुए, कविताएँ सुनाया करते थे। "इनका मानना हैं कि जब श्रोता ही नहीं है तो, अक्षरों के पौधे नहीं उगते हैं।"[64] इसलिए अपने मित्रों को धन्यवाद कहकर भेजते थे। गोपि अपने गाँव में हर गली में घूमते थे।

तीसरा अनुभव- अपने जीवनानुभव को मानते हैं। इनकी पारिवारिक समस्याएँ जटिल और आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं थी। इसके अलावा इनके इलाके में पानी का संकट अत्यधिक था और जो पानी उपलब्ध हैं वह फ्लोराइड से युक्त है। पेयजल के लिए इनकी अम्मा को बचपन में दो किलोमीटर दूर से पानी लाना पड़ता था। फ्लोराइडयुक्त पानी के उपयोग की वज़ह से तेलंगाना क्षेत्र के लोगों के जीवन पर इसका प्रतिकूल असर पड़ा। इन सभी कारणों से कविता लिखने की व्याकुलता ने इनके मानस-पटल को प्रभावित किया।

गोपि ने बारवीं कक्षा तक लगभग तीन-चार हज़ारों पुस्तकों का अध्ययन कर लिया था। बारहवीं उत्तीर्ण होने के बाद इनको इंजिनीयरिंग में प्रवेश मिला था। उन दिनों में गाँव के इक्का-दुक्का बच्चों को ही इंजिनीयरिंग में प्रवेश मिलता था। लेकिन बचपन से इनको डॉ.सी.नारायण रेड्डी जैसे कवि बनने का शौक था। इन्हें लगता था कि डॉ.सी.नारायण रेड्डी बी.ए. पढ़कर कवि बने थे। इसलिए कवि बनने के लिए बी.ए. करना अनिवार्य है और तेलुगु शिक्षक बनने का भी शौक था। कविता लिखे हाथों से गणित करना इनसे हो नहीं पाया। इन कारणों से गोपि ने अपनी इंजिनीरियंग छोड़कर

---

[64] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.58 (नदी, मास पत्रिका, अप्रैल 2009)

बी.ए. पढ़ने के लिए उस्मानिया विश्वविद्यालय गये, तब तक उस्मानिया में प्रवेश लेने की अंतिम तिथि समाप्त हो चुकी थी। लेकिन डॉ.सी.नारायण रेड्डी के कहने पर एन.गोपि को प्रवेश मिल गया। बी.ए. (1967-71) में तेलुगु, संस्कृत एवं लिंग्विस्टिक्स (भाषाविज्ञान) इनके विषय रहे। इस तरह इनका डिग्री की पढ़ाई हैदराबाद में हुई। लेकिन उसी समय गोपि के पिताजी का देहांत हुआ। इस वजह से इन पर आर्थिक संकट आ पड़ा था और यह डर सताने लगा कि कहीं शिक्षा बीच में ही न छूट जाये। इसलिए गोपि ने ट्यूशन पढ़ाते हुए अपना खर्च उठाया था। इस तरह इन्होंने पूरी डिग्री की पढ़ाई में टूशन्स पढ़ाया और कुछ महिने एक दुकान में एक महिने में 15 रूपये के लिए काम किया था। बी.ए. में अच्छे अंक पाने से इनको 'निजाम्स स्वर्ण पदक' भी प्राप्त हुआ और इसी मेरिट के आधार पर 'नेशनल मेरिट स्कॉलरशिप' भी मिला है जो एम.ए. (1971-73) पढ़ने में सहायक बना। स्नातक स्तर पर पूरे उस्मानिया विश्वविद्यावय के विभिन्न विषयों के स्वर्ण पदक प्राप्त छात्रों में से बारह छात्रों के चयन में इन्हें छठवाँ स्थान (लूमिनियस रैंक) प्राप्त हुआ। गोपि में पढ़ाई के साथ-साथ दूसरों का अनुकरण (मिमिक्री) करने की अच्छी कला थी। डिग्री में 'स्वागत समारोह', 'विदाई समारोह' एवं 'हास्टल-डे' आदि कार्यक्रमों में न केवल सहपाठियों का अनुकरण करते थे, बल्कि कई प्राध्यापकों का और अन्य प्रमुख व्यक्तियों का अनुकरण करते हुए, उनकी तरह नकल करते हुए सबको आनंदित करते थे। इनके द्वारा किया गया तेलंगाना भाषा शैली में 'सत्यनारायण व्रत कथा' और 'पन्नेंडु डब्बाला पासिंजरु' नामक गाना अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनके मिमिक्री से प्रभावित उन दिनों में प्रो.भद्रिराजु कृष्णामूर्ति अपने घर बुलाकर मिमिक्री करवाके आनंद लेते थे।

उसी विश्वविद्यालय में इन्होंने एम.ए., पी.जी.डिप्लोमा इन लिंग्विस्टिक्स की डिग्री प्राप्त की। स्नातकोत्तर स्तर पर भी इनको स्वर्ण पदक मिला। एम.ए. की रिजल्ट्स आने से पहले ही इनको 'यूनिसेफ्' में 'नॉन-फॉर्मल एड्युकेशन प्रोजेक्ट' के रूप में नौकरी मिली। उस समय इनका पोस्टिंग था महबूबनगर जिले में पचास गाँवों का इनचार्ज के रूप में। उसी समय अकाल पड़ा था। तब इनको तेलंगाना में अकाल से पीड़ित गाँवों को प्रत्यक्ष रूप से देखने का अवसर मिला। उन लोगों की दयनीय स्थिति को देखकर कवि का हृदय द्रवित हुआ। कई कविताएँ अकाल और गरीबी पर उसी समय लिखी गयी हैं। उनमें प्रमुख रूप से "अंगि बरुवय्यिंदि अन्नमु वेगटय्यिंदि"[65] नामक कविता अत्यंत मर्म-स्पर्शी है।

उसके बाद गोपि ने हैदराबाद में चारमीनार के पास स्थित चारकमान पत्तर गट्टी में 'नानक राम भगवानदास कॉलेज' में लेक्चरर के रूप में काम किया। इसी बीच में वेमना पर शोध-विषय को चार साल में पूरा करके पीएच.डी. डिग्री प्राप्त की। इनका शोध-विषय अत्यंत प्रामाणिक माना गया है। यहाँ साढ़े छः साल काम करने के बाद सन् 1981 में उस्मानिया विश्वविद्यालय में लेक्चरर के रूप में नियुक्त हुए और इसके बाद में रीडर, प्रोफेसर, डीन, फैकल्टी आफ आर्ट्स, तेलुगु विभागाध्यक्ष..... पोट्टि श्री रामुलु तेलुगु विश्वविद्यालय के उपकुलपति तक इनका कार्यक्षेत्र रहा।

गोपि ने अपने एम.ए. की सहपाठी अरुणा से शादी की। उन दिनों में ही जाति, गोत्रम् को बाजू में रखकर दोनों ने प्रेम-विवाह कर लिया। श्रीमति अरुणा भी गोपि की तरह तेलुगु-साहित्यिक क्षेत्र में जानी-मानी कवयित्री है। इस तरह दोनों रचनाकारों ने तेलुगु साहित्य जगत् को कई महत्वपूर्ण कृतियाँ समर्पित कीं। लेकिन परिवार भार के

[65] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.58 (नदी, मास पत्रिका, अप्रैल 2009)

कारण श्रीमति अरुणा ने लम्बे समय बाद काव्य-रचना करना शुरु किया। एन.गोपि की कविताओं का पहली श्रोता, आलोचक एवं प्रशंसक सभी श्रीमति अरुणा ही हैं। वर्ष 2004 में "नवरस युक्त मौनमु माट्लाडुतुंदि" कविता संकलन से लेकर "सूदि ना जीविता सूत्रम्" तक लगातर छः कविता संकलन प्रकाशित की। एन.गोपि के मार्गदर्शन से दूरदर्शन में "मा तेलुगुतल्लिकि"[66] नामक एक सफल कार्यक्रम चलाया था जिसमें आधुनिक तेलुगु साहित्य का आगमन को काल के अनुसार विभाजित करते हुए, एक-एक प्रक्रिया को लेकर चर्चा करते हुए, उससे संबंधित प्रमुख कवि तथा लेखकों को परिचय कराते थे। यह कार्यक्रम लगातार 13 सप्ताह तक चला था।

एन.गोपि के साहित्यिक जीवन में दो महत्वपूर्ण अंश दिखाई पड़ते हैं। एक है- विलक्षण रूप से कविता लिखने की शैली। उदाहरण के लिए नानीलु कविता शैली। दूसरा विशिष्ट रूप से शोध करने की प्रवृत्ति। उदाहरण के लिए इनके द्वारा कवि वेमना पर किया गया शोध इनके उपनाम (वेमना गोपि) पड़ गया। इसके साथ इनके साहित्यिक कृतियों में स्मृति-कविताएँ अधिक हैं। माँ का एक अद्भुत संसार है, माँ प्रत्यक्ष दैव के समान है, परिवार में, समाज में, साहित्य में, वास्तविक जीवन में, सारा संसार में माँ का जो स्थान है वह निरुपमान है। अपनी माता जी के स्मृति में एक अच्छी कविता लिखी जो इस प्रकार है-

"भ्रष्टुडा!
अम्मा रुणम् तीरदु-
अम्मकु अम्मनै पुडिते तप्प
अम्मा ओ पट्टाना चावदु

[66] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.12

कालुतुन्ना काष्टंलोंचि
वेलुगुलु प्रसारम् चेस्तूंदि।”[67]

अर्थात् अरे मूर्ख ! माता का ऋण तब चुक जाता है जब माँ को माँ के रूप में पैदा होने से। माँ कभी मरती नहीं है, वह जलती हुई चिन्गारियों से रोशनी प्रसार करनेवाली है। इनकी बेटी ही की स्मृतियाँ, अपना एक शोधार्थी मर गया था उस समय, और अपने मित्र, गुरु एवं समकालीन के प्रति कई स्मृति कविताएँ इन्होंने लिखी हैं।

इनका 60 साल की षष्टिपूर्ति महोत्सव (25 जून, 2010) को मनाया गया। इस महोत्सव के अवसर पर डॉ.एन.गोपि ‘षष्ट्यब्दिपूर्ति अभिनंदन संचिका’, ‘अक्षरा’ शीर्षक से प्रदान संपादक ‘मद्दलि रघुराम’ और सहसंपादक के रूप में ‘अन्नवरम देवेंदर’, ‘डॉ.नीरजी जव्वाजी’, ‘डॉ.के.सत्तय्या’, ‘डॉ.पोरेड्डी रंगय्या’, ‘डी.अच्युता रामय्या’ ये सब मिलकर गोपि द्वारा लिखित 15 कविता-संग्रहों को “गोपि कवित्वं (1967-2009)” नाम से तीन संकलनों में प्रकाशित किया और गोपि द्वारा लिखित 28 ग्रन्थों को “गोपि साहित्य विवेचन” नाम से विविध साहित्यकारों से 28 लेखों का संकलन और इनके द्वारा हाल ही में लिखित “मा वूरु महाकाव्यम्” ग्रंथों का प्रकाशन किया गया। इसके साथ-साथ 37 विशेष व्यक्तियों का गोपि से संबंध एवं अनुभवों के लेखों को संग्रहित करके भेंट दिये। और इनके काव्य-कृतियों को अनूदित किये 27 अनुवादकों ने भी गोपि “कवित्वम्-अनुवादकुला स्पंदनलु (Gopi`s Poetry Experience of Translators)” शीर्षक से

[67] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.18 (दिल्ली, तेलुगुवाणी, 2000)

संपादक. 'प्रो.एस.वी.सत्यनारायण' और सहसंपादक 'श्रीमति आर.शांता सुंदरी', 'श्रीमति पी.जयलक्ष्मी', 'प्रो.रहमत यूसुफ झाई' द्वारा संपादित अनुवादकों का अनुभव तेलुगु, हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू भाषाओं के अनुभूतियों को एक पुस्तक के रूप प्रकाशित करके गोपि को भेंट दिये हैं। इस संकलित पुस्तक का खूबी यह है कि जो दो अनुवादकों ('निरंजन हरिश्चंद्रा उजगरे', 'प्रो.जियस मानतीन') जिनका स्वर्गवास हो चुका हैं उनको यह पुस्तक समर्पित की गयी है। उपर्युक्त दो पुस्तकों में गोपि से उनका अनुभव और गोपि के कुछ महत्वपूर्ण चित्र-संकलन तथा साहित्यक कृतियों की सूची भी दी गयी हैं। इस तरह इन्होंने 'प्राध्यापक-प्रशासक-कवि' तीन महत्वपूर्ण भूमिका निभायी हैं। लेकिन इनका मानना है कि कवि के रूप में जो अनुभूति मिली हैं वह प्राध्यापक और प्रशासक के रूप में ख्याति तो मिली है लेकिन आनन्द नहीं।

2.3. साहित्य-सृजन

डॉ.एन गोपि मूलतः कवि हैं। इसके साथ-साथ साहित्य की अन्य विधाओं में भी उन्होंने अपनी साहित्य-साधना की है। गोपि तेलुगु जगत में शोधकर्ता, अनुवादक, लेखक, निबंधकार, यात्रा-साहित्य के लेखक, पत्रिका संपादक, स्तंभ-लेखक और भूमिका लेखक के रूप में ख्यात हैं। इनके अनेक कविता-संग्रहों का भारतीय भाषाओं के साथ अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। आपके लेखन से तेलुगु-जगत के साथ-साथ अन्य भारतीय एवं अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं के पाठक सुपरिचित हैं। अभी तक इनके द्वारा लिखी गयी 45 साहित्यिक रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। इनमें से 21 कविता-संग्रह हैं, छः आलोचनात्मक ग्रन्थ हैं, पाँच यात्रा-वृत्तांत हैं, चार शोध ग्रन्थ हैं, पाँच अनुवाद ग्रन्थ तथा चार अन्य ग्रन्थ हैं। इनके द्वारा लिखित हर कविता-संग्रह पर इन्हें पुरस्कार मिले हैं।

कविता इनके स्वभाव का एक अभिन्न अंग है। अनायास ही कहीं किसी तार का टूटना उसका गुण है। कविता जब मुँह फेर लेती है तो एन.गोपि तड़प उठते हैं। वे जिस मानव के दर्शन करता है वहीं इनकी कविता का केंद्र-बिंदु है।

"छूने से कविता को
स्पर्शानुभूति होनी चाहिए मनुष्य की तरह।
नसों में प्रवाहित होनेवाले रक्त – पुष्पों का
गर्म छुअन महसूस होना चाहिए।"[68]

एक समय था जब अत्यधिक संख्या में अनेक प्रकार के आंदोलन चल पड़े थे। उसी दौरान उन सबको आत्मासात करके उन परिणामों को समझते हुए कवि के रूप में इनका विकास हुआ। एक प्रकार से इनकी कविता समन्वयकारी है। समन्वय से जो जीवन-स्तर उत्पन्न हुआ, उसी में से इनका मानव उठ खड़ा हुआ। यह मानव आधिपत्य का विरोध करनेवाला था। उसके भाव देश से शुरू होकर विश्व तक विकसित हो गए। वह अमानवीयता पर अनंत युद्ध की घोषणा करनेवाला मनुष्य था। बाज़ारवादी संस्कृति में आगे मानव की जो हानि होनेवाली थी उसे पहले से देखकर सबको सावधान कर दिया था। कविता को अंतर-बहिर्युद्ध समझता था। बाहर-भीतर आते-जाते इनकी कविता ने समन्वय प्राप्त कर लिया। एन.गोपि ऐसा कवि नहीं है कि इन पर कोई छाप लगाई जा सके, फिर भी अगर कोई इनके प्रगतिशील-मानवतावादी कवि कहे तो इन्हें कोई अपत्ति नहीं होगी। समन्वयकारी कवि कहेंगे तो बुरा नहीं मानेंगे।

[68] साहित्य अकादमी का पुरस्कार स्वीकार करने के बाद 20 फरवरी, 2001 को आयोजित लेखक – गोष्ठी में डॉ.एन.गोपि द्वारा दिया गया भाषण।

कविता इनके लिए वेदना से भरी एक रासायनिक प्रक्रिया है। वेदना इसलिए कि संक्लिष्ट मानव-व्यवहार में उतरकर, तैरकर बाहर निकलना पड़ता है। कविता इनकी दृष्टि में एक छलनी है, एक छान है, छानने का एक कपड़ा है।

"अनुभवों के महान चित्रों के रंगों से

प्रभावित होनेवाला लिट्मस काग़ज़ है जीवन।"[69]

इसीलिए अक्षरों को ज़ंजीरों में बाँधना वे सह नहीं सकते। कविता में प्रतिस्पर्द्धा इनको पसंद नहीं। अपना बड़प्पन साबित करने के लिए वे कविता की रचना नहीं करते। विनम्रता से वे यही कहना चाहते हैं कि मेरी प्रत्येक कविता अपने अनुभवों को पूरी तरह कह सुनाने में सफल होती है।

"अनुभवों को व्यक्त करने के संघर्ष में

हार जाने के रक्त – चिह्न हैं मेरी कविताएँ।"[70]

इसीलिए वे अपनी हर एक कविता को नये सिरे से लिखनेवाली प्रवेश-परीक्षा मानते हैं। सारा जीवन किसी भी कविता में समा नहीं सकता। जिस कविता की रचना वे करना चाहते हैं, उसके लिए जीवन-भर तपस्या करनी पड़ेगी। तब तक यह संघर्ष जारी रहेगा। वे यात्रा के कवि हैं। यात्रा के दौरान टुकड़ों में बाँटकर वे फिर से अपने में पहुँच जाते हैं। यात्रा करते समय वे सिर से पाँव तक कवि बन जाते हैं। मनुष्य के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं।

"चाहे जितनी नक्काशी कर लो

फिर भी लकड़ी से जंगल का गुण नहीं जाता

---

[69] वही, पृ.सं. वही

[70] वही, पृ.सं. वही

मेरी कविताएँ ही मुझे मानव मानव मानव बनाती हैं।"[71]

"चाहे जितने भी मंत्र – तंत्र करूँ

मेरी कविताएँ घमंड नहीं करतीं

ज़रा – सा शर्माती हैं

पर डर उनके स्वभाव में है ही नहीं।"[72]

शर्म इनकी सामाजिक पृष्टभूमि से आई। साहस भी वहीं से आविर्भूत हुआ। साहस वह मोती है जो अपने सत्य के अन्वेषण में इन्हें मिला था, और शर्म इनका यथार्थ है। इसी गुण के कारण इनकी कविताएँ हिपोक्रसी से रहित प्रकाश को प्राप्त कर सकी हैं। इनका विश्वास हैं कि जो भी कहना है, जैसे भी कहना है उसमें सच्चाई का होना आवश्यक है।

बचपन के इनके अध्यापकों तथा अच्छे मित्रों ने इनके काव्य-व्यक्तित्व का गठन किया था। इसीलिए इनकी कविताओं में नोस्टाल्जिया अधिक देखने को मिलता है। इनका मानना हैं कि यह नोस्टाल्जिया कमज़ोरी नहीं है, बल्कि यह पीढ़ियों के बीच पुल का काम करता है। अतः इनकी कविता कैलंडरों से परे नहीं है। परिणामों से अछूत भी नहीं है। वे स्वप्निल कवि हैं। इनके सपने इन्हीं के ही मिट्टी में खिलनेवाले हैं। मिट्टी के गंध इनकी कविता का प्रमुख गुण है। जल-रहित शुष्क धरती पर जन्म लेने के कारण पत्थरों के ढेर ही इनके दोस्त थे। उन्हीं में इन्होंने नदियों को देखे। आँसूओं की जलधाराओं का अनुभव पाये। आंध्रप्रदेश के जिस दक्षिण तेलंगाणा प्रांत से वे आये हैं वह पहाड़ों पर

[71] वही, पृ.सं. वही

[72] वही, पृ.सं. वही

आँसूओं से भीगे वस्त्र सुखाता है। इसी कारण इनकी सारी जड़े अपने गाँव में ही हैं। एक प्रकार से हर एक कवि की कविताएँ भी उसकी अपनी भावनात्मक आत्मकथा होती हैं। इनका मानना है कि अपनी कविताएँ भी उसी तरह एक व्यक्तिगत, सामाजिक सम्मिलित प्रक्रिया का रूप धारण कर चुकी हैं। इनके और अपने काव्य-जीवन को प्रभावित करनेवालों में न केवल महान साहित्यकार बल्कि साधारण मनुष्य भी रहे हैं। तथाकथित निरक्षरों के रूप में जो मेधावी हैं, उन्होंने भी इनको प्रभावित किया है। इन्होंने देखा हैं कि किसी महान ग्रंथ में लिखित सूक्तों को आम आदमी स्वाभाविक रूप से मिट्टी से उछाल सकते हैं।

कविता-संग्रह इस प्रकार से हैं- पहली रचना 1976 में 'तंगेडुपूलु' (Yellow Flowers) नामक कविता-संग्रह है। धनवान न छू पाने सिर्फ गरीब लोग छूने वाले फूलों को उन्होंने कविता के वस्तु के रूप में इसमें लिया है। उन फूलों का नाम इस संग्रह का शीर्षक भी बन गया। तंगेडुपूलु ग्रामीण जीवन का प्रतिरूप माना जाता है। ये फूल गरीबी और मिट्टी के जीवन का दूसरा है। तेलंगाना क्षेत्र का हर बच्चा बचपन से ही 'तंगेडुपूलु' परिचित होता है।

गोपि कहता है-

"तंगेडुपूलु अंटे ओप्पुकोनु

बंगारुपूलु

पोंगिना विचाराग्नि

दिगमिंगिना पूलु

वेला गलिगिना गुलाबीलकन्ना

वेललेनि ई पूलु मेलु"[73]

अर्थात् ये जो फूल हैं तंगेडुपूलु कहे तो मैं नहीं मानूंगा, ये सोने के फूल हैं। भीतर से आये हुए पीड़ा को समालेने वाला फूल हैं। बहु कीमती गुलाब के फूलों से ये फूल बेहतर हैं। 1981 में 'मैलुरायि' (Mile Stone) लिखा है जिसमें मानव-जीवन के मील का पत्थर की कई घटनाओं को इसमें भावुकता से जोड़ा है। 'चित्र दीपालु' (Colored Lights) लिखे हैं। इसमें 34 कविताएँ हैं। इस कविता संग्रह में प्रतीकों, भाव चित्रों को आकर्षक ढ़ंग से अभिव्यक्त किया गया है।

1993 में 'वन्तेना' (The Bridge) कविता संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें जीवन और मरण के बीच के अटूट संबंध को, एक रेखा को प्रतीक के माध्यम से प्रस्तुत किया है। 1998 में 'कालान्नि निद्र पोनिव्वनु' (I will not let time to sleep) समय को सोने नहीं दूंगा... कहकर शपथ ली है। कवि की शुभ भावना शीर्षक से ही प्रकट होती है। सच कहा है कि जिसका वक्त ही सो गया उसके लिए कुछ रहता ही नहीं। इसलिए 'समय को सोने नहीं दूंगा' की कविताओं में कवि ने समाज, गाँव, रास्ते, आंगन, सरोवर, बेटी और माता-पिता, चिट्ठी से जुड़े रिश्तों को जागृत किया है। ऐसा करके कवि ने समाज को और समय को सोने नहीं देने का कार्य किया है। इस पुस्तक में संग्रहित बहुत सारी कविताओं में काल की चर्चा की गयी है। कुछ समय के लिए समय को हराने वाले आदमी इसमें नायक हैं। काल के साथ किये गये संघर्ष इस कविता संग्रह के अंतःसूत्र हैं। यह कविता-संग्रह बहु-चर्चित रहा है। इस पर इन्हें वर्ष-2000 में केन्द्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार

[73] अक्षरा, प्रधान संपादक. मद्दालि रघुराम, पृ.सं.18 (दिल्ली, तेलुगुवाणी, 2000)

मिला है। यह दो बार पुनः प्रकाशित होकर हमारे सामने आया है। स्वयं एन.गोपि ने ऐसा कहा है कि 'इस काव्य-संग्रह की कविताएँ मन के अचेतन का वर्णन करनेवाली कविताएँ हैं।'[74] प्रकृति का वर्णन है, प्रादेशिक विशेषता दर्शाने वाली कविताएँ (ब्लोआउट, एपिटाफ़, पत्थर आदि) आज-कल के भूमण्डलीकरण के युग में देशीय भावना वैश्विक स्तर पर पहुँचाने का बड़ा महत्वपूर्ण कार्य अपनी कविताओं के माध्यम से एन.गोपि ने किया है। समय के अनेक पहलुओं के दर्शन इन कविताओं में होते ही हैं, लेकिन कवि की सकारात्मक दृष्टि के कारण वे समय से हार नहीं मानते। समय से लड़ना चाहते हैं और इस संघर्ष में जो सुख उन्हें होता है वही कवि की जिजीविषा का प्रतीक है। कवि की दृष्टि जीवन से डरकर भाग जाने की, पलायनवादी नहीं है उनका जीवन हवा के साथ तलवार चलानेवाले अखंड दीप की तरह है। कुछ कविताओं में कवि की भावनात्मक आत्मकथा दिखाई देती है। इस काव्य-संग्रह समय के अनेक पहलूओं को प्रतिबिंबित करता है। इसमें आर्ति, वेदना और व्याख्या है। इनके अनुसार ये कविताएँ एक प्रकार से अचेतनावस्था (Trance) में लिखी गयी। इस काव्य-संग्रह की रचना के कुछ समय पहले 17 साल की इनकी बेटी की मृत्यु हो गई थी। वे पाताल में गिर गये थे। बड़ी मुश्किल से ऊपर चढ़कर, धरती पर रेंगते हुए, समय से सवाल करते हुए, लिखी गई कुछ कविताएँ इस संग्रह में हैं। व्यक्तिगत दुख सामान्य धरातल पर आकर विश्वदुख के पास किस प्रकार पहुंच जाती है, इसी से संबंधित दृश्य इस संग्रह में दिखाई देंगे। यह संग्रह इनके मनुष्य के क़रीब ले गया। 'मेरी बेटी' (मा अम्मायी), 'गायम् गायमे', 'चच्चिपोतुन्न उत्तरम्', 'मृत्यु दुःखम्' पढ़कर पाठक की आँखे नम हो जाती है। यह काव्य-संग्रह लगभग 22 भारतीय

[74] साहित्य अकादमी का पुरस्कार स्वीकार करने के बाद 20 फरवरी, 2001 को आयोजित लेखक-गोष्ठी में डॉ.एन.गोपि द्वारा दिया गया भाषण।

एवं विदेशी भाषाओं में अनूदित हैं, जो इस प्रकार है- हिंदी, बोड़ो, संथली, ओडिया, मणिपुरी, बंगाली, मैथिली, कश्मिरी, राजस्थानी, संस्कृत, उर्दू, तमिल, गुजराती, मराठी, कोंकणी, सिन्धी, अस्समी, मलयालम, कन्नड़, पंजाबी, डोंगरी भाषाओं के साथ नेपाली, अंग्रेजी भाषा में अनूदित हुआ है।

1998 में 'नानीलु' (Epigrams) (नन्हे मुक्तक) कविता-प्रक्रिया का प्रयोग आधुनिक तेलुगु काव्य-जगत् में 20 वीं शती के अंतिम दशक से नवीन प्रवृत्ति की सृष्टि है। इसी काव्य-संग्रह से गोपि ने हिंदी जगत में प्रवेश किया। नन्हे मुक्तकों के रूप में रूपायित होकर तेलुगु 'नानीलु' ने न केवल पाठकों का हृदय स्पर्श किया अपितु तेलुगु साहित्यिक जगत् के युवा और प्रौढ़ कवियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। 'नानीलु' ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुए अभी पूरे ग्यारह साल नहीं हुए, लेकिन सैकड़ों कवि इस नए छंद को अपनाकर कविताएँ लिखने लगे हैं। एक सौ से भी अधिक नानीलु के संकलन प्रकाशित हुए हैं। पत्र-पत्रिकाएँ अलग स्तंभ निर्धारित कर नानीलु के प्रचार में जुटी हुई हैं। इनके नन्हे मुक्तक उस समय की 'वार्ता' पत्रिका के संपादक ए.बी.के. प्रसाद जी ने 365 नन्हे मुक्तकों को संपादकीय पृष्ठ में लगातार 20 सप्ताह तक प्रकाशित हुए। नन्हे मुक्तकों में अधिकतर गाँव के जीवन की परिस्थितयाँ प्रतिबिंबित होते हैं। इस तरह नानीलु के कारण एन.गोपि तेलुगु कविता के क्षेत्र में ट्रेंड सेटर के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे हैं। छोटी कविताएँ इसके पूर्व भी तेलुगु में प्रचलित रहीं। गत शती के 1980 के दशक में 'मिनी कविता' के नाम से छोटी कविताओं का ज़ोर रहा जिन की काव्य-वस्तु प्रमुखतः सामाजिक होती थी। 1990 दशक में 'हाईकू' कविता का ज़ोर रहा है जिसकी वस्तु प्रकृति-सौंदर्य और दार्शनिक रही। 80 और 90 दशकों के बीच एक और नया प्रयोग तेलुगु

कविता के शिल्प में हुआ। वह था- डॉ.सी.नारायण रेड्डी के द्वारा पाँच चरणों में रूपायित 'प्रपंच पदुलु' छंद-विधान, जिस ग्रंथ के हिन्दी अनुवाद से प्रभाव ग्रहण कर मणिपुरी कवियों ने अपने काव्य में पाँच चरणों के नए छंद को प्रवेश कराया। 90 दशक के अंत में एन.गोपि ने, जो मिनी कविता के सिद्धहस्त कवि माने गए, मिनी कविता एवं हाइकू दोनों प्रक्रियाओं को सम्मिलित कर एक नये देशी छंद विधान का निर्माण किया है, वही 'नानीलु' है। ये जापानी हाइकू की तरह की कविताएँ हैं। मगर जापानी हाईकू जापानी हैं, उनमें से इतना आनंद नहीं पाया जाता, जितना 'नन्हे मुक्तक' से पाया जाता है। इसकी वज़ह खास यह है कि ये रचनाएँ शुद्ध भारतीय हैं, और भारतीय शैली में लिखी गई हैं। ये चौपाई होती है। नानीयों की परंपरा में अब तक 15 काव्य-संग्रह निकल चुके हैं। और भी लोग नानीयों का अनुसरण करते हुए रचनाएँ कर रहे हैं। आजकल इस विधा को एक महान प्रयोग माना जा रहा है। इस कविता रूप के आविष्कर्ता, सृष्टिकर्ता, ट्रेण्ड सेटर, प्रवर्तक सब कुछ एन.गोपि ही है। तेलुगु में सामान्य पाठक से लेकर साहित्यकारों तक, सभी ने कविता की इस रूप-प्रक्रिया का स्वागत किया, आदर किया और प्रशंसा की। तेलुगु में नन्हे-मुक्तकों की इस रूप-प्रक्रिया का अनुसरण आज दो सौ तीस से अधिक कवि करते आ रहे हैं और लगभग उतनी ही पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं। इनमें एस.रघु, सी.भवानी देवी, नूटेंकी रवींद्र, अन्नवरम् देवेंदर, पत्तिपाका मोहन, नलिमेला भास्कर, अरुणा, सूर्य धनुंजय, वाई. रामकृष्णराव आदि प्रमुख हैं। अभी तक नानीलु का हिन्दी, मराठी, अंग्रेजी, संस्कृत, तमिल, कन्नड़, रूसी, गुजराती, उर्दू और मलयालम, पंजाबी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। इतना ही नहीं, बल्कि नन्हे मुक्तकों पर आंध्र विश्वविद्यालय में चिंतकिंदि श्रीनिवास राव ने प्रामाणिक पीएच.डी. की एवं सिद्धांत ग्रंथ

भी लिखे इसके साथ ही केंद्र सरकार के केंद्र मानव संसादन केंद्र ने चलपाका प्रकाश को फेलोशिप भी दी थी।

2000 में 'चुट्टा कुदुरु' (Pot Stand) यह भी दो बार प्रकाशित हुआ है। 2001 में 'एंडा पोडा' (Sunlight), 'गोपि नानीलु' (गोपि के नन्हे मुक्तक) द्वितीय संग्रह हैं। इस संग्रह में कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के कुल दिनों जैसा।) इसमें एन.गोपि की ढेर सारी अनुभूतियाँ मिलती हैं। मन का चित्रण, मनुष्य का चित्रण, राजनीति, साम्यवाद, मानव-जीवन के वैविध्य का अत्यन्त गहराई के साथ चित्रण किया गया है। कुछ मुक्तकों में स्त्री और स्त्रीवादी तत्व उल्लेखनीय हैं। प्रतीकात्मता प्रशंसनीय है। सामाजिक चेतना अवलोकनीय है। सीमित अक्षर-सम्पदा में असीम भाव-संपन्नता की सृष्टि, एक और विशेषता है। यह भी हिन्दी और उर्दू दो भाषाओं में अनूदित हैं। ये सारे नन्हे मुक्तक जब गोपि वरंगल काकातीय विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे, उसी समय वरंगल से हैदराबाद आते-जाते कॉर में बैठे-बैठे लिखे गये थे।

इसी साल में 'जलगीतम्' (Water Song) दीर्घ कविता आपका सर्वश्रेष्ठ काव्य-संग्रह है। कवि एन.गोपि की यह महात्वाकांक्षी लंबी कविता। एन.गोपि गोपि का काव्य-कौशल, तत्वदर्शन, मानवतावादी अभिगम, अभिनिवेश और उनके कवि-रूप की प्रकट-प्रच्छन्न अदाएँ में जलगीत से अनुभव करता रहा। जलगीत अपने आप में एक अनूठी कविता है। इसमें है- जल-चेतना का काव्यात्मक आविष्कार। जल के विभिन्न रूपों की सुचारू छवि तो इसमें है ही, साथ में जल-तत्त्व की दार्शनिक धारा का निखार भी इसमें पाया जाता है। कविता में योजित उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि अलंकार और ताज़गी भरी कंपन कवि के काव्यात्मक आविष्कारों का सुफल है। यहाँ मनुष्य चेतना का जल चेतना के साथ अनुसंधान है। और उनसे जुड़े प्रकृति-संस्कृति और विकृति के विभिन्न

पहलुओं का विश्लेषण करना भी कवि ने चाहा है। यह कविता समर्पित की गयी है जल चेतना को उज़ागार करनेवाले जल-नायक राजेंद्रसिंह को। राजेन्द्रसिंह का जल-आंदोलन और उनके साथ जुड़ा लहू-संबंध से भी गहरा जल-संबंध भी कविता की धारा में प्रवाहित होता हुआ दिखाई देता है और कभी-कभी कविता जल-जागरण के अभियान का रूप लेती दिख पड़ती है। इस विलक्षण कविता में कवि ने जल-तत्त्व के आदि रूप से लेकर वर्तमान तक के रूपों को निखारा है, जो कवि की सर्जनात्मक गति का परिचायक है। इसमें महान कवि के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। इस रचना का मराठी, हिंदी, अंग्रेजी, उर्दू, पंजाबी, संस्कृत, कन्नड़, मलयालम, ओरिया, फारसी तथा गुजराती भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। हिन्दी में अनूदित 'जलगीत' कृति को 'उत्तम अनुवादिका' पुरस्कार, आंध्रप्रदेश हिन्दी अकादमी की ओर से वर्ष 2008 में मिला है। उर्दू में भी 'उत्तम अनुवादक' पुरस्कार, पोट्टि श्री रामुलु विश्वविद्यालय, आंध्रप्रदेश की ओर से वर्ष 2006 में मिला है। गुजराती में 'केंद्रीय साहित्य अकादमी, दिल्ली' द्वारा 'उत्तम अनुवाद' पुरस्कार वर्ष 2009 में मिला है। तेलुगु में लिखित मूल कृति को 'आंध्रप्रदेश आकाशवाणी' में कवि एन.गोपि द्वारा कविता वाचन कराकर 13 सप्ताह श्रोताओं को सुनाया गया। इसके साथ श्रोताओं में जलस्पृहा लाने का प्रयास किया गया है। 'जलगीतम्' काकतीय, श्रीकृष्णदेवराय विश्वविद्यालयों में एम.ए. पाठ्यक्रम के अंतर्गत रखा गया। इसके साथ ही धारवाड़ विश्वविद्यालय में तथा गुजरात क्रांतिवीर श्याम जी कृष्णवर्मा कच विश्वविद्यालय में भी पाठ्यक्रम के रूप में निहित है। हाल ही में तेलंगाणा के उस्मानिया विश्वविद्यालय भी पाठ्यक्रम के रूप में रखा गया और राजेंद्र सिंह द्वारा स्थापित जल

विश्वविद्याल में भी शिक्षकों के लिए यही पाठ्यक्रम है। 'जलगीतम्' काव्य पर कई विश्वविद्यालों में एम.फिल्., पीएच.डी. का काम चल रहा है।

2004 में 'मरो आकाशम्' (Another Sky) यह अंग्रेजी में अनूदित हुआ है। एन.गोपि जब इंग्लैंड गये, तब वहाँ के एक महिना के अनुभवों को इस संग्रह में लिखा है। 2006 में 'अक्षराल्लो दग्धमै', 2007 में 'दीपम् ओक एकांतम्', 2008 में 'गोवा लो समुद्रम्', इसमें हरी-भरी पहाड़ियों के साथ खेलती हुई बारिश, माण्डवी, जुआरी जैसी हमारे मन को खींचकर अपने दिल के पास रख लेनेवाली लुभावनी नदियाँ, यहाँ के किनारों की चमकीली रेल पर आकर अपनी लहरों को दुलराने वाला समुद्र देखकर कवि की मन खनक उठा है, गूँज उठा है और उनकी ये जल-तरंगें उनके अंतर्मन में से खींच लाई हैं ये कविताएँ। 2009 में 'वान कडिगिन चीकटि' नामक कविता-संग्रह इन्होंने लिखे हैं। 2010 में 'मा ऊरु महाकाव्यम्' (मेरा गाँव महाकाव्य) नामक कविता-संग्रह लिखे हैं, जो हिंदी में 'मेरा गाँव महाकाव्य' शीर्षक से श्रीमति आर. शांता सुंदरी ने किया है। 2011 में 'राति केरटलु' (पत्थर के लहर) कविता संग्रह, 2013 में 'हृदयरश्मि' (हृदय का रश्मी) कविता संग्रह, 2014 में 'मल्ली वित्तनंलोकि' (फिर से बीज में) कविता संग्रह लिखे हैं। 2015 में 'पुरिविप्पिन ऊपिरि' (कविता-संग्रह), 2016 में 'आकाशंलो मट्टि' (आकाश में मिट्टी) (कविता-संग्रह) लिखे हैं।

2.4. शोधकार्य

2008 में नौकरी से रिटाइर होने के बाद, विश्वविद्यालय अनुसंधान आयोग के सहयोग से 'मेजर रीसर्च प्राजेक्ट' के अंतर्गत 'वेमन्न वेलुगुलु' नामक ग्रंथ पूरा किया।

उसके बाद उसी यू.जी.सी. द्वारा 'एमिरिटस प्रोफेसर' के रूप में चुना गया, तो 'समकालीन तेलुगु कवित्वम्' नामक से एक आलोचना ग्रंथ लिखे। उसके बाद फिर से दोबारा यू.जी.सी. द्वारा 'एमिरिटस प्रोफेसर' के रूप में चुना गया था। इस बार 'वचन कवित्वम् व्याख्यान विमर्श सूत्रलू' विषय पर शोध किया। अभी तक एन. गोपि पर लगभग 3 पीएच.डी. और 5-6 एम.फिल् हो चुके हैं और कई जगह शोधार्थी कार्यरत हैं।

एन.गोपि की रचनाओं में चेतना हैं, संजीदगी है। ये रचनाएँ हमारे आसपास और हमसे जुड़ी हैं। हमारी रोटी, कपड़ा, पानी, हवा, आँसू, हमारे गाँव, रास्ते, आँगन, हमारे माता-पिता, बेटी, हमारी मातृ-भाषा, हमारे पहाड़, नदियाँ, कितने प्यारे हैं, उनकी खूबियों का वर्णन पढ़ने से वह और भी प्यारे लगते हैं। उनसे लगाव और मजबूत होता हैं, भावनाएँ जागृत होती हैं, आज का मनुष्य जो अपने आप से दूर होता जा रहा है। वह फिर से अपनी ओर लौटकर आने लगते हैं, इस तरह की भावनाएँ जाग उठती हैं। न कोई उपदेश हैं, न कोई आदेश हैं, मगर कविताओं का अनोखापन ही लुभावना है। बिल्कुल नये अंदाज में लिखी गयी है। इन्हीं बातों की वज़ह से नये अंदाज के कारण ही यह लोकप्रिय हैं।

इनके द्वारा किया गया पाँच आलोचनात्मक कर्म इस प्रकार से है-

1.1986 में 'व्यास नवमी',

2.1992 में 'गवाक्षम',

3.1992 में 'निलुवेत्तु तेलुगु सन्तकम- सी.नारायण रेड्डी व्यक्तित्वम्',

4.1998 में 'सालोचना',

5. 2012 में 'व्यास कलशम्'

6. 2016 में 'व्यास जिज्ञासा'।

इनके द्वारा किया गया अनुवाद ग्रंथ इस प्रकार है-

1. 1985 में 'ज्ञानदेव',
2. 2012 में 'तन्मय धूलि',
3. 2016 में 'मा ऊरि नदि',
4. 2016 में 'पागी',
5. 2016 में 'विद्यापति प्रणयगीतालु'।

एन.गोपि द्वारा किया गया शोध-ग्रन्थ तेलुगु आलोचना के क्षेत्र में विशेष महत्व रखता है। सन् 1980 ई. में किया हुआ यह शोध-प्रबन्ध 'प्रजाकवि वेमना' इतना लोक-प्रिय हुआ कि अभी तक इसके छः संस्करण आ चुके हैं। एन.गोपि ने तेलुगु कवि वेमना पर शोध ग्रंथ लिखा, जो अत्यंत प्रामाणिक माना जाता है। 'वेमना' ने तुकाराम से कहा था- 'मैं आपके लिए तेलुगु का दीप लाया हूँ।' आज "एन.गोपि ने उस दीप में तेल डालकर ज्योति को प्रज्वलित किया है।"[75] कवि वेमना, कबीरदास के समान संत कवि थे। सन् 1990 ई. में गोपि ने पोस्ट डॉक्टरल कार्य 'वेमना पद्यालु' (पैरिस मनुस्क्रिप्ट 1730 ई., पैरिस किंग्स पुस्तकालय से संग्रहित) बाद में संपादित होकर प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात् 1998 में 'तोलि परिशोधकुलु' प्रकाशित हुआ। इसके बाद 2012 में 'वेमन्न

[75] गोपि की कविता, अनुवादकों का अनुभव, सं. प्रो.एस.वी.सत्यनारायण, पृ.सं,143

वेलुगुलु' (व्याख्यान) शीर्षक से प्रकाशित हुआ। यह 'साक्षी' समाचार पत्र में 'फन डे' कॉलम में लगातार तीन साल लगभग 500 कविताओं को व्याख्यान लिखे। 1982 में 'तेलुगु वाचकम्' (पाठ्यक्रम ग्रंथ) शीर्षक से, 1983 में 'प्रयोजन वाचकम् – वयोजना विद्या वाचकम्' नाम से, 2005 में 'अक्षरयानम्' (कॉलम राइटिंग), यह 'इंडिया टुडे' साप्ताहिक पत्रिका में लगातार तीन साल 'साहित्य, सांस्कृतिक विद्या संबंधी अंकों में प्रकाशित हुआ।' 2012 में 'तन्मयधूली'[76] (अनुवाद) नाम से किया, जिसे साहित्य अकादमी ने प्रकाशित की।

जब एन. गोपि जी वेमना पर शोध कार्य करते हुए सामाग्री संकलन करने के लिए राजमंड्री गौतमी ग्रंथालय गये थे, तो वह कोई भी परिचित नहीं थे। तो गोपी जी दिन में काव्य – संकलन करते थे, रात में बस-स्टांड में सोते थे। इस तरह दो दिन किया। कुछ ही वर्षो में वही पर उपकुलपति बनकर गये तो, उनका बहुत बड़ा स्वागत हुआ। इस तरह आगे किसी भी शोधार्थी को कठिनाई न आने के लिए अपने ही घर में एक बड़ा-सा कमरा बनवा दिया, जिसमें लगभग 12 हजारों ग्रंथ हैं और इसमें 40 प्रतिशत दुर्लभ ग्रंथ हैं।
यात्रा-वृत्तांत की चार पुस्तकें इस प्रकार से हैं-

1.1979 में 'नेनु चूसिना मारिषस' (मेरे द्वारा देखा गया मारिषस),

2.2001 में 'ना सइप्रस यात्रा' (मेरी सइप्रस यात्रा),

3.2002 में 'अमेरिका लो तेलुगु यात्रा' (अमेरिका में तेलुगु यात्रा),

[76] नेटि निजम् (साहिति केरटालु) हैदराहाद, दैनंदिन सामाचार पत्र (गुरुवार, 30-04-2015), संपादक बाइना देवदास, पृ.सं.3

4.2004 में 'इंग्लैंड लो इरुवइ अइदु रोज़ुलु' (इंग्लैंड में पच्चीस दिन),

5. 2015 में 'जर्मनीलो कविता यात्रा' (जर्मनी में कविता यात्रा)।

एन.गोपि के सौ कविताओं की संकलन करके इस प्रकार से प्राकशित की गयी है।

1. 2005 में उर्दू में 'गोपि के सौ नज़्मे' नाम से।
2. 2006 में हिन्दी में 'गोपि की कविता' नाम से।
3. 2005 में अंग्रेजी में 'Another Sky' नाम से।
4. 2009 में 'गोवा, मैं और समुद्र' नाम से।
5. 2016 में 'मेरा गाँव महाकाव्य' नाम से।

अन्य कुछ किताबें प्रकाशनाधीन हैं जो इस प्रकार हैं-

1.'पोतुलूरि वीरा ब्रह्मेंद्रा स्वामी समग्र रचनलु',

2. 'पालमूरु मण्डल जानपद गेयालु',

3.'वीराकालिकाम्बा शतकम्',

4.'यागन्टी लक्ष्मप्पा वचनलु'।

डॉ.गोपि ने तेलुगु परिशोधना नाम से एक शोधपरक त्रैमासिक पत्रिका के संस्थापक-संपादक का भी कार्य किया है। अभी तक एन. गोपि के पाँच दशकों की साहित्यिक जीवन में 43 ग्रंथ प्रकाशित हुए।

2.5. पुरस्कार और सम्मान

डॉ.एन.गोपि पुरस्कारों के धनी हैं। इनको केंद्रीय साहित्य आकदमी पुरस्कार के अलावा तीस अन्य पुरस्कार भी मिले हैं। जो इस प्रकार हैं-

1. 2000 में 'कालाग्नि निद्रपोनिव्वनु' काव्य संग्रह पर 'केंद्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार',
2. 1995 में आन्ध्र प्रदेश सरकार की ओर से 'उत्तम उपाध्याय पुरस्कार',
3. 1978 में 'तंगेडु पूलु' कविता संग्रह पर आन्ध्र महिला सभा, हैदराबाद द्वारा 'कृष्ण शास्त्री पुरस्कार',
4. 1982 में 'मैलुरायि' कविता संग्रह पर आधुनिक कविता को आधार बनाकर स्थापित किया गया सम्मानपूर्वक पुरस्कार 'फ्री वर्स फ्रंट पुरस्कार',
5. 1991 में 'चित्रा दीपलु' कविता संग्रह पर तेलुगु विश्वविद्यालय द्वारा 'उत्तम कविता-संग्रह पुरस्कार',
6. 1990 में 'चित्रा दीपालु' कविता संग्रह पर 'सी.ना.रे. कविता पुरस्कार',
7. 1989 में तेलुगु विश्वविद्यालय द्वारा 'श्रीमति.लक्ष्मीरमणा एंडोमेन्ट पुरस्कार',
8. 1994 में 'वंतेना' कविता संग्रह पर कोस्टल आन्ध्रा, अमलापुरम द्वारा 'सरसम् पुरस्कार',

9. 1995 में 'गवाक्षम्' उत्तम लेख संकलन पर विजयनगरम से 'विजया भावना पुरस्कार',
10. 1999 में महत्वपूर्ण विद्यावेत्ता के रूप में 'दिल्ली तेलुगु अकादमी पुरस्कार',
11. 1999 में अरुन्धती कलासमिति द्वारा 'डॉ.दाशराथि पुरस्कार',
12. 1999 में 'कुरुगन्टी सीतारामाय्या पुरस्कार',
13. 1999 में ज्योत्स्ना कलापीठम् द्वारा 'सुगुणमणि लिटररी पुरस्कार',
14. 2000 में 'साहिती रत्ना नीला जंगय्या साहित्य पुरस्कार',
15. 2001 में तनुकु द्वारा 'बालगंगाधर तिलक कविता पुरस्कार',
16. 2002 में सी.ना.रे. कलापीठम् द्वारा 'सी.ना.रे. साहिती पुरस्कार',
17. 2002 में राजमन्ड्री द्वारा 'प्रतिभा वैजन्तिका पुरस्कार',
18. 2006 में संस्कृति विभाग की ओर से 'उगादि विशिष्ट पुरस्कार',
19. 2001 में श्री अन्नामाचार्य प्रोजेक्ट ऑफ नार्थ अमेरिका (सप्ना), शिकागो द्वारा 'साहित्य सेवा सम्मान पुरस्कार',
20. 2005 में विजया भावना, विजयनगरम् द्वारा 'अभिनव वेमना पुरस्कार',
21. 2005 में जातीय साहित्य परिषद, मेटपल्ली द्वारा 'नानीला विक्रमार्कुडु पुरस्कार',

22. 2006 में आन्ध्रा सारसत्वा समिति, मचिलीपट्टनम् द्वारा 'नानीला नान्ना पुरस्कार',
23. 2004 में इंडियन हाइकु क्लब,अनकापल्ली द्वारा 'कविता प्रपुर्णा पुरस्कार',
24. 2006 में सनातना धर्मा चारिटबुल ट्रस्ट, भीमुनिपटट्नम्, आन्ध्र प्रदेश द्वारा 'शिवानन्दा एमिनेन्ट सिटिजेन पुरस्कार',
25. 2007 में पिठापुरम की ओर से 'मातृश्री राजहंस कृष्णशास्त्री' पुरस्कार,
25. 2009 में तेजा आर्ट क्रियेशन्स, आलुरु, नलगोंडा जिला, आन्ध्र प्रदेश द्वारा 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' पुरस्कार,
26. 2009 में श्री कृष्णदेवाराया आन्ध्रा भाषा निलयम्, हैदराबाद द्वारा 'दाशरथि कृष्णामाचार्या साहिति पुरस्कारम्',
27. 2009 में आंध्र प्रदेश सरकार की ओर से 'कला रत्न' पुरस्कार,
28. 2011 में आंध्र प्रदेश सरकार की ओर से 'भोयी भीमन्ना पुरस्कार',
29. 2012 में श्रीपादराव स्मृति पुरस्कार,
30. 2013 में निजामाबाद जिला की ओर से 'हरिदा-रच्चा तेलंगाणा विशिष्ठ पुरस्कार' मिला है।[77]

[77] नेटि निजम् (साहिति केरटालु) हैदराहाद, दैनंदिन सामाचार पत्र (गुरुवार, 30-04-2015), संपादक बाइना देवदास, पृ.सं. 3

2.6. प्रशासन क्षेत्र में प्रशासक के रूप में एन.गोपि

1. प्रो.एन.गोपि उस्मानिया विश्वविद्यालय में प्राध्यपक के साथ डीन, फैकल्टी ऑफ आर्ट्स में कार्यरत रहे।
2. तेलुगु-विभाग के विभागाध्यक्ष भी रहे।
3. तेलुगु-विभाग में ही चेयरमैन, बोर्ड ऑफ स्टडीज़ के रूप में कार्यरत रहे।
4. उस्मानिया विश्वविद्यालय के असिस्टेंट चीफ वार्डेन के रूप में कार्यरत रहे।
5. एक्जुक्यूटिव काउन्सिल मेंबर के रूप में पोट्टि श्री रामुलु तेलुगु विश्वविद्यालय (1999-99) कार्यरत रहे।
6. 1999-2001 तक पोट्टि श्री रामुलु तेलुगु विश्वविद्यालय के उपकुलपति के रूप में कार्यरत रहे।
7. 2001 में काकातिया विश्वविद्यालय एवं द्रविडियन विश्वविद्यालय में इन-चार्ज उपकुलपति के रूप में कार्यरत रहे।

2.7. आन्ध्रप्रदेश के राज्य स्तर पर विभिन्न कमिटियों में एन.गोपि

1. 2002-03 में मेम्बर, अड्वाइजरी कमिटी, केंद्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
2. 1984 में एलेक्टेड मेंबर, आन्ध्रप्रदेश साहित्य अकादमी, हैदराबाद।
3. 1996 में एक्जुक्यूटिव मेंबर, विश्वस्तरीय तेलुगु टीचर्स असोसियेशन।
4. 1996 में ज्यूरी मेंबर, फीचर फिल्म्स नंदि पुरस्कार कमिटी, आन्ध्रप्रदेश।
5. 2006 में मेंबर, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इंडिया।

इस रूप में देखें तो एन.गोपि का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतीकों का धनी है। एन. गोपि ने अल्पायु में ही अध्यापाक के रूप में, प्रशासनिक के क्षेत्र में प्रशासक

के रूप में, कवि, आलोचक, अनुवादक और न जाने कितने ही क्षेत्रों में कार्यरत रहे। पर हर जगह अपना पादछाप छोड़े, जो भावि पीड़ियों के लिए मार्गदर्शन है।

इसलिए ही शायद 'आंध्र सारस्वत परिषद्'[78] में 21-01-2015 को 'परिणतवाणी' शीर्षक से इनका पूरा संपूर्ण साहित्य के साथ-साथ जीवन के मुख्य बिंदुओं को पाठकों के सामने लाने की प्रयास में हैं जो सभी साहित्य-प्रेमियों के लिए लाभदायक हो और प्रेरणा भी मिले। इनके जीवन के बारे में 'परिणतवाणी' शीर्षक से आनेवाली प्रसंग को पूर्ण रूप से लगातार तीन सप्ताह (2015 अप्रैल 16, 23, 30 को) 'नेटि निजम्' हैदराबाद समाचार पत्रिका में 'साहिति केरटालु' नामक कॉलम में प्रकाशित हुए। इसी भाषण-लेख को 2016 में 'ओ कवि स्वीयकथा' (एक कवि की स्वीयकथा) शीर्षक से अभव प्रकाशन, हैदराबाद से डॉ. एन. गोपि ने प्रकाशित करवाया।

---

[78] नेटि निजम् (साहिति केरटालु) हैदराहाद, दैनंदिन सामाचार पत्र (गुरुवार, 30-04-2015), संपादक बाइना देवदास, पृ.सं. 3

2.8. अनुवादकों का संक्षिप्त परिचय

साहित्य के संदर्भ में अनुवाद की प्रक्रिया पर विचार करते समय अनुवादक का ही प्रमुख स्थान दिया जाता है और अनुवाद की सफलता/असफलता का भार उसी पर डाल दिया जाता है। साहित्यिक कृतियों के अनुवाद में अनुवादक अवश्य अपने व्यक्तिगत दायित्व, रुचि-निर्णय और क्षमता के प्रति सचेत रहता है और कहीं न कहीं अवसर पाते ही अपने विचार व प्रतिक्रिया अवश्य व्यक्त करता है। इस प्रकार कुल मिलाकर अनुवादक के लक्षण या अनुवादक के गुण नाम से जो गुण गिनाये जाते हैं वे संसार में मनुष्य की जितनी अच्छाइयाँ और क्षमताएँ हो सकती हैं उन्हीं का कुल योग होते हैं।

अनुवाद को, वह काव्य का हो या गद्य का हो या फिर किसी साहित्यिक विधा का क्यों न हो, मुख्यतः दो दृष्टियों से देख सकते हैं। एक- दूसरी भाषा से अपनी मातृभाषा में किया गया अनुवाद, जहाँ लक्ष्य भाषा अनुवादक की मातृभाषा होती है और दो- मातृभाषा से दूसरी भाषा में किया गया अनुवाद, जहाँ लक्ष्य भाषा अनुवादक की मातृभाषा न होकर इतर भाषा होती है। जो उस की सीखी हुई होती है। पहले प्रकार का अर्थात् इतर भाषा से मातृभाषा में जो अनुवाद संपन्न होता है, वह दूसरे प्रकार के अनुवाद से बेहतर होता है, यह आम राय प्रचार में है।

दूसरे प्रकार के अनुवाद के भी दो भेद किये जा सकते हैं। एख- ऐसा अनुवाद जहाँ अनुवादक पर वह थोपा गया होता है, यह थोपना प्रकाशन संस्था-विशेष की तरफ़ से हो सकता है या मूल रचनाकार की तरफ़ से हो सकता है और दो- ऐसा अनुवाद जहाँ अनुवादक मूल रचना से प्रभावित होकर अपनी मातृभाषा के साहित्यिक वैशिष्ट्य को दूसरी भाषाभाषियों तक पहुँचाने की ललक से प्रेरित होकर स्वेच्छा से अनुवाद करता है। अनुवाद का यह दूसरा प्रकार प्रथम से उत्तम माना जाता है।

एन. गोपि की कविता-संग्रह भी उपर्युक्त बताये गये दूसरा प्रकार का अनुवाद हुआ है। वैसा तो एन. गोपि का साहित्य भारतीय भाषाओं के साथ-साथ अन्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। परंतु हिंदी ही मूल भाषा तेलुगु से लेकर इतर भारतीय भाषाओं में अनुवाद होने में सहायक बनी। इसलिए कहते हैं कि हिंदी देश को जोड़ने वाली भाषा है। हिंदी के माध्यम से ही एन. गोपि का कविता-संग्रह लगभग 20 भारतीय भाषाओं में अनूदित हैं जिनमें दो-तीन उत्तम अनुवाद का पुरस्कार भी पाया है।

अभी तक एन. गोपि की साहित्य हिंदी में सात संकलन चार अनुवादकों के द्वारा हुआ है। वे इस प्रकार हैं-

1. नन्हे मुक्तक – डॉ. पोली विजय राघव रेड्डी द्वारा 2005 में।
2. जलगीत (दीर्घ कविता) – प्रो. पी. माणिक्यांबा 'मणि' द्वारा 2005 में।
3. गोपि की कविता – संपादक श्रीमति आर. शांता सुंदरी द्वारा 2006 में।
4. समय को सोने नहीं दूँगा – श्रीमति आर. शांता सुंदरी द्वारा 2006 में।
5. गोपि के नन्हे मुक्तक – डॉ. बी. सना (सत्यनारायण) द्वारा 2008 में।
6. समुद्र, मैं और गोवा – श्रीमति आर. शांता सुंदरी द्वारा 2009 में।
7. मेरा गाँव महाकाव्य – श्रीमति आर. शांता सुंदरी द्वारा 2016 में।

इन अनुवादकों के संक्षिप्त परिचय नीचे दिया जा रहा है।

2.8.1. डॉ. पोली विजयराघव रेड्डी (नन्हे मुक्तक)

चालीस वर्षों तक केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा तथा उसके क्षेत्रीय केंद्रों में विविध पदों पर कार्य करने के उपरांत जुलाई, 1998 में सेवानिवृत्त डॉ. विजय राघव रेड्डी दो वर्षों तक (1999-2001) तक आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी के अध्यक्ष रहे।

जब ये सितंबर, 1978 में हैदराबाद स्थानांतर होकर आये, उसी समय तेलुगु भाषा साहित्य सम्मेलन में श्रोता के रूप में भाग लेते थे। इसी क्रम में आंध्र सारसत्व परिषद् हर महिना पहला रविवार सम्मेलन में भाग लेकर वहाँ दिये जाने वाले भाषण सुना करते थे। भाषण पूरा होने के बाद कुछ युवा कवियों ने अपने कविता सुनाते थे। उन्हीं में से गोपि एक था। उस समय एन. गोपि किसी कॉलेज में प्रध्यापक के रूप में काम करते थे। फिर कभी-कभी तेलुगु समाचार पत्रों में गोपि की कविताएँ पढ़ते थे। इतने में अनुवादक का स्थानांतर होकर गौहति जाना पड़ा।

फिर अगस्त 1983 में हैदराबाद स्थानांतर होकर हैदराबाद आये गोपि और अनुवादक के बीच में मुलाकात हुई और इसके साथ-साथ दोनों एक ही गली में रहने वाले मित्र भी बन गये थे। एन. गोपि के साहित्य को विशाल हिंदी जगत् में लाने का श्रेय इसी अनुवादक को जाता है। पहला उनके द्वारा लिखित एक कविता 'अव्यवस्था' को पठन करते ही हिंदी में अनुवाद किया। वह इस प्रकार है-

इक्कडा / सांकेतिक निजला कोसं / सत्यान्नि बलिपेट्टली

पातिव्रत्यान्नि कापाडुकोटानिकि / व्यभिचरिंचलि

हृदय हरिणान्नि रक्षिंचटानिकि / मेदडु नक्कनु कापला पेट्टालि

प्रशांति कोसं / अशांति पालु कावालि[79]

इसी कविता को 'यहाँ की व्यवस्था' शीर्षक से अनुवादक ने हिंदी में अनूदित करके दो – तीन समाचार पत्रिकाओं को भेजा था। यहाँ कविता हिंदी पाठकों के लिए उस समय बहुत लोकप्रिय कविता रहा। इसके बाद 'फ्रीडम् फाइटर' और कुछ कविताओं को हिंदी में अनुवाद किये।

'नानीलु' कविता संग्रह में पूरे 365 नानीलु (मुक्तक) हैं। इसे अनुवादक ने हिंदी में 'नन्हे मुक्तक' नामक शीर्षक से हिंदी में प्रकाशित किये, जिसका प्रकाशन 'क्षितिज प्रकाशन', दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। पहली बार विशाल हिंदी दुनिया में गोपि की साहित्य इसी कविता-संग्रह के माध्यम से आये। अनुवादक को भी हिंदी साहित्य जगत् में बड़ा ख्याति मिली।

एन. गोपि के शिष्यगण और इष्टमित्रों ने दिसंबर 1998 में उनकी 50 वीं वर्षगाँठ पर तेलुगु साहित्य के उनके अवदान को लेकर दिन भर का साहित्यिक कार्यक्रम संचालित कर सोल्लास उनके जन्म की अर्धशती मनाई। इस अवसर पर अनुवादक ने उन 101 नन्हे मुक्तकों को उनके मूल के देवनागरी लिप्यांतरण के साथ 50 वें जन्म दिन के तोह्फे के रूप में भेंट किया, जिसे गोपि ने सहर्ष स्वीकार किया।

मुनींद्र जी के संपादन में हैदराबाद से प्रकाशित साप्ताहिक 'दक्षिण समाचार' के अप्रैल 1999 के एक अंक में इनमें से 12 मुक्तक 'नन्हे मुक्तक' के नाम से प्रकाशित हुए। कहना न होगा कि दक्षिण समाचार एक ऐसी लघु पत्रिका है जिस के

[79] अक्षरा (डॉ.एन. गोपि की षष्ठ्यब्दिपूर्ति अभिनंदन संचिका), प्रधान संपादक मद्दाली रघुराम, 25 जून, 2010. पृ.सं. 10.

पाठक पूरे भारत में प्याप्त हैं और ये प्रबुद्ध पाठक वर्ग में आते हैं। इन नन्हे मुक्तकों को पढ़कर देश के एक सुदूर अंचल के विश्वविद्यालय असम विश्वविद्यालय सिलचर की एक पाठक डॉ. शुभदा पांडेय ने मूल कवि डॉ. गोपि के लिखे अपने दि.21.05.1999 के पत्र में उद्गार यों व्यक्त किए- 'दक्षिण समाचार' पत्रिका में आप के मुक्तक के हिंदी अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। अनुवादक डॉ. पोलि विजय राघव रेजड्डी हैं। आपके मुक्तक इतने हृदयस्पर्शी और प्रभावशाली हैं कि इन्हें पढ़ने के पश्चात मैं आपको पत्र लिखने से अपने आप को रोक न सकी। पता नहीं आप हिंदी पढ़ सकते हैं या नहीं, लेकिन आपकी लेखनी तक मेरा प्रणाम पहुँचे. इसी भावना से पत्र लिख रही हूँ।... अनुवादक बंधु को भी नमन कहें।[80]

इनकी अबतक भाषाविज्ञान एवं भाषा अध्ययन विषय पर 17 मौलिक पुस्ककें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अलावा इनकी अनूदित कृतियाँ इस प्रकार हैं-

1. अन्नमाचार्य संकीर्तन त्रिवेणी
2. अन्नमाचार्य
3. मक्खी और मधुमक्खी
4. डॉ. सी. आर. रेड्डी
5. वी. आई. पी.
6. घर से भागा मटरू
7. हमारे प्रसिद्ध तीर्थस्थान
8. चर्चित तेलुगु कहानीकार और कहानियाँ
9. तेलुगु का चर्चित कहानियाँ

[80] गोपि की कविता – अनुवादकों के अनुभव, संपादक प्रो. एस. वी. सत्यनारायण, पृ.सं. 146.

10 तेलुगु की तीस प्रतिनिधि कहानियाँ

11 वेर्रिबागुल मामिडि (हिंदी से तेलुगु)

12 फणीश्वरनाथ रेणु उत्तम कथलु (हिंदी से तुलुगु)

2.8.2. प्रो. पी. माणिक्यांबा (जलगीत)

प्रो. पी. माणिक्यांबा 'मणि' हिंदी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय में कार्यरत रहे। इन्होंने एम.ए. (हिंदी) में सर्वप्रथम आयी थी और तीन बार स्वर्णपदक प्राप्त की। इसके साथ ही एम.ए. (संस्कृत) भी पूरा किया। इसीलिए इन्होंने सुंदर अनुवाद करने में कामयाब हुई।

इनके द्वारा किया गया पीएच.डी. विषय 'महोदेवी के काव्य में बिंब विधान' (प्रकाशित) शोध-कार्य को प्रामाणिक माना जाता है। यह कार्य यू.जी.सी. के मेजर प्रॉजेक्ट के अंतर्गत ली गयी। दूसरा शोध-कार्य 'बीसवीं शती के हिंदी और तेलुगु नाटक विविध आयाम'। इसे भी प्रामाणिक माना जाता है।

इनके शोध-क्षेत्र आधुनिक काव्य-नाटक, काव्यशास्त्र, भक्ति-काव्य एवं तुलनात्मक अध्ययन के अंतर्गत है।

इनके अनुवाद क्षेत्र तेलुगु कविताओं तथा कहानियों का हिंदी में अनुवाद। अभी तक इनके द्वारा किया अनुवाद संग्रहों में काव्यानुवाद – 12, गद्यानुवाद – 8 प्रकाशित हो चुका है।

ये पुरस्कारों के धनी हैं। इनको अभी तक निम्नलिखित पुरस्कार मिली हैं-

1. विशिष्ठ हिंदीसेवी सम्मान, राष्ट्रीय हिंदी अकादमी, कलकत्ता।

2.विश्व हिंदी सम्मान, आठवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, न्यूयार्क, यू.एस.ए.

3.गुरुपीठम् पुरस्कार, तेनाली, आंध्र प्रदेश।

4. उत्तम हिंदी अनुवादक, केंद्र सराकार की हिंदी अनुवाद परिषद की ओर से एवं एक लाख रूपये का नगद इनाम।

अनुवादक को तेलुगु और दोनों भाषाएँ प्रिय हैं इसलिए 'जलगीतम्' का हिंदी अनुवाद आसानी से हो पाया। अनुवादक के लिए यह अनुवाद एक विचित्र अनुभव था, चूँकि कवि एन.गोपि 'जलगीतम्' काव्य लिखते समय ही अनुवादक को सुनाते थे। क्योंकि दोनों एक ही कॉलेज (कोटि उमेन्स, उस्मानिया विश्वविद्यालय) में पढ़ाते थे। इसलिए दोनों का परिचय स्वाभाविक था। तुरंत अनुवादक ने गोपि से पूछा कि मैं इसका अनुवाद करना चाहती हूँ, दो दिन बाद मूल कवि से अनुमति मिली। इसलिए 'जलगीतम्' का लोकार्पण होने से पहले ही इसका अनुवाद कार्य पूरा हो चुका है। इसी बीच में एन. गोपि के घर में वॉटरमैन कहलाने वाला राजेंद्र सिंह से परिचित होना और वे अनुवाद का प्रशंसा करना हुआ।

यह दीर्घ कविता का अनुवाद 9 भारतीय भाषाओं में अनूदित है। हिंदी, गुजराती और उर्दू भाषाओं की अनुवाद उत्तम अनुवाद के रूप में पुरस्कार प्राप्त किये। इसी काव्य-संग्रह को अनुवाद करने की वजह से अनुवादक को केंद्रीय हिंदी अनुवाद परिषद की ओर से उत्तम अनुवाद का पुरस्कार और एक लाख रूपये का इनाम भी मिला था। कई विश्वविद्यालयों में यह काव्य संग्रह पाठ्यक्रम के रूप में हैं और कई जगह इस कृति पर शोध परक कार्य कर रहे हैं। 'जलगीत' का अनुवाद के बारे में बताते हुए प्रो. टी.वी. कट्टीमनी जी कहते हैं कि 'तेलुगु कविता का 'मणि' जी ने ऐसा किया है जैसे सुधी पाठक को लगता है कि यह अनुवाद नहीं मूल कविता है। प्रो. मणि जी के अनुवाद में तेलुगु भाषा की खूबियाँ तो ज्यों का त्यों रह गयी हैं लेकिन उनके साथ हिंदी की खूबियाँ

स्वाभाविक रूप से जुड़ गयी है। इसलिए यह कहा जाता है कि 'जलगीत' का वास्तविक रूप से भारतीयकरण हुआ है।'[81]

'जलगीत' कृति अनुवाद करना अपने अनुवाद यात्रा में जीवन का मील का पत्थर मानते हैं क्योंकि यह कविता-संग्रह से अनुवादक को बहुत बड़ ख्याति मिली और पुरस्कार भी मिले। 'जल गीत सृष्टि और दृष्टि' शीर्षक से प्रो. टी.वी. कट्टीमनी के संपादन में एक पुस्तक निकले, जिसमें कई महान साहित्यकारों और विमर्शकों का लेख हैं। इसके साथ ही केदारनाथ सिंह, प्रो. कृष्णदत्त पालीवाल जैसे बड़े विमर्शकों के लेख अनुवादक को और उत्साह बढ़ाया। तेलुगु भाषा में भी 'जल दीपिका' शीर्षक से श्रीमति एन. अरुणा जी के संपादन में कई लेखकों का, विमर्शकों का, साहित्यकारों का लेख इसमें देखने को मिलते हैं।

2.8.3. श्रीमति आर. शांता सुंदरी

(समय के सोने नहीं दूँगा, गोपि की कविता, समुद्र, मैं और गोवा, मेरा गाँव महाकाव्य)

श्रीमति आर. शांता सुंदरी का जन्म 8 अप्रैल, 1947 में मद्रास में हुआ। इनके पिता जी तेलुगु के महान श्री कोडवटिगंटि कुटुंबराव है। इन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय से 1967 में बी.ए. (हिंदी) करने के बाद दिल्ली विश्वविद्यालय से एम.ए. (हिंदी) और बी.एड. किया। पिछले चालीस वर्षों से भी अधिक सालों से अनुवाद के क्षेत्र में सक्रिय। मुख्यतः तेलुगु से हिंदी तथा हिंदी से तेलुगु में अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। नेशनल बुक ट्रस्ट में 1980 से अनुवादक के रूप में कार्यरत, साहित्य अकादमी, आई.सी.सी.आर. आदि

---

[81] जल गीत सृष्टि और दृष्टि, संपादक प्रो. टी.वीट. कट्टीमनी, पृ.सं.iii.

संस्थाओं के लिए अनुवाद कार्य किये। इन्होंने बहुभाषी अनुवादक हैं, जैसे अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल और हिंदी भाषाओं का अनुवाद का कार्य करते हैं। अनुवादक ने अपने पहले हिंदी अनुवाद कार्य के लिए ही पुरस्कार प्राप्त किया, जो तेलुगु में जाने माने उपन्यासकार सलीम के तेलुगु उपन्यास 'कालुतुन्न पूला तोटा' को हिंदी में AIDS के बारे में जनता में जागृत करने के लिए अनूदित करने पर केंद्रीय मानवीय संसादन, दिल्ली को ओर से प्राप्त हुआ।

अनेक पत्र-पत्रिकाओं कहानियाँ और कविताएँ प्रकाशित हुआ। नेशनल बुक ट्रस्ट के लिए तेलुगु तथा हिंदी में कार्य किया। इसके अलावा अंग्रेजी से तेलुगु तथा अंग्रेजी से हिंदी में भी पुस्तकों का अनुवाद किया। अबतक इन्होंने 21 साहित्यिक कृतियों का अनुवाद किया है और 6 प्रकाशनाधीन में हैं। इनके द्वारा किये गये अनुवाद कार्य में मुख्य रूप से चंद्रगुप्त विद्यालंकर का हिंदी एकांकी का अनुवाद, प्रेमचंद की कहानियाँ बालकों के लिए तेलुगु में अनुवाद, महाश्वेता देवी जी का उत्तम कहानियों को तेलुगु में अनुवाद, तेलुगु के प्रमुख कवइत्री ओल्गा द्वारा रचित 'स्वेच्छा' को हिंदी अनुवाद और विजय भास्कर के नाटकों को हिंदी में अनुवाद हैं। इनको प्रसिद्ध पुरस्कार भी मिले हैं जिसमें 'डॉ.गार्गी गुप्ता द्विवागीश पुरस्कार' दिल्ली की भारतीय अनुवाद परिषद द्वारा जून, 2005 में प्रमुख है।

इन्होंने कवि एन. गोपि के चार काव्य-कृतियों को हिंदी में लाने का प्रयास किया। इन चार में से तीन कविता संग्रह हैं और एक संपादक रूप में काम किया। इन चार अनुवादों के बारे में नीचे दिया जा रहा हैं-

2.8.3.1.समय को सोने नहीं दूँगा

अनुवादक को कई साल दिल्ली में रहने के कारण तेलुगु रचनाकारों, कवियों के साथ मिलने का मौका नहीं था। हैदराबाद में रहने वाले एक मित्र ने गोपि द्वारा लिखित 'कालान्नि निद्र पोनिव्वनु' (समय को सोने नहीं दूँगा) कविता संग्रह भेजा। पुस्तक पढ़ते ही अनुवाद करने का संकल्प लिया है। अनुवादक को अनुवादक होने के कारण जब भी कोई नयी किताब पढ़ती, तो उसमें से कुछ कविताओं का अनुवाद करने का आदत थीं, इसी आदत से कुछ कविताओं का अनुवाद कर डाली।

जब 'समय को सोने नहीं दूँगा' कविता संग्रह को साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा पुरस्कार मिली तो उस समय पुरस्कार लेते समय अनुवादक को मूल कवि एन. गोपि से मिलने का मौका मिली। दिल्ली में स्थित 'तेलुगु साहिति' नामक साहित्यिक संस्था दिल्ली को जो भी कवि आते हैं उनके साथ एक सम्मेलन का आयोजन करवाते हैं और विशेष रूप से साहित्य अकादमी पुरस्कार लेने वालों को एक सम्मान कार्यक्रम के साथ विशेष कार्यक्रम का आयोजन करवाते हैं। इसी कार्यक्रम में अनुवादक को गोपि की कविताओं का हिंदी में पढ़ने सुअवसर प्राप्त हुआ। उस कार्यक्रम में बहुत बड़े विद्वान और कविजन आये हुए थे, उनमें डॉ. सी. नारायण रेड्डी एक हैं। अनुवादक द्वारा पठित 'रायि' (पत्थर) नामक कविता को बहुत प्रशंसा मिली। इस तरह कवि और अनुवादक का परिचय हुआ।

इसी बीच में लगातार अनुवाद कार्यक्रम पूरा करके 2006 में हिंदी में पूर्ण रूप से 'समय को सोने नहीं दूँगा' शीर्षक से लोकार्पण हुआ। 'क्षितित' प्रकाशन, दिल्ली से इसका प्रकाशन हुआ। अनुवादक 1980 से नेशनल बुक ट्रस्ट में अनुवादक का काम करते हुए,

कई किताबों का अनुवाद किये, परंतु कभी पुस्तक लोकार्पण के समय नहीं बुलाया, परंतु पहली बार विशेष रूप से एन. गोपि ने ही अनुवादक को मंच पर बुलाकर सभी को परिचय करवाया। इसलिए अनुवादक कहती है कि 'समय को सोने नहीं दूँगा' अनुवाद का कार्य उनके लिए 'मील का पत्थर' है।

2.8.3.2. गोपि की कविता

अनुवादक इसी वर्ष (2006) में मूल कवि एन. गोपि द्वारा लिखित सौ से भी अधिक कविताओं को हिंदी में अनुवाद किया। इनमें से चुने हुए पचास कविताओं को अनुवाद करने वाले विविध अनुवादकों को एक साथ इकट्टा करके, इनके संपादन कार्य में 'गोपि की कविता' शीर्षक से 2006 में 'महती प्रकाशन', हैदराबाद द्वारा पाठकों के सामने लाया। इसमें सात अनुवादकों ने अपने मनपसंद गोपि की कविताओं को हिंदी में अनुवाद किये, जिसमें अनुवादक भी शामिल हैं।

अनुवादकों का नाम इस प्रकार हैं-

1. स्वर्गीय डॉ. भीमसेन निर्मल,
2. डॉ. विजय राघव रेड्डी,
3. डॉ. पी. माणिक्यांबा,
4. डॉ. एस. सना,
5. डॉ. के. एल. व्यास,
6. डॉ. आर. सुमनलता,
7. डॉ. एन. वी. एस. प्रसाद,
8. श्रीमति आर. शांता सुंदरी।

अनुवादक को स्वयं अनुवाद कार्य से अनुवादकों के कविताओं को चयन करने में ज्यादा समय लगा। क्योंकि अनुवादकों के अनूदित कृति पढ़ना और मूल कविता पढ़ना पड़ा। इस कृति का लोकार्पण नवंबर 2006 में प्रख्यात अनुवादक स्वर्गीय डॉ. भीमसेन निर्मल जी के जन्मदिन के कार्यक्रमों के अंतर्गत हुआ।

2.8.3.3.गोवा, मैं और समुद्र

अनुवादक के द्वारा किया गया तीसरा अनुवाद कविता संग्रह है। 'गोवालो समुद्रम' नामक कविता संग्रह को हिंदी में 'समुद्र, मैं और गोवा' नामक शीर्षक से अनुवाद किया। यह संग्रह गणेश्वर प्रकाशन, हैदराबाद से जनवरी, 2009 में प्रकाशित है। इसमें सिर्फ 18 कविताएँ हैं। यह एक यात्रा-वृत्तांत कविता संग्रह है।

'समुद्र, मैं और गोवा' एक छोटा सा प्यार भरा एहसास है जो डॉ.एन.गोपि को गोवा का दर्शन करने के बाद प्राप्त हुआ। हरी-भरी पहाड़ियों के साथ खेलती हुई बारिश, माण्डवी, जुआरी जैसी हमारे मन को खींचकर अपने दिल के पास रख लेनेवाली लुभावनी नदियाँ, यहाँ के किनारों की चमकीली रेल पर आकर अपनी लहरों को दुलराने वाला समुंदर देखकर गोपि जी का मन खनक उठा है, गूँज उठा है, और उनकी ये जल-तरंगों उनके अंतर्मन में से खींच लाई हैं ये कविताएँ।

2.8.3.4.मेरा गाँव महाकाव्य

मेरा गाँव महाकाव्य गोपि द्वारा लिखित 1965 से लेकर 2016 तक की चुनी हुई और लोकप्रिय हुए कविताओं को अनुवाद किया। यह पुस्तक अभी प्रकाशनाधीन में है।

2.8.4. डॉ. सना (गोपि के नन्हे मुक्तक)

डॉ. सना ने एन. गोपि द्वारा लिखित 'गोपि नानीलु' का हिंदी में 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक से अनुवाद किया। ये उस्मानिया विश्वविद्यालय में जब शिक्षण कार्य पर थे, उसी समय कवि एन. गोपि से परिचित हुआ। उस समय एन. गोपि ने पी.जी. कॉलेज में पढ़ाते थे, तब अनुवादक ने सप्ताह में दो बार पी.जी. कॉलेज में पढ़ाने जाते थे। उसी समय दोनों के बीच मित्रता पैदा हुई। दो साल बाद कवि गोपि भी तबादला होकर उस्मानिया में रीडक बनकर आये थे। उस समय हर दिन कम से कम दोनों एक घंटा आपस में मिलकर साहित्यिक बातें करते थे।

इसी बीच में अनुवादक ने हिंदी की 57 दलित कविताओं का तेलुगु में अनुवाद करता रहा। इन्हीं अनूदित कविताओं का भाषागत सुधार डॉ. एन. गोपि ने मिनटों में कर दिया करते थे। तब अनुवादक की खुशी का ठिकाना न था। इन अनूदित कविताओं का संग्रह 'प्रतिघटना स्वरालु' शीर्षक से सन् 2005 में प्रकाशित हुआ, जिसका लोकार्पण गोपि जी के करकमलों द्वारा ही हुआ। इसके बाद गोपि जी का तेलुगु काव्य-संग्रह 'गोपि नानीलु' के हिंदी अनुवाद करने का संकल्प लिया और योग्यतानुसार इस संग्रह का हिंदी अनुवाद किया।

अतः इस संशोधन कार्य के लिए प्रो. कादरी साहब से निवेदन किया। उन्होंने तुरंत प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। यथासंभव अनुवाद-कार्य पूरा हुआ। गोपि जी तृप्त हुए। आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी, हैदराबाद के वित्तीय अनुदान से यह अनूदित संग्रह 2008 में 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। तेलुगु की इस नवीन मुक्तक काव्य परंपरा में 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक यह रचना एन. गोपि का द्वितीय संग्रह है। इस संग्रह में

कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के कुल दिनों जैसा।) तेलुगु और हिंदी, दोनों की सांस्कृतिक भिन्नता के कारण, दोनों की वाक्य-संरचना, पद-बंद, शब्द-प्रयोग, व्याकरणगत विशेषताएँ भिन्न हैं।

इनके द्वारा प्रकाशित पुस्तकें इस प्रकार हैं-

1. द्विवेदी युगीन काव्य में सामाजिक चेतना (पीएच.डी. शोध प्रबंध, 1986)
2. प्रतिघटना स्वरालु (हिंदी की दलित कविताओं का तेलुगु अनुवाद, 2004)
3. चक्की (डॉ. एम. सुजाता रेड्डी की 20 तेलुगु कहानियों का हिंदी अनुवाद, 2006)
4. हिंदी उपवाचक (संपादन), 9वीं कक्षा के लिए, आंध्र प्रदेश सरकार की ओर से।
5. देवेश ठाकुरः व्यक्ति और रचनाकार (हिंदी निबंध-संग्रह का संपादन, मुंबई, 2003)
6. समीचीन (हिंदी अर्द्धवार्षिक पत्रिका का संपादन, जनवरी, 2003, मुंबई)

समय समय पर हिंदी से तेलुगु और तेलुगु से हिंदी में विभिन्न पत्रिकाओं में लेख, कविताएँ तथा कहानियों का अनुवाद।

इस तरह अनुवादकों ने अपने साहित्य में रुचि रखते हुए, हिंदी पाठकों के लिए एन.गोपि जी के काव्य-संग्रहों को अनुवाद के रूप में लाकर हिंदी के विशाल जगत में खूब नाम कमाया और विशेष रूप से अन्य भारतीय भाषाओं में एन. गोपि के काव्य-संग्रहों को ले जाने में सहायक बने।

तृतीय अध्याय

जलगीतम् : अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण

तृतीय अध्याय

3.'जलगीत': अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण

3.1. 'जलगीत' का औचित्य

पिछले दशक से विभिन्न विषयों के विशेषज्ञ इस गंभीर समस्या पर विचार करते रहे हैं कि जल, वायु और पृथ्वी को प्रदूषित होने से कैसे बचाया जाये। बिगड़ते पारिस्थितिकीय संतुलन को लेकर पूरा विश्व चिंतित है। इसी चिंता को लेकर एन.गोपि ने 'जलगीतम्' शीर्षक से एक लंबी कविता लिखी है। सत्ताईस उपविभागों में विभक्त इस कविता की अंतर्योजना कहीं खंडित नहीं है। सत्ताईस छोटे-छोटे खेडों में विभक्त यह लंबी कविता मानवता एवं दार्शनिकता को समेटते हुए, विज्ञान की भूमिका पर अंकुरित हुई। अतः इसकी विषय वस्तु के साथ-साथ गहराई का भी समावेश हो गया है। वस्तुतः 'जलगीत' को काव्य संग्रह न कहकर एक संपूर्ण कविता कहना ही समीचीन होगा। क्योंकि संख्या की दृष्टि से इसमें सत्ताईस कविताएँ हैं किंतु इनमें तारतम्य है और ये कविताएँ संपूर्ण जलचक्र को प्रस्तुत करते हुए जलगाथा के रूप में हमारे सामने आती है। इसे जल की महागाथा भी कह सकते हैं। कवि की मूल चिंता जल-प्रदूषण को लेकर है। कवि कहते हैं- "यह शताब्दी है जल को धन के दंश की।" कवि के सामने 'प्रगति' और 'विकास' को लेकर उत्तर-औपनिवेशिक समाज की चिंताएँ हैं। जिस 'विकास' का सपना भारत जैसा देश देख रहा है उसमें सदानीरा नदियाँ या तो सूख रही हैं या फिर इतनी प्रदूषित हो गयी हैं कि उनका जल पीने-नहाने लायक नहीं रहा है।

3.2. 'जलगीत' रचना के कारण

इस रचना की प्रेरणा के रूप में मूल कवि एन.गोपि के अनुसार 'धरती पर मिलने वाले पानी में कुल मिलाकर 97 प्रतिशत से ज्यादा समुद्र का पानी है। वह प्रत्यक्ष रूप से धरती के प्राणियों के लिए काम का नहीं है और 2 प्रतिशत बर्फ के रूप में है। बाकी 1 प्रतिशत से भी कम पानी ही प्राणियों के लिए उपयोगी है। वह है पीने का पानी। अब इस पानी के लिए बड़ा संकट पैदा हो गया है। जनसंख्या में वृद्धि और अन्य कारणों से पानी की कमी है तो प्रदूषण दूसरा कारण है। वातावरण में प्रदूषण के बढ़ने से बर्फ पर दबाव शुरू हो जाता है। बर्फ भूगोल का एक आधार है। वह बर्फ पिघल गयी तो जल प्लावन होगा और धरती का नामोनिशन मिट जायेगा।'[82] इसलिए कवि ने 'कॉस्मिक जल' से 'प्रदूषण जल' तक की यात्रा करते हुए जल की आत्मा का आविष्कार करने का प्रयास किया है। वे पाठकों में जल-स्पृहा लाना चाहते हैं। इस रचना में कवि ने कॉस्मिक जल से प्रदूषित जल तक की अनंत यात्रा की प्रक्रिया को इसमें चित्रित किया है। 'विश्व से जल का आगमन, जलचक्र, पंचभूतों में जल की प्रधानता, प्रमेय, जल के विविध रूप, धर्म, जल-मूल्य, प्रशस्ति, जल से मानव का सुनिश्चिच संबंध जल और संस्कृति, जल की कमी, जल वितरण, जल कल, नदियाँ, जल प्रपात, तालाबों का जल प्रबंध, यातायात का जल, जल-प्रदूषण, जल के वाणिज्य वस्तु बनाने की मुहिम, जल के लिए आंदोलन, पानी बचाव के भगीरथ प्रयत्न आदि सभी अंशों का काव्यात्मक रूप है यह रचना।[83]

---

[82] जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), भूमिका के अंतर्गत, पृ.सं. 7

[83] जलगीतः सृष्टि एवं दृष्टि, सं. डॉ.टी.वी.कट्टीमनी, पृ.सं. 20

3.3. 'जलगीत' का प्रतिपाद्य

जलगीत की प्रतिपाद्य वस्तु समकालीन भी है और सर्वकालीन भी है। मानवता से ही मानव भाव से संबंधित है। कवि कहता हैः 'यह भूगोल नहीं जलगोल है।'[84] क्योंकि विश्व का 70 प्रतिशत जल ही है, बची हुई है धरती। इस जल का 98 प्रतिशत नमकीन पानी है, समुद्र के रूप में है जो पीने योग्य नहीं है। बाकी पीने योग्य पानी का आधा हिस्सा ही नदी और तालाब के रूप में विविध प्रांतों में है। मानव जाती के निरंतर विस्तार ने पानी की आवश्यकता बढ़ा दी। प्रचीन काल में पानी की आवश्यकता केवल मनुष्य एवं जीव-जंतुओं तक ही सीमित थी। किंतु मानव सभ्यता के विकास ने खेत-बगीचे का ही विस्तार ही नहीं किया अपितु उद्योग-धंधों का भी विकास किया जिससे जल की आवश्यकता तेजी से बढ़ रही है। उद्योग धंधों के विकास के कारण जल वितरण एक भयंकर आकार ले चुका है। जिस तरह धन के स्वामी, भूमि के स्वामी के रूप में मानव का प्रभुत्वमय रूप है उसी प्रकार उसने जल का स्वामी बनकर उस पर भी प्रभुत्व पा लिया। आम आदमी पानी के लिए तरस रहा है। उसके होंठ सूख रहे हैं, वह आक्रोश से चीख रहा है, परिष्कार का मार्ग नहीं दिखायी देता है। वह चिंताकुल है एवं बेचैन है। ऐसे में मानव को जल का आह्वान है, परिष्कार का मार्ग है जो जल ही सुझाता है।

जल का संबंध जन से रहा है। इसलिए प्रचीन काल से आधुनिक काल तक सभी प्रगतिशील विचारकों, चिंतकों एवं जल आंदोलन से जुड़े हुए आंदोलनकारियों ने जल की पक्षधरता को जन, जीवन, क्रांति एवं प्रकृति की नैसर्गिक देन के रूप में देखा है। भक्तिकाल के भक्त कवि भी जीवन को 'बिन पानी सब सून' मानते हैं। मानव सभ्यता और संस्कृति का प्रादुर्भव नदियों के किनारे हुआ है। आज भी किसी भी राष्ट्र के समुचित

[84] जलगीतः सृष्टि एवं दृष्टि, सं. डॉ.टी.वी.कट्टीमनी, पृ.सं. 2

विकास के लिए जल अनमोल तत्त्व है। इस जीवनदायी अमृत तत्त्व को आज व्यापारी व सरकार जन से छीन रही है। इस संदर्भ में प्रेमचंद की कहानी 'ठाकुर का कुँआ' 21 वीं शताब्दी के प्रारंभिक दशक में और ज्यादा प्रासंगिक सामाजिक और महत्त्वपूर्ण है।

विश्व स्तर पर जल संकट एक बड़ी समस्या का रूप लेता जा रहा है। सम-सामायिक समय में जल संकट एक सामाजिक मुद्दा बन चुका है। इससे तीसरी दुनिया के देश, विकासशील देश एवं प्रभावित हो रहे हैं। भारत इससे अछूता नहीं है। भारत के राज्यों के बीच खराब संबंधों के मूल में भी जल एक महत्त्वपूर्ण कारक बन रहा है। पारिस्थितिकीय तंत्र में आये बदलाव एवं पर्यावरण के प्रति बढ़ती हमारी लापरवाही का योग भी इसके लिए जिम्मेदार है। हमारे देश में पानी कभी भी बिकाऊ वस्तु नहीं है क्योंकि वह वस्तु नहीं विश्वास है। प्यासे लोगों को पानी पिलाकर स्वागत किया जाता था तथा बूंद-बूंद पानी को बचाकर रखने में हमारे बुजुर्ग विश्वास रखते थे। धीरे-धीरे पानी का वाणिज्यीकरण हुआ तथा देश को भर की नदियों के किनारे, बड़े-बड़े उद्यम स्थापित किये गये, यह उद्यम पूरी नदी के शुभ्र पानी पीकर, नदी भर प्रदूषित पानी छोड़ने लगे, शुरूआत से चले आ रहे जलचक्र टूट गये। पानी पर आश्रित मछुआरे, मल्लाहों ने मजदूरी करने और साइकल रिक्शा चलाने के लिए शहरों के रास्ते नापे हैं। आजकल हम 'उत्तर आधुनिकता' एवं 'भूमण्डलीकरण' की बात जोरों से करने लगे हैं, पर उनसे हमारे देश की न संपत्ति में वृद्धि हुई है न उसकी रक्षा करने में हम सफल रहे हैं। इन दिनों उपभोक्तावाद बाजार तंत्र का खेल और भी डरावना और जानलेवा हो गया है। अब जल राष्ट्रीय संपत्ति बन गयी लेकिन इस संपत्ति को राज्यों एवं पूंजीपतियों के हवाले किया गया है। जिसके कारण प्रत्येक राज्य को अपने हिस्से के लिए लड़ाया जा रहा है। सुप्रीम कोर्ट में जल के बंटवारे को लेकर जो पैंतरबाजी चल रही हैं तथा जिसके कारण हमारे गरीब राज्यों के जो करोड़ों रूपये खर्च हो रहे हैं।

पानी एक वैज्ञानिक सत्य है। लेकिन कवि ने स्पष्ट कर दिया है कि 'किंतु यह कोई वैज्ञानिक कविता रचना नहीं है। विज्ञान की भूमिका पर अंकुरित, दार्शनिकता एवं मानवता से समन्वित कविता है।'[85] कवि की विशेषता इसी में है कि पानी जैसी सामान्य चीज को कहीं भी फोकट में मिलने वाली चीज को (किसी एक जमाने में) उसके स्त्रोत एवं गंतव्य की यात्रा, उसके मूल स्त्रोत का वातावरण तथा बीच-बीच में, झरने में, तालाब सरोवर में, नदी में मिलने वाला विष, प्रदूषण आदि परिसर से संबंधित वैज्ञानिक चक्र तथा विषचक्र का चित्रण करते हुए भी 'जलगीत' कभी क्लिष्ट एवं नीरस नहीं बनता। तांत्रिक विषयों का चित्रण भी काव्य में सरल एवं स्वाभाविक ढंग से किया गया है। इस लम्बी कविता में कई विशिष्ट पहलू और रूप बरबस हमारे आँखों के सामने तैरने लगते हैं। यह वह कविता है जो सिंधु, हड़प्पा, मोहनजोदड़ो से लेकर बेबिलोनिया संस्कृति तक हमें ले जाती है, भगीरत की याद दिलाती है, गंगा, गोदावरी, तुंगभद्रा, कृष्णा, कावेरी के गौरवन्वित रूप तथा ब्रह्मपुत्र जैसी नदियों के रौद्र रमणीय रूप हमारे सामने तैरने लगते हैं। केवल हमारे देश में ही नहीं दुनिया में कहीं भी कोई गाँव हो तो वहाँ पानी का आसरा होता जरूर है। रेगिस्तान में भी गाँव बसते हैं ओयासिस के पास। सिंधी लोगों के अधिदेवता झूलेलाल हैं जो पानी के अधिदेवता हैं। शिवजी ने गंगा मैया को अपनी जटाओं पर धारण करके जलदेवता को एक उच्च स्थान दिया है।

कवि आज मानव को सचेत करते हुए कहता है कि हे मानव, पानी को जानना ही स्वयं को जानना है। यह काव्य संग्रह केवल कवितांश नहीं है बल्कि मनुष्य की चेतना, आत्मबोध, प्रकृति के प्रति उसके दायित्त्व बोध को सही दिशा प्रदान करने वाला जल वैचारिकी का अमूल्य रत्न है। कवि निरंतर सजग, सचेत एवं दायित्त्वशील नागरिक की

[85] जलगीतः सृष्टि एवं दृष्टि, सं. डॉ.टी.वी.कट्टीमनी, पृ.सं. 28

भूमिका निर्वाह करते हुए आज के नागरिक समाज को प्रकृति और जल से संबंध बनाने की ओर अग्रसरित करता है। निश्चित तौर पर अपने समय से कवि मुठभेड़ करता हुआ जल के गीत गाना चाहता है। यहाँ प्रस्तुत वर्णन जल है किंतु जल के माध्यम से कवि ने एक संपूर्ण जीवन चेतना और प्रकृति चेतना के साथ-साथ विश्व व्यवस्था पर नये सिरे से सोचने-विचारने पर बल दिया है। यह सोच-विचार केवल जल के निमित्त नहीं है, संपूर्ण मानव, विश्व और ब्रह्मांड के लिए है। जल को बचाना मानव जाति को बचाना है, संपूर्ण जीवनगत, प्रकृति और विश्व को बचाना है। हवा की तरह जल पर भी संपूर्ण प्राणिजगत का सहज अधिकार है किंतु आज स्थिति ऐसी भयावह हो रही है कि न हवा ही दूषणमुक्त है और न पानी ही। यही नहीं इस प्रदूषित जल के अधिकार से भी लोगों को वंचित करने की कोशिश की जा रही है। जमीन पर अधिकार और स्वामित्त्व पाने की तरह पानी पर भी अधिकार करने की कोशिश की जा रही है। इस कोशिश में राष्ट्र व्यवस्था और वाणिज्य व्यवस्था दोनों से सहायता मिल रही है। एक ओर तालाब, कुएँ, बावड़ी के जल सूख रहे हैं या प्रदूषित हो रहे हैं तो दूसरी ओर प्रकृति के इस सहज उपहार पर अधिकार कर उसे बेचने की कोशिश की जा रही हैं। यह नहीं समझ पा रहे हैं कि जल है तो जीवन है, जल है तभी सारा संसार है। मनुष्य की इस कुप्रवृत्ति का प्रतिरोध भी हो रहा है।

जलगीत वस्तुतः प्रकृति का गीत है। इस संपूर्ण प्रकृति को कवि ने चेतन रूप में प्रस्तुत किया है जो मनुष्य के सुख-दुख, जीवन-मरण, आनंद-उल्लास में सहभागी है। जल ही नहीं, नदी, झरने, पहाड़, मेघ, सागर सभी हृदयवान हैं। सब अपने लगते हैं। ये जड़ नहीं, निर्माण मनुष्य के कल्याण के लिए ही हुआ है। किंतु मनुष्य ! अपने ही अकल्याण में लगा हुआ है। पहाड़ों को तोड़ने में, नदियों को सुखाने में, हवा को विषाक्त करने में ही अपनी वीरता समझ रहा है।

कवि ने जलगीत के सत्ताईस गीतों में योजनाबद्ध रूप से संपूर्ण जलचक्र-बूंद से समुद्र और समुद्र से बूंद तक का वर्णन अत्यंत आत्मीय और प्रभावकारी रूप में किया है। जल का कोई पक्ष, कोई तत्त्व, कोई रूप यहाँ अछूता नहीं है। कवि ने एक ओर पर्वत-पहाड़, नदी-झरने, कुएँ-तालाब, समुद्र-हिमखंड और ओसकण से लेकर वर्षा की झड़ी तक का वर्णन किया है, वहीं दूसरी ओर जल के माध्यम से समस्त मानवीय संस्कृति के विकास की ओर भी संकेत किया है। मानवीय संस्कृति का विकास वस्तुतः जलसंस्कृति का विकास है। अधिकांश सभ्यताएँ नदियों के किनारे विकसित हुई। इसलिए कवि सरयू और वाल्मीकि, कालिदास और आषाढ़ के मेघ, गोदावरी और तेलुगु के आदि कवि नन्नया को एक साथ याद करता है। जलगीत की कविताओं में कवि ने एक ओर पानी के महत्त्व का वर्णन किया है तो दूसरी ओर उसमें संपूर्ण भारतवर्ष की प्रकृति और वैश्विक चेतना को भी समेट लिया है। यह पानी की भूमण्डलीय चेतना है। यहाँ विंध्याचल, सतपुड़ा, हिमालय, सोन, नर्मदा, कावेरी, ब्रह्मपुत्र, यमुना, कृष्णा-गोदावरी के साथ-साथ नयागारा, कोलारोडे, विक्टोरिया जलप्रपात है तो आंध्र कुंटाला है और हैदराबाद का हुसेन सागर भी है। मेघ सरहदें नहीं बनाता, समुद्र संकरीला नहीं किंतु मनुष्य ने धरती को सीमाओं में बाँध लिया और पानी बाँधने की तैयारी है।

कवि को धरती प्यारी है क्योंकि यहाँ जल है। चाँद बहुत सुंदर है किंतु जलविहीन चाँद किस काम का ? वहाँ न सिर झुकाकर कूदने वाले झरने हैं, न नयागारा है। यही जल पंचभूतों का समन्वयकारी है। लेकिन कवि पूर्णतः आशावादी है। अरावली की पहाड़ियों में जैसे एक भगीरथ ने जन्म लिया है वैसे ही अनेक भगीरतों का आविर्भव होगा। लोग जल के मंदिर बनायेंगे क्योंकि उसी में वास्तविक भगवान है। जलगीत की कविताओं में केवल जल का गुणवान नहीं बल्कि जल को केंद्र में रखते हुए संपूर्ण ब्रह्मांड के मध्य धरती का सौंदर्य निखरना है, उसकी विशेषता देखती है। यह दृष्टा देशकाल की

सीमा से बाहर आकर संपूर्ण पृथ्वी का प्रतिनिधित्व करने वाला मनुष्य है। यह जल के माध्यम से समस्त परिवेश और प्रदूषण पर चेतन मनुष्य की गहरी चिंता है। इसमें नलगोंडा से लेकर अफ्रीका तक फ्लोरोसिस बीमारी से पीड़ित लाखों के प्रति हमदर्दी है। कवि की चिंता है कि हम पानी को नहीं बचायेंगे तो कल चित्र रंगों के लिए भी पानी नहीं मिलेगा।

कवि गोपि की इस लम्बी कविता में पानी का तनाव है गुस्सा नहीं, तड़प है उत्तेजना नहीं, करूणा है क्रंदन नहीं, विद्रोह की चेतना है उबाल और ध्वंस नहीं। यहाँ पानी के महत्त्व एवं अनिवार्यता को उकेरा है तथा उसके कल्याणकारी पहलुओं को सामने रखते हुए कवि गोपि ने पानी के साथ होते रहने वाले कमर्शियल करामातों को भी इस लम्बी कविता में अभिव्यक्त किया है। ईश्वर रचित ब्रह्मांड के गर्भ से पानी की अनेक जलराशियाँ प्रवाहित हो रही हैं। हमारी कल्पना से परे अथाह गहराइयों में इनका वास है। सृष्टि के प्रारंभ से ही यह जल कर्णप्रिय ध्वनि के रूप में प्रवाहित हो रहा है।

कौन-सा ऐसा प्राणी है जो जल का नाम सुनते ही भीतर तक न भीग जाये। पशु-पक्षी और मनुष्य सभी के मुखमंडल जल स्पर्श से दमक उठते हैं। तीन परमाणुओं की लीला से मनभावन जलमोती बरस रहे हों। दो हाइड्रोजन (Hydrogen) के परमाणु, एक ऑक्सीजन के परमाणु का समन्वय है जल। पृथ्वी की हथेली पर नाचती नदियों की लहरों की हलचल, हर लहर का उठना, गिरना, गिरकर फिर उठना हर पल एक नये संगीत को जन्म देता है।

हम विस्मित हो जाते हैं कि यह जल कहाँ से आया है। इसका उद्गम कहाँ से है ? यह कितने लोकों से होकर पृथ्वी तक पहुंचा है ? कितने रहस्यों और प्रकाश पुंज को इसने अपने भीतर छिपाया हुआ है ? कवि नीलांबर में छाये पयोधर का उल्लेख करते

हुए कहते हैं कि बरसने वाले जल ! हमारा अस्तित्त्व तुम्हीं से है। हे अपूर्व जीवकण ! हम तुमसे अलग होने की कल्पना भी नहीं कर सकते। तुम्हारे स्पर्श मात्र से यह वसुंधरा मातृत्त्व के सौंदर्य नित्य सद्यप्रसूता होती है। तुम प्रत्येक को पूर्णता देने वाले जीवकण हो। तुम जहाँ रूके, जहाँ भी तुमने अपना पड़ाव डाला, वही स्थल जलाशय में परिवर्तित हो गया। असीम नीलांबर ने इस धरती पर तुम्हारे रूप में कृपा की वर्षा की है।

कवि कहते हैं, पृथ्वी का तीन चौथाई भाग जलावरण है। झरने, नहरें, नदियों और सागर से आच्छादित यह भूमि जलचर्य धारिणी-सी प्रतीत होती है। सात समुद्र इस पृथ्वी के एक बड़े भाग के घेरे हुए हैं। सात समुद्र कहने भर से वे एक दूसरे से अलग नहीं हो जाते। इनका जल एक ही है। ये मिलकर ही महाजलधि कहलाते हैं। इतना पानी होने के बावजूद सारे समुद्र का पानी पीने योग्य नहीं है। पानी का 1% ही पीने योग्य पानी है सारे प्राणियों के लिए है। इस प्रकार धरती पर प्राप्त होने वाले प्राकृतिक संसाधनों में 'जल' विशिष्ट संसाधन (Strategic Resource) होने को प्रमाणित करता है। मनुष्य का हृदय सागर सा विशाल नहीं है। जिस मिट्टी पर रहता है उसी पर अपना साम्राज्य स्थापित कर लेता है और अहंभावना से इतराता है। वह भूल जाता है कि भूमि के रूप में जल को उपरितल पर मिट्टी का भाग कम है। संपूर्ण जगत में जल का ही साम्राज्य है। मनुष्य के इस अज्ञान के लिए मन ही मन मुसकुराने वाली माता के रूप में जल को अभिवर्णित करते हुए मनुष्य की अहंभावना पर कवि ने व्यंग्य किया है।

यह जल झरनों के रूप में झरता है। झरनों से झरना जल-नदियों से जा मिलता है। इन बहती नदियों से कई जल / शाखाएँ प्रस्फुटित होती हैं। यही जल धाराएँ धरती को सुंदर आकार देती है। नदियाँ हर काल में कल कल स्वर में बहती आयी हैं। विभिन्न सभ्यताओं के विकास के मूल में नदियाँ ही है। हमें भौगोलिक रहस्यों का ज्ञान नदियों ने

कराया है। प्रकृति में समाए अनगिनत रहस्य सूत्रों से हमें जल ने ही अवगत कराया है। यथा-

“जल एक संस्कृति है
जल एक ऐतिहासिक कृति है
जल जीवन के समस्त विन्यासों की
आविष्कृति है।”[86]

कवि कहते हैं, जल अपने आप में संस्कृति है क्योंकि जल के अभाव में संस्कृतियों का विकास संभव नहीं है। इतिहास का रचयिता जल ही है। हमें जीवन सांचे में ढालने का कार्य जल ने ही किया है। जल ही संपूर्ण ब्रह्मांड की रग में समाया हुआ अद्‌भुत रचनाकार है। जैसे-

“आदमी चुप रहा कभी ?
पैरों तले मिट्टी को पट्टाभिषिक्त किया,
और कहा- यह भूगोल है।
जल माता मुस्कायी
मनुष्य की अहंभावना को,
सोचा-देखेगी-फिर कभी।”[87]

सूर्य की उष्णता की ग्रहण कर समुद्र गर्म बदलियों को जन्म देता है और यो नीली घटाएँ गगन में पहुंचकर बाला के केशों की तरह खुलकर बरस जाती हैं और अपने आप को मिटाकर अमृतरूपी जल से धरती को अमरत्व प्रदान कर जाती है। विशाल हृदय

[86] जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), पृ.सं. 15
[87] वही, पृ.सं.15

समुद्र, इस जगत को जीवंत रखने के लिए नयी बदलियों को जन्म देना अपना कर्म समझता है। उदाहरणार्थ-

“वर्षा का प्रसव कर

बदलियों ने दम तोड़ दिया

जन्मदात्री के पेट में मरोड़ ही रह गया

बदलियाँ अल्पायु ही हैं, फिर भी

धरती की

आयु में इजाफा ही कर गयी।”[88]

संभवतः वह इस बात से विचलित है कि उसका जल प्यास नहीं बुझा सकता। उसका जल किसी काम आ जाये यही उसकी चाह है। कवि इस सारी प्रक्रिया का मार्मिक चित्रण बिंबों के माध्यम से करता हैः

“निरंतर संतान को खोकर भी

सलोनी नित्य गर्भवती सी है

समुद्र की रस भरी गगरी है।[89]

इन पंक्तियों का करुण स्वर हृदय को विकल कर देता है। समुद्र अक्षय कोष है। जितना जल दान करता है उतना ही भरा प्रतीत होता है। जगती को तृप्त करने के लिए स्वयं को घटाओं में सिमटा लेता है। सागर धीर गंभीर है, नदियाँ उससे आकर मिलेंगी इसी विश्वास से वह सतत् क्रियाशील रहता है। उसकी वायु समान तीव्र गति देख ऐसा प्रतीत होता है मानो वह गगन में छायी अपनी ही बदलियों का स्पर्श करना चाह रहा हो।

[88] वही, पृ.सं. 16

[89] वही, पृ.सं. 16

"अपनी रहस्यमयी गहराइयों को टटोलते हुए

निरंतर साँस लेता है सागर का

उच्छवासित वक्षस्थल"[90]

उक्त छंद कहता है समुद्र को एक साधारण द्रव समझ लेना अज्ञानता है। अगर वह सीमा तोड़ दे तो प्रलय रूपी उपद्रव ही है, किंतु यह समुद्र वास्तव में ज्ञान की गहराई है। अतीत और वर्तमान को जोड़ने वाला महत्त्वपूर्ण सूत्र है। कल हम क्या थे और आज हम क्या हैं ? यह समुद्र की गहराई ही बताती है। यह अपने भीतर कितने ही कालखंडों को संजोये हुए हैं। सही मायने में समुद्र एक जीवन सत्य है। सागर की लहरें हमें पुकारते हुए कहती हैः

"आओ स्वयं को जानो"[91]

कवि हृदय जल में मातृ हृदय को देखता हैः

"जल का मातृ हृदय

द्रवणशीलता का निलय है ना।

मेघों को ऊँचाइयों तक फेंक दिया तो

निश्चल पर्वतशिखरों पर

बदलियाँ पगड़ियों जैसी बैठ गयी।

मरकतों जैसी हरीतिमा उग आयी।"[92]

[90] वही, पृ.सं. 17

[91] वही, पृ.सं. 17

[92] वही, पृ.सं. 18

जल के मातृ-हृदय के वात्सल्य के कारण ही पर्वत शिखर भी हरे-भरे हो गये। कितना सुंदर दृश्य है। उर्वर बदलियाँ भी अगर उपेक्षा की शिकार होती हैं तो प्राणदायिनी का प्राणघातिनी बनना क्या होता है, कवि बड़े ओजपूर्ण शब्दों में व्यक्त करते हुए संसार को यह समझाने का प्रयास करता है कि किसी को तुच्छ नहीं समझना। उदाहरणार्थ-

"रूई को फाँक समझ कर उपेक्षा करेंगे, तो
प्रलय की झंझा बन जायेंगे।
मेघों को क्रोध आया तो
नदी-चरण से पछाड़ेंगे
पहाड़ों को उखाड़ फेकेंगे
गुफाओं को ढहा देंगे
किनारों को मिटा देंगे।
प्राणदायिनी,
प्राणघातिनी बनना यही है।"[93]

किंतु जल का हृदय कोमल ही है। समुद्र, गहन और ज्ञान कोश ही नहीं है अपितु अपनी संतान को जीवन से सींचने वाली माता भी है। इसका नीर चेतन को ही नहीं, जड़ तक को भी जीवन देता है। पर्वत शिखरों पर अपनी कृपा वर्षा करता है। उजड़े वृक्षों को सींच, कोमल कोंपलों को जन्म देता है। जल की महिमा देखिए, इसके स्पर्श मात्र से जड़ चेतन हो जाता है और निर्जीव में प्राण आ जाते हैं। पहाड़ियों को नीर, पौधेरूपी जीवन फूट पड़ता है। गगन झरता है और झरने बहने लगते हैं। शांत सागर की चंचल संतान

[93] वही, पृ.सं. 18

बदरी ही है जो पहाड़ों से टकराकर झरनों का रूप ले, बह उठती है। ये झरने नदियों से जा मिलते हैं और नदियाँ सागर के जुदाई आकर्षण में बंधी, उससे जा मिलती हैं। जैसे-

"यह एक
निरंतर जल चक्र है
चक्रधारी कौन है !?
और कौन ?
कर्म-साक्षी नक्षत्र
सूर्य की ज्वाला नेत्र।"[94]

उक्त छंद का भाव यही है कि जल का कार्यक्षेत्र एक ऐसी चलने वाली अनवरत प्रक्रिया है। प्रश्न उठता है कि इसके पीछे कौन सी शक्ति कार्य करती है ? कवि कहते हैं इस जलचक्र का धारक इस ब्रह्मांड का उच्च नक्षत्र सूर्य है। जिसका प्रबल तेज, 'ज्वाला' के रूप में भी अमृत वर्षा कर जगत का कल्याण करता है।

इस अध्याय में जल का अस्तित्त्व (Occurrence), विस्तार (Extension), प्रकृति (स्वभाव) (Nature), परिणाम-क्रम (Evaluation) जैसे वैज्ञानिक बिंदुओं की काव्यात्मक अभिव्यक्ति हुई है। यथा-

"सृष्टि की प्रवृत्ति है-
बदलाव को भी बदलना
नित्य चेतनाशील

[94] वही, पृ.सं. 19

क्या जल नहीं बदलेगा ?”[95]

सृष्टि का आंतरिक गुण ही है नित नया परिवर्तन। जीवन भी शुभ परिवर्तन की आशा में व्यापित हो जाता है। सुखद फल ही जीवन का ध्येय है। जीवनदाता जल भी परिवर्तन की इच्छा से नये-नये रूप धरती है। वह एक कुशल चित्रकार है जो व्योम को कैनवस बना अनगिनत चित्रों की रेखाएँ खींचता रहता है, उन रेखाओं को सुंदर आकृति प्रदान कर उनमें अद्‌भुत रंग भरता जाता है। कभी चंचल बालक की तरह हिमशिलाओं में स्वयं को बंदी बना, झरोखों से झांकता है। इसमें भी परहित छिपा है। यह प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य में आशातीत वृद्धि करने वाली छवि है। ऐसा प्रतीत होता है मानो जल ने शुभ्र परिधान पहन लिया हो। सौंदर्य पारखी की दृष्टि में गगन से झरने वाले हिमकण गगन बाला के केशों (बदरी) से गिरे श्वेत पुष्प हैं। ये हिम कण हर एक फूल पात पर आच्छादित हो मनोरम दृश्य की रचना करते हैं।

प्रकृति की इस छटा से पंचभूत प्राणी सोच में पड़ जाता है कि यह परिवर्तन कैसे आया। हिमानी भी संभवतः यही चाहती है कि उसके स्निग्ध रूप से मोहित प्राणी ठिठक कर उसी को निहारें :

“कितनी मनोहर है यह हिमानी

शुभ्र छवि सोने की

शायद, हल्दी का रंग अभी चढ़ा नहीं !

आकाश के घुँघराले बालों से झरा

यह श्वेत पुष्प तो नहीं है !!”[96]

---

[95] वही, पृ.सं. 20

[96] वही, पृ.सं. 21

तुषार खंड को श्वेत पुष्प के रूप में चित्रण कवि की उर्वर कल्पना का परिचायक है। किंतु यह हिमानी रूठ गयी तो कैसी भयावह स्थिति होगी इसका अंदाज भी कवि को है।

कवि जानता है कि प्राकृतिक सौंदर्य में यह भी सत्य छिपा है कि यदि ये हिम शिलाएँ टूटकर बिखर गयीं तो अपने साथ अनेकों को बहा ले जायेंगी। जल का गुण स्नेह, त्याग और उदारता का है यह सभी को विदित हो लेकिन जल का हिम रूप अपने भीतर द्वंद भी रखता है यह भी कटु सत्य है। यथा-

"शान्त हो हिमानी!

शान्त हो, नीहार जननी !!

सो जाओ

सोते हुए तुम और भी अच्छी लगती हो।"[97]

हिमानी के भीतरी उद्वेग से परिचित करबद्ध निवेदन करता हैः हे हिमानी, हे जल जननी। तुम्हारा सुप्त शांत रूप और भी अधिक सुंदर है, हमारे नेत्र सदा इसे निहारना है। यथा-

"पाँच धातुओं से समन्वित है संसार

पाँच उंगलियाँ मुट्ठी बनती हैं, ऐसा ही

सबका योग है

सृष्टि की मातृका है।[98]

[97] वही, पृ.सं. 22

[98] वही, पृ.सं. 23

उक्त छंद में कवि कहते हैं, यह सृष्टि, यह काया, पाँच धातुओं-जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और व्योम का योग है। ये मुट्ठी की तरह एक दूसरे से बंधे हैं। एक दूसरे से मिलकर बनते हैं और साथ ही मिटते हैं। इनके 'ऐक्य' भाव से सृष्टि गति पकड़ती है। ये पाँचों तत्त्व बीते कल के भी साक्षी हैं और वर्तमान भी इन्हीं पर टिका है। जल तत्त्व जीवन का द्योतक है, वायु प्राण का कारक है, अग्नि ऊर्जा का प्रतीक है, मिट्टी रचयिता और आकाश तत्त्व इन सभी का साक्षी है। इस प्रकार जल की तात्विकता की चर्चा करते हुए ही कवि व्यंग्य करता हैः मिलकर रहना किसी के लिए भी उतना आसान नहीं।

इन पाँच तत्त्वों में जल ही प्रमुख रूप से व्याप्त है। आकाश से झरता है, पृथ्वी पर मचलता है, वायु में भाष्प बन घुलता है। अग्नि भी इसकी धरोहर है जो प्रकाश बन अंधकार मिटाती है, जीवन को गति देती है। वास्तव में जल चालकशक्ति है।

कवि सचेत करता है कि मानव के श्रेय का ध्यान निरंतर जिन पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश) को समन्वित करना मनुष्य का काम है। जैसे-
यदिः

"भूतों को क्रोध आया तो
भूत ही बन जाते।
भूतों का दिमाग फिर गया तो
प्रलय के गीत बन जायेंगे।
वे गीत शांत हुए तो ही समन्वय है
समन्वय ! तुझे नमस्कार !"[99]

[99] वही, पृ.सं. 23

इन प्राकृतिक संसाधनों पर आधिपत्य की आकांक्षा मनुष्य को महंगी पड़ेगी इसलिए इनके समन्वय में ही मानव जाति का कल्याण है।

जल अमृत है, जिसे ग्रहण कर आत्मा पवित्र हो जाती है। कष्ट दूर करने वाली औषधी है। संतप्त हृदयों को शीतल करता है। देवत्व के गुणों से पूर्व यह जल निष्प्राण को जीवन देने वाली संजीवनी बूटी है। धरती के अंतःस्थल पर पहुंचकर नये चीजों को पल्लवित करता है। जल ऐसी मधुर तान छेड़ने वाला संगीतज्ञ हैं, जिसकी रागिनी पर हर मन नाच उठता है।

यह अध्याय समन्वय से प्रारंभ होकर सृष्टि में ही नहीं मानव जीवन में भी समन्वय भाव के महत्त्व को रेखांकित करता है। जैसे-

"हाँ वही सूर्य है
उष्णता-उज्ज्वलता का सम्राट
विश्व सारा वह स्वयं है।"[100]

सौरमण्डल के ग्रहों की चर्चा करते हुए कवि कहता हैः

सूर्य ही सही अर्थों में जल का वाहक है। इसीलिए प्रकाशकों के प्रकाशक, सकल जगत के उत्पादक और परम पिता परमेश्वर के रूप में आराधना की जाती है। सूर्य को उसके संपूर्ण रूप में केवल ज्ञान चक्षुओं से ही जाना और समझा जा सकता है। यह सूर्य सर्वशक्तिमान और तारामण्डल का अधिकार है।

स्वभाव से मनुष्य असंतुष्ट प्राणी है। जल की थाह पाने के लिए भटकता रहता है। गगन से छलकने वाले, पहाड़ों से झरने वाले और धरती पर नदी के रूप में बहने वाले और अनमोल निधि सागर के रूप में विराज रहे जल से भी वह संतुष्ट नहीं है। सूर्य को छू नहीं सकता इसलिए अन्य ग्रहों के चक्कर लगा रहा है, जो व्यर्थ है।

---

[100] वही, पृ.सं. 27

बुध एवं आदित्य की जोड़ी को बहुत सराहा जाता है परंतु आदित्य के साथ भर से बुध जलदाता नहीं बन सकता। संजीवनी को जानकर शुक्र प्रेम की रस धारा तो बहा सकता है लेकिन भीतर से शुष्क है। मेघों से अलंकृत देवताओं के गुरू बृहस्पति ज्ञान के सागर हैं परंतु स्वयं जल से वंचित हैं। जीवन के स्त्रोत एक मात्र सूर्य देव ही हैं और इनकी कृपा केवल धरती को प्राप्त है। कितनी भाग्यवान है धरा जो नदी, झरने और सागर से अलंकृत है। इसके वक्षस्थल पर ही जल रह सकने का साहस कर पाता है। करोड़ों संतप्त हृदयों और प्यासों प्राणियों को तृप्त करने का सौभाग्य पृथ्वी को ही है प्राप्त है। पृथ्वी की महानता का गुणवान करने वाला मनुष्य 'टेलिस्कोप' से दूसरे ग्रहों में जल खोजने और रहने का मन बना रहा है। इसके लिए वह ग्रहों के चक्कर काट रहा है लेकिन इस सत्य को झुठलाया नहीं जा सकता कि अंततः उसे पृथ्वी की महानता के आगे सिर झुकाना पड़ा है। यथा-

"विश्व गगन में भ्रमणशील मनुष्य
सिर झुका कर
धरती का नमन कर रहा है।"[101]

क्योंकि :

"कितना भी महान हो
सूर्य के अस्तित्व की
रंगभूमि है- पृथ्वी
उसके अनन्त सौंदर्य की
यवनिका है- पृथ्वी

[101] वही, पृ.सं. 29

निरंतर ज्वलनशील ज्वालामयी होठों को

आर्द्र करने वाली करुणमयी है- पृथ्वी।”[102]

विश्व गगन (SPACE) द्वीप एवं उपमहाद्वीपों तक विचरण करने वाला मनुष्य सौरमण्डल में हरी-भरी धरती माता को प्रणाम करते हुए प्रकृति का दर्शन कर रहा है। पानी की छिपी शक्ति को उजागर करते हुए कवि लिखते हैः

“पानी की दो आँखें हैं

एक घनीभूत होती है

एक भाप बनकर उड़ जाती है।”[103]

पानी के दो आंतरिक गुण हैं- भाप और वायु। ताप पानी को भाप बना देता है और वायु जलवृष्टि में ही सहायक नहीं वरन् जल को अग्नि में बदलने का भी कारक है। जल जलता भी है भाप बनकर उड़ता भी है फिर जल बनता है सभी रूपों में यह सभी प्राणियों की अमूल्य धरोहर है।

इसी जल से प्रकृति अपने को संवारती और निखारती है। जल भरी गगरी वायु, बादल का रूप धर बरसती है और प्रकृति इस जल से नहाकर खिल उठती है। चारों दिशाओं में उल्लास की सुष्मा बिखर जाती है।

जल के भंडार पर चाँद की गिरती शीतल किरणों का दृश्य अनुपम है, जो प्रकृति प्रेमी को मंत्रमुग्ध कर देता है। कवि कहते हैं- क्या मानव के लिए यह सौंदर्य पर्याप्त नहीं ? हम इस प्यारी सलोनी धरती पर रहते हुए भी मृगमरीचिका की तरह चाँद पर जल-

[102] वही, पृ.सं. 28

[103] वही, पृ.सं. 30

जीवन ढूंढने का मोह छोड़ सके। दूर से सुंदर प्रतीत होने वाले चाँद पर न वसंत की सुरभी है न जल का अपार सागर है, फिर क्यों हम समीप के सौंदर्य से भाग रहे हैं।

यह जल ही है जिसने मनुष्य के तृषित मन को अपने बहते झरनों से तृप्त किया है। प्रकृति के संतुलन को बनाये रखने में जल का ही तो हाथ है। जल पर, उसके उद्गम पर कितने ही शोध हो रहे हैं लेकिन जल की थाह पाना कठिन है। सृष्टि और जल अविच्छिन्न हैं। यथा-

"हवा पानी की खिलवाड़ में

बूंद का गन्तव्य किस ओर ?

बूंद का साहस कैसा साहस है ?"[104]

गगन से धरती तक की यात्रा करने वाली हर बूंद अपना साहस लेकर आती है। जल की मित्र हवा, बदली से छलकी बूंदों को अपने साथ बहाकर कहीं भी बरसा देती है। शून्य में मिलते ही वह उसी में समा जाती है वही सीपी में गिरी बूंद मोती बन जाती है। जंगल में बरसा बूंदें कोंपल बनकर जीवन में संगीत घोल देती हैं। कवि कहते हैं, बूंद शाश्वत है, वह जिसमें गिरती है उसका स्वरूप ले लेती है लेकिन मिटती नहीं है।

कवि की कितनी अनोखी कल्पना है, वे लिखते हैं जल 'गीत' तो है, जिसके हर स्वर में प्रत्येक का स्वर मिल जाता है। हवा के झोकों के साथ नीर परी बन नाचती है। जैसे-

"पौधे, कितनी कठिनाई से

बीहड़ जमीन को चीरकर बाहर आते हैं

पानी हाथ बढ़ाता है तो

[104] वही, पृ.सं. 32

तनकर खड़े हो जाते हैं।"[105]

जल तो सभी को तारने वाला है। जल के स्पर्श मात्र से जड़ चेतन बन जाता है, वृक्ष गर्व से सिर उठा लेते हैं। कुसुम खिल उठते हैं। पृथ्वी के भीतर भी जल सक्रिय रहता है और नदियों के माध्यम से हर कंठ का प्यास बुझाता है। पंच तत्त्वों में से एक जल केवल कंठ को तृप्त और शरीर को स्वच्छ करने वाला द्रव्य नहीं है, यह पंचभूत से निर्मित मानव शरीर का अविभाज्य हिस्सा है। मानव हृदय को धड़कने वाला परम तत्त्व है। रुधिर की हर बूंद में इसका वास है। इसलिए कवि कहता है :

"षट् पंखुड़ियों का हे अणु-पुष्प !

मानव देह में दौड़ने वाला

हे रुधिर कमल !

तुम्हारी तुलना नहीं।"[106]

मनुष्य को गति देने वाले जल को 'जीवन' कहा गया है और कवि मानता है कि मानव जाति के लिए जल की उपादेयता के बारे में हम ठीक से जानते ही नहीं।

अपने अधिकांश छंदों में मनुष्य और जल के अटूट संबंधों की ओर बार-बार इंगित करते हुए मनुष्य को सचेत करते हैं कि संभल जाओ, जो तुम्हारी रगों में दौड़ रहा है उसका अनादर मत करो। यही तुम्हारे नेत्रों को आर्द्रता प्रदान करता है। सुख और दुख दोनों अवस्थाओं का साथी बन छलकता है। यही नहीं जल स्वेद कण के रूप में तुम्हारे हमारे श्रम का भी साक्षी और साथी है। यह तो जीवन को अर्थ देता है उसकी महिमा को भी हमें सही अर्थों में समझना होगा।

---

[105] वही, पृ.सं. 33

[106] वही, पृ.सं. 34

इस खंड में कवि जल के स्त्रोतों का अन्वेषण करते हुए शहरी संवेदना के साथ मनुष्य के अश्रु-कण एवं शरीर के श्रम कणों में जल के अस्तित्त्व का अनुभव करता है जो कवि की मर्मस्पर्शी कल्पना के रूप में अभिव्यक्त हुई है। इतना ही नहीं वैज्ञानिकों के सामने चुनौती रखता है। जैसे-

"श्रम की उपज

यह लवण महा समुद्र

किस शक्ति जल का प्रतीक है ?

वैज्ञानिकों !

इसका जरूर विश्लेषण करो !

गहराई से व्याख्या करो।"[107]

जल की महिमा अपरंपर है। यह आत्मा की शुद्धि करने वाला परम ज्ञानी प्रबोध गुरू है। रस ज्ञान करने वाला ही जीवन का आधार है। कवि कहता है जल नहीं मुखर है। इसकी प्रत्येक भंगिमा कुछ न कहते हुए भी मनुष्य को बहुत कुछ समझा जाती है। जल की महत्ता जितनी ऊंची है वह उतना ही उदार, नम्र और कोमल हृदय है। जल के विषय में बहुत कुछ जानने का दावा करते हैं लेकिन इसके कई रूप अनछुए ही रह जाते हैं। जैसे-

"हे जल !

आज भी तुम

रहस्यवादी पिटारी हो

[107] वही, पृ.सं. 36

नव नव फूलों को

विकसित फुलहारी हो।”[108]

वास्तव में जल पुष्प है, जिसकी सुगंध को बांधा नहीं जा सकता। जल की चर्चा की जाये तो ज्ञात होगा कि इसकी कृपा तो अंतहीन है। यह मनुष्य के अंतस्थल तक को सुवासित करने वाला पुष्पगंध है।

जल धारा के रूप में आकर, भाप बनकर उड़ जाने की, जल का क्रम परिणाम कवि को चकित करता है। वह जल से प्रश्न करता है :

“हे जल !

जल रूप में आकर

वायु रूप में जाने की

यह काम-रूप की विद्या के गुरू कौन हैं ?”[109]

जल बिना जीवन असंभव है। रोटी-पानी के रिश्ते से कोई इनकार नहीं कर सकता। यह संबंध तो सभ्यता के प्रारंभ से है। जल घड़े को भी गढ़ता है और इंसान को भी। इसी जल की चाह में साइबीरिया से बगुले आकर कोल्लेरू[110] सरोवर में अपना पड़ाव डालते हैं। मनुष्य क्या पशु-पक्षी व कीट-पतंगे भी जलाश्रित प्राणी हैं। सृष्टि का समग्र रूप जल निर्मित ही है। गुफाओं के रचनाकार जल ही तो है जिसने पत्थरों को तराशकर उन्हें कितने रूपों में ढाला है। मानव ने उन्हीं गुफाओं को अपनी उर्वर कल्पना से शिल्पाकृतियों के रूप में जन्म दिया।

---

[108] वही, पृ.सं. 40

[109] जलगीतः सृष्टि और दृष्यि, सं. प्रो.टी.वी.कट्टामनी, पृ.सं. 45

[110]जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), पृ.सं. 41

वाल्मीकि को महाकाव्य रामायण लिखने की प्रेरणा सरयू नदी ने दी थी। कालिदास के श्लोकों के प्रेरक आषाढ़ के मेघ ही तो थे। गोदावरी के संबंधों को नकारा नहीं जा सकता। महाभारत काव्य का अतिसुंदर अनुवाद नन्नया[111] ने गोदावरी तट पर ही किया था। अल्लसानि पेद्दना[112] का हिमालय प्रपात का चित्रण आज भी तेलुगु कविताओं में उच्च शिखर पर विराजमान है। पोतना[113] ने श्रीमद् भागवत का सुंदर अनुवाद किया। उसमें नदियों और तालाबों के आत्मीय चित्र हैं। कबीर के समकक्ष पाये जाने वाले वेमना[114] तथा अन्य सभी ने पानी को जीवन शक्ति माना है। कवि कहते हैं यदि हमने पानी के महत्त्व को, उसकी विश्व की कल्याण भावना को समझ लिया तो समझो हमने अपने आपको समझ लिया है क्योंकि जल ही हमारी प्रेरणा शक्ति है। जैसे-

"जल को चाहना

जीवन-सार की आकांक्षा ही तो है !"[115]

3.4. 'जलगीत' का विश्लेषण

कवि जल की वेदना को प्रकट करते हुए लिखता है, आज पानी की गति में हमें उल्लास दिखायी नहीं देता। ऐसा प्रतीत होता है मानो जलधारा किसी बोझ से दब गयी है। जल से समृद्ध इतिहास और साहित्य की सभ्यता से असंतुष्ट प्राणी महत्त्वाकांक्षा की होड़ में भूल गया है कि जिस पर प्रहार करने जा रहा है वह उसके शरीर का हिस्सा है।

---

111 ग्यारहवीं शताब्दी के कवि। तेलुगु में 'महाभारत' को अनूदित करनेवाले तीनों कवियों (कवित्रय) में प्रथम। तेलुगु के वे ही आदिकवि माने जाते हैं।

112 सोलहवीं शताब्दी के तेलुगु के प्रबंध-कवि तथा कृष्णदेवराय के दरबारी कवि

113 पन्द्रहवीं शताब्दी के तेलुगु कवि और तेलुगु-काव्यजगत् के 'आंध्र महाभारत' के प्रणेता

114 सत्रहवीं शताब्दी के तेलुगु के महान सन्त कवि, जो कबीर के समकक्ष माने जाने वाले कवि हैं

115 जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), भूमिका के अंतर्गत, पृ.सं. 45

स्वार्थांध मानव औद्योगिक क्रांति के नाम पर जीवन देने वाले, रग रग में बसने वाले जल से उसकी पवित्रता, निश्छलता और निर्मलता को दूषित कर रहा है। अपनी महात्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए प्रकृति से उसका स्वाभाविक सौंदर्य, बादल से उसका जल और समुद्र से उसकी गहराई छीन ली है। इसका दुष्परिणाम हमें ही भोगना पड़ रहा है। ऋतुएँ अपने आगमन का समय भूल गयी हैं। संतुलन डगमग गया है। वसंत ऋतु के आगमन की बाट हो रहे बेचैन कवि के मुख से यह छंद निकल पड़ा :

"समस्त सृष्टि के संगीत को

बेसुरा करने वाली प्रगति

क्या यही है प्रगति ?"[116]

कवि चिंतित हैः

"जल की यह शताब्दी

क्या प्रदूषण की शताब्दी है ?"[117]

"यह शताब्दी है

जल को धन के दंश की !"[118]

धन के इस दंश से जल को बचाने के लिए कवि मानव को सचेत करता है। भारत के किसान की यह सच्चाई है कि वह वर्षा ऋतु की प्रतीक्षा में मौसम के द्वार पर आँखें गड़ाये रहता है। उसके जीवन का एकमात्र सहारा खलिहन ही है। उसने खेतों को रोप,

[116] वही, पृ.सं. 47

[117] वही, पृ.सं. 47

[118]वही, पृ.सं. 47

बीजों को बोया है, अब वह यही आस लगाये बैठा है कि बादल बरसेंगे, उसके खेतों को सींचेंगे और फसल लहलहा उठेगी। उदाहरणार्थ-

"कृषक!

बैठा है आकाश में आँखें गड़ाकर

अनुभव-पंचांग के अलावा, वह

और कुछ नहीं जानता।"[119]

लेकिन अफसोस, आज गरीब किसान एक घड़े पानी के लिए दर दर भटक रहा है। घड़े से एक बूंद भी न छलक जाये इसका उसे भय है। लेकिन मीलों दूर तक फैले रेगिस्तान में जल का स्वप्न सत्य में बदल सकेगा कभी ? धरती के आँचल पर दरारों ने किसान के माथे पर चिंता की सिलवटें उगा दी है। जिस आकाश पर जलकणों का साम्राज्य था, आज वहाँ गिद्ध मंडरा रहे हैं। भयभीत किसान अपने सपने चूर चूर होते देख रहा है।

कवि वेदना भरे स्वर में कहता है : मानव मानव का शत्रु बन गया है। हृदयों पर स्वार्थ की परत चढ़ गयी है। उनके प्रदूषित संबंधों ने धरती के भीतर बहने वाले जल को भी मलिन कर दिया है। जल के हर कण को चूस लिया है। अब भू-गर्भ में मानव क्या टटोल रहा है। कुदाली से जल नहीं फूटेगा वह अस्थियों से टकराकर रह जायेगा।

भीगे मन से कवि शुष्क जमीन पर बैठे आकाश की ओर शुष्क दृष्टि से निहारते कृषकाय कृषक की वेदना के संवाहक बन कहते हैं :

"जमीन पर घास ही नहीं उगती तो

[119] वही, पृ.सं. 47

कागज पर कविता कहाँ से आए

पानी !

लेखनी आगे नहीं बढ़ती।”[120]

कड़वी सच्चाई यही है कि सूखी जमीन पर घास उग नहीं सकती तो शुष्क, नीरस एवं तृषित हृदयांतराल से अक्षर कहाँ उग सकते हैं। वेदना विह्वल हृदय से चीत्कार ही निकल सकती है। यथा-

“धरती माँ

मौत की चारपाई पर अन्तिम साँसें गिन रही है।”[121]

जल के अभाव में अकाल का तांडव नृत्य होता है। अकाल की मारी गरीब जनता पानी की किल्लत को झेलते हुए इधर-उधर भटकती है। जैसे-

“पानी नहीं है तो

जिंदगी सदा लड़ाई ही होती है।”[122]

वर्तमान राजनीति पर कवि कटाक्ष करता है :

“सिंहासन इस युद्ध को

देखते हैं-खेल सा।”[123]

---

[120]वही, पृ.सं. 51

[121] वही, पृ.सं. 51

[122] वही, पृ.सं. 51

[123] वही, पृ.सं. 51

कवि कहता है : अभावग्रस्त ही जान सकता है, अभावों का पीड़ा। रेगिस्तान के निवासी ही जल का मूल्य आंक सकते हैं। अमूल्य जल की चाह में वे रेत में धंसते हुए पैरों से चलते जाते हैं। दूर से दिखायी पड़ने वाली रेत की लहर को जल की लहर समझ तीव्रता से कदम बढ़ते हैं। इस मृगमरीचिका में वे प्राय फंस जाते हैं। पैरों के गरम रेत की धार और आसमान से गिरती खजूर के लंबे वृक्षों से छनती धूप की किरणें। यह भी एक विडंबना है।

इन सभी झंझावतों से विचलित प्राणी धैर्य खो पानी की बूंद के लिए शस्त्र तक उठा लेता है। कविवर नीर के समक्ष करबद्ध निवेदन करते हैं कि हे प्राणदायिनी ! तुम स्निग्धता के गुणों की खान हो, दयामयी हो। अपनी तरलता से तड़पते प्राणी को जीवंत करो।

कवि जानता है कि पानी का न होना क्या होता है :

"पानी का न होना
प्राणों को निचोड़ लेता है।
जल का अभाव
कितना भी महान हो काई
जड़ से उखाड़ देता है।"[124]

इसलिए जल से प्रार्थना करता है :

"जल धारा !
इतना निर्दय होना क्या ठीक है ?

[124] वही, पृ.सं. 52

मृगतृष्णा की आशाओं के भग्न होने पर

मृत्यु की ओर उन्मुख इस यात्री के समक्ष

प्रत्यक्ष हो जाओ न ?

ओ प्राणदायिनी !"[125]

चक्रवात के दृश्य को अपने छंदों में समेटते हुए कवि लिखते हैं : हवा और पानी का संगम ही है जो मेघों को रचता है और वायुमण्डल के हर कण में आर्द्रता है। ये दोनों मिलकर प्रकृति और जीव को पल्लवित और जीवंत करते हैं। लेकिन आज पूर्णतः संतुलन गड़बड़ा गया है। वायु के प्रचंड वेग ने सब कुछ तितर-बितर कर दिया है। सुना है पूर्णिमा के चांद में समुद्र में ज्वार-भाटा लाने की क्षमता है, उसी से संभवतः समुद्र भी अशांत हो गया है। अथवा उसमें दबी आग पिघलकर लहरों को क्रोधित कर रही है।

कुछ भी कारण हो सुबह की हलकी फुहारें, मध्याह्न कर प्रलय के भयावह रूप में बदल गयी। इस प्रलय में कवि को पांचाली की लटों की याद आती है। वायु ने पेड़-पौधों से लेकर पशु-पक्षी और मानव सभी को लपेट लिया है। शीतल समीर काली अंधेरी रात में राक्षसी दांतों से सबको चबा रही है। अपने विद्युत वेग से सभी को उखाड़ फेंक रही है। बरसने वाले मेघ कहीं दूर उड़ गये हैं। समुद्र इस तांडव नृत्य पर अपनी ऊंची और उठती लहरों से ताल दे रहा है। वायु-जल दोनों के चक्रवात में फंसा प्राणी दम तोड़ रहा है। विपरीत दिशा में बहती वायु जो भी मार्ग में आता गया उसे अपना ग्रास बनाती गयी।

चक्रवात थम तो गया। लेकिन उसके बाद केवल बीभत्स दृश्य बच गया। शवों से भरी भूमि थी। प्रातः वेला में ऐसा प्रतीत होता है जैसे रूंधे कंठ से पक्षीगण शवों को

[125] वही, पृ.सं. 53

जगाने का प्रयास कर रहे हों। सूरज आज किसके लिए उगे। उसकी लालिमा के साथ अंगड़ाई लेकर उठने वाला जब जीवन ही नहीं बचा।

जल-वायु के भीषण संघात का, प्रलयंकारी झंझा का तूफान में परिवर्तन। प्रकृति का यह पुनः प्रदर्शित होने वाले नाटक का कवि वर्णन करता है :

“अब नाटक शुरू हो गया

प्रधान रस है- बीभत्स

स्थाई-कोई भी हो

उठी आंधी

शवों के ढेर

नाटक का परिणाम

सर्वनाश”[126]

कवि कहता है : आकाश में उमड़ते-घुमड़ते मेघ स्वच्छंद, उन्मुक्त और बंधविहीन पक्षी के समान विचरते हैं। बरसते समय वे किसी प्रांत विशेष पर अपनी कृपा नहीं दिखाते, उनकी किसी भी बूंद पर किसी का नाम नहीं है। बादल की हर बूंद हर प्यासे कंठ का अधिकार है।

बादल बरबस ही बरसते हैं। सागर पर बरसते बादल देख ऐसा प्रतीत होता है मानो वर्षा की बूंदे लहरों को सहला रही हों। नदियाँ भी मेघों से जल भर अठखेली करती और मचलती चलती है।

---

[126] वहीं, पृ.सं. 56

मेघ मनमस्त कभी किसी गाँव, किसी नगर, किसी शहर पर अपने जल की बौछार करते हैं। रिमझिम वर्षा की बूंदों से धरती नहायी जाती है। घर की खपरैलों से छम छम, टप टप गिरती जल बूंदों को मनुष्य अपने घड़ों और बाल्टियों में समेटने के लिए आतुर रहता है। हर आंगन जल से भीग जाना चाहता है। सत्य यह है कि 'जल है तो जहान है।'

आज त्रासदी यही है कि मनुष्य जल के लिए तड़प रहा है। कंठ को तर करने के लिए एक घूंट पानी को तरस रहा है। नदियाँ मनुष्य की दूषित मनोवृत्ति का शिकार हो पहुंच से दूर जा रही है।

कवि कहता है : बादल, नदी व झरने सभी चाहते हैं कि उनके शुद्ध जल का रसास्वादन हर कोई कर सके। जल ने यह कभी नहीं चाहा कि उस पर विवाद हो। वह तो निश्चल, सरल और कोमल हृदय है। यह तो स्वार्थी मानव है जो नदियों को भी अपने हक में करने की चाह रखता है। जल विवाद, नदी विवाद आज राजनेताओं के दांव-पेचों का हिस्सा बन गये हैं। 'सबके लिए जल' जैसी बड़ी-बड़ी योजनाएँ सरकारी फाइलों में बंद है। मानव की इस दूषित प्रवृत्ति पर बादल गर्जन कर अपना क्रोध प्रकट कर रहे हैं। भारत ही नहीं विश्व के अनेक देश जल की दुर्दशा को झेल रहे हैं। कवि लिखता है :

"जीवन का आधार सदा से नीर है

जीव हिंसा का कारण भी आज नीर है।"[127]

कोलराडों जैसी बड़ी नदी तलवारों के सायें में बहने लगी। अरिजोना और कैलिफोर्निया के बीच जल के लिए तलवारें तक उठ गयी थीं। इज़राइल, फिलिस्तीन में

[127] वही, पृ.सं. 61

बचे खुचे पानी पर भी खून की बूंदे गिर चुकी हैं। जॉर्डन नदी की घायल सी यही स्थिति है। एक एक बूंद के लिए जीवन तरस रहा है। जो जल मानव जीवन का आधार था आज उसी के लिए हिंसा हो रही है और मानव से उसका जीवन छीना जा रहा है।

इन स्थितियों के निरीक्षण के बाद कवि इस नतीजे पर पहुंचता है :

"लगता है धर्मों की टकराहट है

और संस्कृतियों का संघर्ष है !

कलह की जड़ है-

पानी की पीड़ा।"[128]

'खोने के बाद ही पता चलती है किसी चीज की कीमत' उक्ति को समझाते हुए कवि कहता है: स्वर्ण का मूल्य उसकी 'आवश्यकता' नहीं वैभव प्रदर्शन है। जल तो अमूल्य है। जल बिना जीवन कठिन है। जल तो स्वयं 'जीवन' है। जब जीवन ही नहीं तो स्वर्ण का क्या मूल्य।

विडंबना देखो कि इसी 'जीवन' को व्यापार की वस्तु बना दिया गया है। संभ्रांत और वणिक वर्ग भूमि से उसका जल खींच, ऐसा अकाल खड़ा कर रहा है, जहाँ केवल तड़प और नरक है। कवि प्रश्न करता है कि क्या ये व्यापारी नहीं जानते कि शुष्क भूमि से अंकुर नहीं फूट सकते। सूखी नदियाँ भी बंजर भूमि नहीं सींच सकतीं। कवि आगे लिखता है विषादग्रस्त किसान कुदाल लेकर कब तक इस बांझ भूमि से वनस्पति धन का दोहन करेंगे, वे भी एक दिन हार मान जायेंगे। जब पौधे ही नहीं उगेंगे तो वर्षा का जल कैसे संचित होगा वह भी अपना मार्ग बदल लेगा।

---

[128] वही, पृ.सं. 61

विह्वल भाव से कवि लिखता है कि हर एक के लिए बरसने, बहने और तृप्त करने वाले जल को आज शीशों में बंद कर बेचा जा रहा है। कवि इन्हीं व्यापारियों से प्रश्न करता है कि भू के जलकोष पर भी क्या तुमने अपना आधिपत्य समझ लिया है ? यह मत भूलो कि बदरी के नीर पर, नदी की लहरों पर और समुद्र की जलराशि पर तुम अपना अधिकार नहीं जमा सकते। गरीब के होठों की व्याप्त तुम कब तक छीनोगे।

आर्द्र हृदय कवि कहता है- गगनचर और जलचरों से उनका घर, जीवनधार छीना जा रहा है। जल में स्वतंत्र विचरने वाली मछलियाँ नदियों के तटों और पाटों पर तड़प कर दम तोड़ रही हैं।

कवि कहते हैं प्रदूषण मुक्त पर्यावरण शताब्दी में हुसेन सागर में विराट बुद्ध प्रतिमा के अधरों की स्वच्छ मुसकान स्याह पड़ गयी है यह कैसी विड़ंबना है। 'अहिंसा' का मसीहा अपने सामने कई जीवन नष्ट होते हुए देख रहा है। अनुसंधान के नाम पर जिस तरह जल का दोहन हो रहा है उस देख जिन नदियों के तटों पर सभ्यताएँ विकसित हुई थीं वे मूक क्रंदन कर रही हैं। जलाधिपत्य को ललकारते हुए कवि कहता है:

"आज

जल का स्वामित्व ही

धन का स्वामित्व है।

जल का स्वामित्व ही

धन का स्वामित्व है।

बहुराष्ट्रीय उद्योग धंधों !

समस्त जल राशि को

शीशों में उतारो।"[129]

कवि ने जीवन के इस सत्य से भी पर्दा उठाया है कि जो सुंदर प्रतीत होता है, यह आवश्यक नहीं कि वह शांत और सदैव प्रसन्न हो। उसमें भी पीड़ा का प्रवाह होता है।

जल के हिम रूप पर हम सभी मोहित हो जाते हैं। यही जल जब बर्फ के आवरण को त्याग पर्व रूप ग्रहण करने की ओर उन्मुख होता है तब बर्फ जल के आवरण की पीड़ा से चटककर बिखर जाती है।

कवि कहता है हमें जल के हिम रूप को भी सहेज कर रखना होगा। इसका तपस्वी रूप हमें सबसे अधिक प्रिय है। हिम को अनेक उपमाओं से अलंकृत करते हुए कवि ने इसे स्थान पर इसके कई नामकरण किये हैं : स्फटिक शिला है जो पाषाण के समान कठोर नहीं अपितु तरल और प्राणवान है, लावण्ययुक्त आभा है। कमल की तरह कोमल है, रूई के फूलों का तोरण है। आकाश को प्रतिबिंबित करने वाला दर्पण है और अंधकार में भी जिसकी चमक आँखों को आकृष्ट करती है। हिम के इन समस्त रूपों का उल्लेख एक समर्थ कवि की ही कविता कर सकती है, जिसने प्रकृति और हिम की रूप राशि को अपने नयनों में भर हृदय में उतार लिया हो।

कवि हृदय लिखता है 'हिम ऋषि' तपस्या में लीन है सृष्टि के संतुलन को बनाये रखने के लिए जल का हिम रूप भी श्रेयस्कर है। हिम शिखाएँ एक साथ टूट कर यदि जलमय हो गयीं तो प्रलय से हम नहीं बच सकेंगे। कवि सचेत करते हुए कहता है समय रहते जग जाओ अन्यथा पछताना पड़ेगा और यही सुनना पड़ेगा :

'अब पछताए होत क्या

जब चिड़िया चुग गयी खेत।'[130]

---

[129] वही, पृ.सं. 64

बादलों पर मानवीय गुणों का आरोप करते हुए उनकी क्षमता एवं सीमाओं पर विचार करने लगता है :

“बादलों का उत्तरदायित्व

बरसने तक ही।

गगन की प्रयोगशाला में उगायी

अनंत जीवशक्ति को

अवनी पर बिखरने तक ही।”[131]

कविवर बादलों की ओर निहारते हुए कहते हैं, ये बदरियाँ ‘जीवन’ शक्ति को धरा पर बरस कर प्रफुल्लित होती है कि जो तृप्त हैं वे तृप्त होते जा रहे हैं और गरीब, अभावग्रस्त इंसान जल और रोटी के बिना कृषकाय है। नदी-पहाड़ अपने पथ पर हैं लेकिन गरीब इंसान की नियति नहीं बदल सकते। पहाड़ों के मध्य से निकलती नदियाँ कुछ की बपौती बन गयी हैं।

सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी इस आपदा से विचलित हैं। सभी के हृदयों पर सजने वाली गंगा, तुंगभद्रा, ब्रह्मपुत्र, वंशधारा ये सभी तरंग, उमंग और घावों के साथ भी निरंतर धरा के आंचल को भिगो रही हैं, उसे पल्लवित और पुष्पित कर रही हैं लेकिन उन्हें मलाल है कि वे हर एक को तृप्त और प्रफुल्ल नहीं कर पा रहीं। वे जानती हैं कि कई अधर प्यासे और हृदय घायल हैं। बांसुरी से निकलने वाला स्वर भी संतप्त हृदय को शांत नहीं कर सकता। अहिंसा की भूमि पर बहने वाली साबरमती भी बाणों से दग्ध रक्तरंजित हिरणों की दशा देख अपवाद से घिर गयी है। यमुना की शान कहलाया जाने वाला प्रेम

[130] वही, पृ.सं. 67

[131] वही, पृ.सं. 68

प्रतीक ताज भी धुंधला गया है। प्रदूषण ने यमुना का श्यामल रूप चुरा लिया है। प्यास से विह्वल प्राणी नदियों के शुद्ध जल की आस लगाये बैठा है। सागर ने भी सभी नदियों का वरण कर लिया है। अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य ने भी इन जीवनदायिनी नदियों का बंटवारा कर लिया है। कवि पुनः सचेत करते हुए कहता है हमें इस अवनति को रोकना होगा अन्यथा ऐसा प्रलय आयेगा जब प्राणविहीन यह ब्रह्मांड शून्य हो जायेगा। आज मानव संस्कृति उच्च शिखर तक पहुंच गयी है। बड़ी से बड़ी बाधाओं का सामना कर मनुष्य प्रगति पथ पर बढ़ा है। इस संस्कृति को बचाने के लिए शांति और विकास को अटूट रखने के लिए यह नितांत अनिवार्य है कि नदियों को मिलाने की दिशा में हम मिलकर कदम उठायें। नदियों के एक सूत्र में सजते ही मनुष्य हृदय भी निर्मल होगा और सरस भूमि पर फिर एक बार 'जल-बीज' अंकुरित होगा। (अर्थात् वृक्ष है तभी जल भी सुरक्षित है।)

कवि नदियों को जोड़ने के पक्ष में है :

"पर्वत पुत्री है- फिर भी
गंगा का दिल कोमल है।
कावेरी का हृदय-स्थल
हरीतिमा है।
दोनों दिशाएँ को बाँधेंगे, तो
सारी दिशाएँ हमारी।"[132]

प्राणदायिनी गंगा की महिमा का गान करते हुए कवि कहता है : हे गंगे। तुम्हारे नाम में ही पवित्रता है। तुम्हारे नाम के उच्चारण मात्र से मन की कटुता धुल जाती है। तुम

[132] वही, पृ.सं. 71

तो अनेक संस्कृतियों की जन्मदात्री हो। तुम वीरों की भी जननी हो। अन्य सभी नदियों में तुम्हारा स्थान प्रथम है। तुम तो सभी की आश्रय स्थली हो। ऋषि-मुनियों ने तुम्हारी स्निग्ध छाया में अनुपम काव्य रचे हैं। व्यास रचित महाभारत और कबीर के दोहों की प्रेरणा और साक्षी दोनों हो। ऐसा कौन-सा कलाकार है जिसने तुम्हारे नयनाभिराम रूप को अपनी कृति में न उतारा हो।

"कितनी नदियाँ हैं ?

तुम्हारी स्नेहिल छाया अलग है

व्यास ने जिस पानी से मुँह धोया

तुम्हारा ही प्रभात-कांतिपूर्ण जल है।"[133]

"कबीर के दोहों को

पानी दिया तुम ने।"[134]

आज इसी पवित्र गंगा के तट पर विषाद की रेखाएँ पड़ गयी हैं। मदांध मनुष्य ने जीवनदात्री को अपनी विकृत मनोवृत्ति से प्रदूषित कर दिया है। अमृत पान कराने वाले 'गंगाजल' में विष घोल दिया है। यही विष मनुष्य की शिराओं में घुल स्वयं उनका नाश कर देगा। विकल होकर कवि कहता है :

"मानव !

गंगा

[133] वही, पृ.सं. 72

[134] वही, पृ.सं. 73

जल शय्या पर नीरस पड़ी हुई है
गंगा-
रेती की गुदड़ियों को ओढ़ कर
झरझरता से कराह रही है।[135]

छंद का मर्म यही है कि जिस माँ ने अपने जल-दुग्ध से हमारे तन और मन को सींचा है आज वही अपने सूखते जल पर अश्रु बहा रही है। हमें अपने आपको कर्त्तव्य बोध कराना होगा, अपने हृदय से स्वार्थ को बाहर फेंक उसे त्याग से निर्मल करना होगा तभी हम, अपनी जननी को उसकी शुद्ध कांति लौटा सकेंगे और उसके 'जीवन' को अपने लिये सुरक्षित रख सकेंगे।

दुखी मन से कवि कहता है : नदियों की निर्मलता तो छीन ही गयी है। बावड़ी और तालाबों की भी यही दशा है। वे बचपन की स्मृति मात्र के रूप में शेष रह गये। बावड़ी और तालाबों ने अकेले 'जीवन' नहीं जिया। ये दोनों तो बढ़ते बचपन के साक्षी हैं। मेघों और झरनों के जल के ये भंडार हैं। कई लोकगीतों, प्रेम और रसभरी कहानियों के रचनाकार हैं। आज वही बावड़ी और तालाब पथरा गयी नजरों से हमें देख रहे हैं। उनकी इस दुर्दशा को देख मन भर आता है। कवि कहता है : तालाब तो अल्प संतोषी है। मेघों के जल से ही तालाब तृप्त हो जाते हैं। इनसे जल लेकर नहरें धरती को सींचती हैं, एक नहर की सहगामिनी बन अन्य तालाबों को भरती है। जलपूरित तालाब अतिशय संपन्नता को वितरण करने वाला दाता है। इतिहास इस बात का साक्षी है। काकतीय राजाओं[136] और

[135] वही, पृ.सं. 74

[136] तेरहवीं शताब्दी के सम्पूर्ण दक्षिण भारत पर शासन करनेवाला राजवंश।

विजयनगर[137] साम्राज्य, उत्तम जल व्यवस्था के उदाहरण हैं। तालाब की संस्कृति को विकसित कर यहाँ के राजाओं ने अपनी प्रजा को प्रसन्नता और राज्यों को खुशहाली उपाहार स्वरूप दी थी।

आज यह प्रश्न खड़ा हो गया है कि तालाबों की वर्तमान दुर्दशा के लिए कौन उत्तरदायी है। किसने तालाबों को नष्ट कर ईंटों को खड़ा कर दिया है। मनुष्य की आदत है कि अपने दोष को दूसरों के सिर मढ़ता है।

"हर बात के लिए

आकाश की निंदा

अपनी आदत हो गयी।"[138]

हर घटित दुर्घटना के लिए वह प्रकृति को दोष देता है। जल के अभाव का दर्द वही झेल रहा है जिससे नदी-तालाब छीन लिये गये हैं। गाँव अपने मूल से उखड़ते जा रहे हैं। इन गाँवों और खलिहनों में उगी संस्कृति भूला-बिसरा गीत में बन गया है। कवि नयी उदार नीति चाहता है, ऐसी नीति जो नदियों के जल को सभी के लिए सुलभ कराये और हर गाँव में तालाबों को उनका जीवन लौटाये। कवि समकालीन मानव समाज में व्याप्त स्वार्थ प्रवृत्ति को देखकर दुखी होता है। नदियाँ बहती हैं इसलिए नदी जन्म के स्रोत के पास ही एकत्रित नहीं रह सकती। उसके प्रवाह में रोड़ा डालकर बांधना ठीक नहीं है। आवश्यकता के अनुरूप जल लेकर उसे प्रवाहित होते जाने देना हर प्रांत का कर्त्तव्य है। यहाँ जल के उचित वितरण की व्यवस्था पर कवि टिप्पणी देता है।

जलगीत के छंदों में कवि बारंबार दोहराता है कि वायु को जिस तरह मुट्ठी में बंद नहीं किया जा सकता उसी तरह पानी को भी नहीं बांध सकते। जल और वायु तो

[137] सोलहवीं शताब्दी के विजयनगर साम्राज्य के प्रमुख राजा।

[138] जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), भूमिका के अंतर्गत, पृ.सं. 77

चराचर में व्याप्त है। गगन मंडल और धरा इसी से आच्छादित है। धरती के गर्भ से निकलने वाला आक्रमण भी हो सकता है। यह आश्चर्य है। पर बहने वाला शांत जल चट्टानों को काट कर पर्वतों का सीना चीरता हुआ अपना मार्ग बनाते हुए पूरे उछाल के साथ तीव्र गति से गिरता है। यही जल प्रपात है। इसका मूल बर्फ की शिलाएँ हैं। हिम के आवरण को तोड़, जल बंधन मुक्त हो धरती की ओर पूरे वेग से दौड़ता है। इस 'प्रपात' की धार तो तलवार की धार से भी पैनी होती है। यही जल का 'प्रपात' का यह प्रताप और उसका विद्युत वेग तो आँखों से भी पकड़ा या रोका नहीं जा सकता। इसकी गर्जन के बीच सभी ध्वनियाँ खो जाती हैं। नयागारा विक्टोरिया, कुंटाला जल प्रपात आदि ऐसे कितने ही नामकरण हुए हैं जल के इस वेग रूप को। कवि ने जलप्रपात की अद्‌भुत कल्पना करते हुए छंदों में कहा है पहाड़ों के मध्य देखने वाली जल बारीक रेखा देख ऐसा प्रतीत होता है मानो पहाड़ ने अपने मस्तक पर श्वेत रिबन बाँध लिया हो। आगे कुछ विस्तार लेता हुआ जल देखकर लगता है। जैसे दुलहन घुंघट में हो और अधिक विस्तार से नीचे आते जल का तेज बूंदें जब चहुं ओर छिटकती हैं और श्वेत अश्व हवा में उड़ रहा है। यही नहीं सर्प गति से नीचे आता जल ऐसा लगता है, फुंकार भर रहा हो।

कवि कहता है : स्वेच्छा से जल ऊंचाई से नीचे गिरता है। कई रूप धरता है पुनः अपने निज रूप में भी आ जाता है। जल का यह 'चक्र' अनवरत चलता रहता है। यह भी सत्य है कि नदियाँ हैं, इसीलिए जल प्रपात भी है। काली घटाएँ भी प्रसन्न हैं कि बिजली की कड़क उनमें ही नहीं जलप्रपात में भी विद्युत शक्ति है। मेघ, नदी, झरने और जलप्रपात हर रूप में जल की चाह 'शस्य श्यामला' धरा को है।

कवि जल की चेतना की पराकाष्ठ के रूप में जल प्रपात देखता है। नदियाँ प्रकृति का वरदान हैं, इनका संरक्षण मानव जाति का कर्त्तव्य है। जलप्रपात के जल का स्त्रोत भी

मेघ ही है। अतः कवि जल प्रपात को मेघों की संतान के रूप में कल्पना करता है। अनेक जल प्रपात नदी रूप में धरती को शस्य श्यामला बनाते हैं। इसलिए कवि परोपकारी संतान को जन्म देने वाले मेघों की मानवता का वर्णन करता है। सागर को सहृदय बताते हुए कवि कहता है समुद्र केवल देखने में ही विशाल नहीं अपितु इसका हृदय भी विशाल है। इसकी क्षमता धरती और वायु से कम नहीं है। जिस तरह मगरमच्छ और मछलियाँ रात्रि में जागती हैं, वैसे ही सागर की लहरें भी निद्रा में लीन नहीं होती। नाविका इन्हीं लहरों के सहारे अपने गन्तव्य पर पहुँचता है। कवि कहता है मनुष्य भी तो चलता फिरता समुद्र है। इसके शरीर में भी तीन चौथाई जल है। अंतर इतना है कि मनुष्य लवणयुक्त नहीं अपितु शुद्ध जलधारी है सिंधु लवणयुक्त है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह निरूपयोगी है। वह अनेक प्राणियों की आश्रय स्थली है। सूर्य से किरणें लेकर अपने सहचरों को शीतलता प्रदान करता है। सिंधु इस बात से अनभिज्ञ नहीं है कि उसके विस्तार के कारण धरती की दूरियाँ बढ़ गयी है। मानवता के विस्तार में वह अपना पूरा सहयोग दे रहा है। समुद्र की लहरों पर चलने वाले जलयान एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश, एक देश से दूसरे देश संस्कृतियों का आदान-प्रदान कर रहे हैं। इस दृष्टि से सिंधु सभ्यता और संस्कृति का संवाहक भी है।

कवि विकल होकर लिखता है : मानव के सहचर रत्नाकर की भी आज स्थिति विकट हो गयी है। जिसके गर्भ में मणि-मणिक-मोती के भंडार हैं उसी में आज शस्त्रगार हैं। मानवता के संवाहक के इस दर्द को कौन समझेगा कि उसे आज अणुशस्त्रों की प्रयोगशाला बना दिया गया है।

कवि ललकारता है :

"सीमा रहित असीम जलराशी को

सीमाएँ स्वयं बनाकर

आधिपत्य कौन चला रहा है ?

आज

जल में युद्ध करते हुए जल को

प्रदूषित करने वाले

आखिर, वे कैन हैं ?

दाना-पानी

सुदूर सपना है, कुछ लोगों के लिए !

सख्त जरूरत है-कुछ के लिए !

और कुछ के लिए विलास है !”[139]

जल के आकर्षण से बंधे कवि कहता है : आज भी कई गाँवों की आँखें पानी के लिए तरस रही हैं और शहर है कि उसकी प्यास बुझाती ही नहीं। आगे निकल जाने की स्पर्धा में जल से उसकी अंतिम बूंद भी छीन लेना चाहता है वह समय दूर नहीं जब गाँव ही नहीं शहर भी एक घड़े जल के लिए तरसेगा।

कवि उपदेश देते हुए कहता है कि यदि समय रहते मनुष्य जागृत नहीं होता तो बचा खुचा जल भी हो जायेगा। यथा-

“वर्षा के लिए नहीं

प्यास के लिए छतरी उठाओ

हरी हरी छतरियाँ।

जंगलों की हरित छतरियों से

[139] वही, पृ.सं. 85

अनमोल निधियों को बचाओ !"[140]

उक्त छंद इसी भाव की अभिव्यक्त करता है कि हमें स्वयं को 'चेतना' करने के लिए असंख्य वृक्ष रोपने होंगे। कितनी सुंदर और अद्‌भुत कल्पना है कवि की, जिन्होंने हरे भरे, पत्तों से लदे वृक्षों की एक नवीन व्यख्या दी है। प्यास तभी बुझेगी जब वर्षा होगी और वर्षा तभी होगी जंगल में मंगल होगा। चहुं और हरियाली होगी। हरियाली ही है जो हमें जलाधार देने में समक्ष है। जलरूपी जीवन मिल जाये यही पर्याप्त नहीं है इस 'जीवन' को संजोकर आना चाहिए। 'संचय' का गुण हमें रेत का जहाज कहलाये जाने वाले ऊंट से सीखना होगा जो एक मरुस्थल से दूसरे मरुस्थल तक शरीर में संचित पानी के बल पर मीलों की यात्रा करता है। संसार का जल है और हम जल-विहीन संसार की कल्पना कर ही नहीं सकते यह हमसे पूर्व भी था और हमारे पश्चात भी रहेगा। यथा-

"कोई भी साथ नहीं देता

अंत में तुलसी जल के अलावा।

विदाई का जल- शायद यही हैं।"[141]

मूल शय्या पर पड़े व्यक्ति के मुख में तुलसी जल ही दिया जाता है। जन्म से मृत्यु तक हम इसी से बंधे हैं। लेकिन जल हमसे बंधा नहीं है। जल स्वयं अमृत है और अमरत्त्व का वरदान है। इसीलिए यह अनश्वर है। मनुष्य ही नहीं पेड़-पौधे भी इसी से पनपते हैं। घने जंगलों की यह वाणी है, इसके गीत, सिर ऊंचा उठाये खड़े वृक्षों को भी झूमने पर बाध्य कर देते हैं। कवि कहता है इस जलनाद का यदि तुम आनंद उठाना चाहते हो तो

[140] वही, पृ.सं. 85

[141] वही, पृ.सं. 86

इन घने जंगलों को अपने ऐश्वर्य के लिए काटने से रोकों। यदि जल ही तुमसे बिछुड़ गया तो तुम्हारा ऐश्वर्य मिट्टी में मिल जायेगा।

यदि कहीं तुम्हारे में किंचित मात्र सरसता शेष है तो उस अनुपम दृश्य की कल्पना करो जिसमें कमल पुष्प पर बैठी तितली अमृत पानकर अपने को तृप्त कर रही है और पौधे अपने ऊपर झरते नीर की करबद्ध वंदना कर रहे हैं। इसकी कल्पना मात्र से तुम तर जाओगे और हर कदम तुम्हारा जलगीत गुनगुनायेगा।

कवि लिखते हैं कि जल का कल कल करता स्वर भंग हो गया है। अपस्वर आ गया है। जिन गाँवों में कभी चहल-पहल थी, जीवन सरस गति से चलता था। आज पानी के अभाव के कारण वहाँ केवल वीरानी है। दीवारों में जलाभाव तो था ही और जो शेष था उसमें भी फ्लोरिन विष घोल दिया गया। हँसते मुस्कुराते हुए जीवन को इस धीमे जहर ने अपाहिज बना दिया। बच्चे अपना बचपन नहीं जान सके, युवा समय से पूर्व ही वृद्ध हो गये। विकृत अंग लिये इंसान चलती फिरती मुर्दा सांस बन गये हैं।

कवि कहता है : यह जल का दोष नहीं, वह स्वयं स्वार्थी मानव के षड्यंत्र का शिकार है। जल को भी विकृति झेलनी पड़ रही है। उससे भूमि को सींचने की शक्ति ही छीन ली है। ऐसे में भूमि में अंकुर कैसे फूटेंगे। यह दुर्दशा केवल भारत के नलगोंडा जैसे गाँव ही नहीं, अफ्रीका जैसे देश की भी है। इस दुर्दशा का चित्रण जगह जगह फैलता जा रहा है। फ्लोरोसिस से ग्रस्त अपंगों के चित्र- क्या इस क्षति की पूर्ति संभव है ? क्या उड़ गये प्राणों को वापस लाया जा सकेगा। लेकिन कृष्णा जैसी नदियों के पानी को विषाक्त करने वाले तत्त्वों को कोसती रही। फिर भी आशा हैः भगीरथ आयेगा, उसके संताप को दूर करेगा, मृतप्राय स्थान से कहीं दूर ले जायेगा और उसके शीतल जल से मानव की प्यास बुझायेगा। कवि कहता हैः तड़पते प्राणों को उसी भगीरथ की प्रतीक्षा है, जिसने हिमालय की भंचाइयों में बह रही गंगा को तराई तक लाने का साहस दिखाया था। हर

युग में पानी की मांग ही प्राथमिक रही है। इसके लिए मनुष्यों में स्पर्धा भी रही है। चंद्रशेखर का जटा में चमकती गंगा धरती पर उतरकर फलवती हो गयी।

आज पुनः एक बार विश्वास जागा है कि युग पुरुष आयेगा। भगीरथ फिर अवतार लेगा और धरती की प्यास बुझायेगा। रेगिस्तान के लिए भी हरा भरा भविष्य आयेगा। तपती भूमि से जलते पावों और तपन से बेकल हो बहती अश्रुधारा के लिए शीतल जल का वरदान लायेगा।

कवि को युवा शक्ति पर अटूट विश्वास है। यही छल से दूर और दंब से मुक्त युवा शक्ति मानवता की रक्षा के लिए कृत संकल्प हो आगे आयेगी। गाँव-गाँव जाकर ज्ञान का बीज बोयेगी। मनों में घर कर गये नैरश्य को दूर करेगी। नदियों को शुद्ध जीवन प्रदान करेगी। एकता का मंत्र फूंक संगठित प्रयासों से वर्षा के जल को समेट बाँध बना उसकी वृद्धि की आधार तैयार करेगी। इस आधार पर जल मंदिर बनेगा और जलतरंग की मधुर ध्वनि से प्रकृति झूम उठेगी। यही सत्य भी है जहाँ जल से भीगी प्रकृति है, जल से तृप्त आत्मा है, जहाँ प्राणों में जलगीत है वहीं तो ईश है।

इस खंड में पुण्य आत्मा जिसने रेगिस्तान में जल के लिए शोध किया, तपस्या की और जल को लाने में सफल हो गया। प्रतीकात्मक रूप से राजस्थान के राजंद्र सिंह (रामन मेगसेसे पुरस्कार से सम्मानित) के व्यक्तित्त्व एवं संकल्पशक्ति को जन की सहायता से उसने अरावली की पहाड़ियों में सूखी पांच नदियों को फिर जलमय कर दिखाया उसकी चर्चा भी है:

“बांध बनाओ

बारिश का पानी

धीरे-धीरे

बाँधों के गालों को सहलाने लगे

नभ से शून्य
उस रेतीली धरती पर
नहरों की कल कल ध्वनि
सुनायी देने लगी।"[142]

"जन जागरण है तो
जनता की मेहनत के हलचल से
आरावली की पहाड़ियों काँप गयी
वातावरण में
वीरता का जल
उल्लासित हो गया है।"[143]

ऐसे पुण्यात्माओं के लिए कवि सोचता है:[144]

"किंतु मानव की कोई मौलिक वेदना
न करने का बोझ
बोझ उतारने का तड़प
कुछ जिंदगियाँ ही ऐसी होती है।

कवि कहता है: पानी तो अमूल्य है, यदि इस पर भी तुम इसकी कीमत जानना चाहते हो तो समझ लो अकाल और हरी-भरी, फूलों-पत्तों और डालियों से लदी सश्य-

---

[142] वही, पृ.सं. 94

[143] वही, पृ.सं. 94

[144] वही, पृ.सं. 94

श्यामला का जो अंतर है वही पानी का मूल्य है। पानी और मानवता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं ऐसे में पानी का मूल्य लगाना मानवता का अपमान है।

वणिक की बुद्धि कितनी तेज है, पहले वह जल में विष घोलता है, उसे अपंगु बनाता है, फिर 'स्वास्थ्य', 'शुद्धता' के लेबल लगी शीशियों में जल बेचता है और हम यह सोच 'स्वास्थ्य ही संपत्ति है', उसे खरीदते हैं। यह भी एक विडंबना है कि वर्षा के जल का एकत्रीकरण का ठेका भी दिया जाने लगा है। दक्षिणी अमेरिका के भूखंड बोलिविया ने ऐसे तुच्छ निर्णय के विरोध में 'जन' आंदोलन छेड़ दिया था और यह शर्मानक समझौता टूट गया।

कवि कहता है कि इस छोटे देश ने प्रमाणित कर दिखाया है कि जल किसी एक का नहीं है सबका है। तभी तो 'जल का अर्थ जन है।'[145] आज पूरे विश्व को इस पथ पर मिल कर चलना होगा। कवि चेतवानी देता है:

"जल को दीवारों में बाँधे, तो जन का
तापमान बढ़ जायेगा।
सावधान रहो।"[146]

जल के लिए मुखरित होकर कहना पड़ रहा है कि हे मानव ! क्या तुम इस जल को भूल गये। मेरा अमृत घर धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। मेरी दिशा कम्हलाये और मुरझाये कमल के समान है। व्योम से धरती पर एक लम्बी प्रक्रिया होते हुए बरसता हूँ। वर्षा की बूंदों के रूप में मैंने कोटि में कंठों की प्यास बुझायी है। प्रेम तरंग में बहती नदी

[145] वही, पृ.सं. 97

[146] वही, पृ.सं. 97

भी हूँ और वात्सल्य का सिंधु भी मैं ही हूँ। जिस अमृत कलश के लिए देव और दानवों ने मध्य संघर्ष चला था, वास्तव में वह 'निर्मल जल' मैं ही हूँ। मेरे बंटवारे का बीज तो तभी बो दिया गया था।

नीर, नर से कहता है तुम तो विवेकशील प्राणी हो परंतु तुम्हारी स्वार्थपूर्ण बुद्धि ने मेरे अस्तित्त्व को ही खतरे में डाल दिया है। आज तुम्हें मेरी जीवनगाथा सुननी होगी, वह भी कानों, 'चर्ण चक्षु' से नहीं अणु से सुननी होगी।

जल अपनी व्यथा कथा सुनाता है कि उसने कितने कष्ट झेले हैं। वह कहता है सागर से व्योम तक तेरे साथ कितने प्रयोग हुए हैं। सभी को तृप्त करने के उद्देश्य से पहड़ों से भी टकराया हूँ। परंतु हे मानव ! तुमने मेरी वेदना नहीं समझी। तुम्हें स्वच्छ और निर्मल जीवन दे सकूं यही चाह रही, लेकिन तुम्हीं ने मुझे मलिन कर दिया है। मेरे बिखरे हर अंग पर तुमने आधिपत्य स्थापित कर लिया है। जंगल जहाँ मैं सुरक्षित हूँ उन्हें भी काटते जा रहे हो। जंगल मानव से संबोधित करता है:

"हे मानव!

पहचाना, मुझे !

मैं जल हूँ

कमतर होता जा रहा अमृत हूँ !"[147]

अपनी स्पर्धा और विकास के लिए तुम मेरा विनाश करने पर तुले हो। मेरे हर रूप को तुम ध्वस्त कर रहे हो। मैं कहाँ रहूँ ? तुमने तो धरती के भीतर भी मुझ पर वार किया है। जल पर्तों को तुमने विषाक्त किया है। कवि कहता है: जल भी मनुष्य को सचेत

---

[147] वही, पृ.सं. 98

करता है कि मेरे हिम रूप को मत छेड़ो। अन्यथा एक दिन भयंकर प्रलय आयेगा और इस प्रलय के सागर में सब कुछ विलीन हो जायेगा। जल मानव को स्मरण कराता है कि मुझको विषाक्त कर, मेरे अंग-प्रत्यंग को निचोड़ कर तुम आज हाहाकार कर रहे हो। तुम भूल गये थे कि मैंने तुम्हारे खेतों को सींचा है। तुम्हारी सभ्यता को अंकुरित किया है। लेकिन अपने दंभ में तुमने सब कुछ बिसरा दिया।

अब भी समय है, संभल जाओ और 'जल-अलर्ट' की घोषणा करो। मेरी नदियाँ निष्ठुर हैं, उनका कर्म ही जीवन देना है। ऐसी क्रांति लाओ कि जल विष मुक्त हो। नदियों को नया प्रवाह दो और हर एक को 'जलाधिकार' दो। जिन्होंने कठिन तपस्या से मेरा आह्वान किया है उनके मार्ग पर चलते हुए जलशक्ति को प्रज्वलित करो अन्यथा फिर नया मरुस्थल तैयार हो जायेगा। मेरा मूल्य लगाकर मेरा अपमान मत करो। हे मानव ! मैं नहीं चाहता कि मेरे अभाव में रक्त के आंसू बहें। अपने हृदय को मानवता से इतना भिगो दो कि फिर कभी मानव जल प्रदूषित न हो। मैं पंचभूतों में से एक हूँ। तुम भी पंचभूतों से बने हो। इसे जान, संभल जाओ ! ऐसा भगीरथ प्रयास करो कि सभी दिशाओं में जल प्रवाहित हो और 'सभी के अधरों पर जलगीत हो।'

"सारे संसार में घोषणा करो

जल-अलर्ट !

बढ़ओ अपना, आगे हाथ

गूँजे दिशाओं में मेरा

यह जलगीत !"[148]

---

[148] वही, पृ.सं. 104

मानव जाति का जीवन आधार जल को प्रदूषण न करते हुए, जल की राजनीति न करते हुए, जल को व्यापार की वस्तु न बनाते हुए, जल की महत्ता को समझकर मानव जाति की जल-संपदा से समन्वित करना, प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है। इसलिए कवि ‘जल-अलर्ट’ की घोषणा करते हुए जलगीत को भगवद् गीता के समान कर्त्तव्य मार्ग को प्रशस्त करने के लिए प्रस्तुत करता है।

चतुर्थ अध्याय

‘जलगीतम्’ के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

चतुर्थ अध्याय

4. 'जलगीत' के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक-मूल्यांकन

"आधुनिक युग एक ओर विज्ञान का युग है तो दूसरी ओर अनुवाद का भी युग है।" इस कथन से कोई अतिशयोक्ति नहीं क्योंकि अगर अनुवाद की प्रक्रिया न होती तो विश्व के महानतम साहित्य से अधिकांश लोग वंचित रह जाते। विशुद्ध साहित्य ही नहीं बल्कि साहित्येतर सामाग्री भी अनुवाद के ही माध्यम से अन्य भाषा-भाषियों तक पहुंचायी जा सकती है। सच कहा जाये तो, "अनुवाद ने मानव समुदाय के भावों, विचारों, संचित ज्ञान-विज्ञान आदि समस्त को एक भाषिक समुदाय से दूसरे समुदाय में परिव्याप्त कर विश्व मानव समुदाय को एक गति सूत्र में लाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। यह यज्ञ अनवरत एवं अक्षुण्ण गति से चला है, चल रहा है और चलता ही रहेगा।"[149]

4.1. अंतर्वस्तु

कविता एक समानांतर संसार रचती है, हमारे आसपास की दुनिया के लिए परिचित, हर दिन, हर पल के अनुकूल तथ्य कविता में आकर जीवन के सत्य बन जाते हैं। इसलिए कविता मानवता की मातृभाषा कही गयी है, मातृभाषा के समान हमारे हर स्पंदन को स्वर देती हुई संस्कार देती है। इसलिए हर पल आंखों से गुजरते हमारे अति साधारण जीवनानुभव कविता की दुनिया में आकर असाधारण हो उठते हैं, सुख-दुख के भाव जगाते रोजमर्रा की जिंदगी के हालचाल कल्पना के ताने-बाने में गुंथकर एक सार्वभौमिक अनुभूति का रूप धारण कर लेते हैं कि हर पाठक इसे पहचान कर विस्मय

[149] डॉ.वाई.वेकट रमण राव, गोपि की कविता – अनुवादकों के अनुभव, पृ.सं. 136

से भर जाता है कि हाँ यही तो है जो रक्तपिपासु कीड़े की तरह कुतर कुतर कर मुझे खाये जा रहा था, हाँ यही तो है वह सुख जो की तरह मेरे तन-बदन में व्याप्त गया था। 'कामायनी' में मनु और श्रद्धा के नैकट्य को दर्शाते हुए जयशंकर प्रसाद ने लिखा था: 'नित्य परिचित हो रहे फिर भी रह कुछ शेष यह। कुछ शेष' ही कविता को जिलाये रखता है। हमारी रोज की चिर-परिचित दुनिया से इस 'कुछ शेष' को ही अपूर्व और अपरिहार्य बनाकर कविता हमारे आगे खड़ी हो जाती है। इसलिए अज्ञेय ने कहा था: 'है, अभी, कुछ और है, जो कहा नहीं गया' इस अनकहे को ही हर-बार अपने ढंग से कहने का प्रयास ही कविता है। कहकर भी 'अनकहा' रह जाने वाला है जीवन और उस अनकहे का बारंबार 'कहने' का प्रयास करने वाली है कविता- दोनों के बीच का यह द्वंद्व कभी समाप्त नहीं होता, इसलिए यह अंतिम रूप से कहना मुश्किल है कि दोनों में बड़ा कौन हैः कविता बड़ी है, या जीवन बड़ा है।

लेकिन, एक तीसरा है जो निश्चिच रूप से दोनों से बड़ा है, श्रेष्ठ है, वर्णीय है और वह है अनुवाद। जिस दुनिया की रचना करती है, उस दुनिया को दूसरी भाषा में, दूसरी भूमि पर और दूसरी भूमिका में रचने का नाम है अनुवाद। रचना श्रेष्ठ होती है लेकिन सूखर होती है क्योंकि रचनाकार स्वतंत्र होता है। अपनी ही प्रेरणा, अपने ही अनुभव और अपने ही विवेक के अनुसार चयन करने के विधान में रचनाकार स्वतंत्र होता है, लेकिन रचना की पुनर्रचना दुष्कर होती है क्योंकि रचनाकार की दी हुई दुनिया के दूसरे धरातल पर उतारना कठिन कार्य है, रचनाकार आत्मानुभव और स्वप्रेरणा की तरंगों में बहने के लिए स्वतंत्र है। लेकिन अनुवादक उन्हीं रचना तरंगों में तैरता है लेकिन मनचाहे कल्लोल भी नहीं कर सकता क्योंकि उसके हाथ-पैर मूल रचना के अनुशासन से बंधे हैं,

रचनाकार 'तैरता' है, अनुवादक 'बहता' है, मूल रचना कवि 'ईश्वर' है तो अनुवादक 'विवश ईश्वर' है।

आधुनिक काल में हिंदी में लंबी कविताएँ लिखने का श्रेय जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत को है। सुमित्रानंदन का 'परिवर्तन' निराला के 'तुलसीदास' में कवि की भावुकता के साथ वैचारिकता का समतौल्य एवं अभिव्यंजना की नयी भंगिमा ध्यान देने योग्य है। इस परंपरा में अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', मुक्तिबोध की 'अंधेरे में' आदि है। समकालीन कविता में नरेंद्र मोहन, कात्यायनी आदि ने लंबी कविता को नया आयाम दिया।

आधुनिक तेलुगु साहित्य में भी रायप्रोलु सुब्बाराव, गुरजाड़ा अप्पाराव, देवुलपल्ली कृष्णाशास्त्री, करूण श्री आदि ने लंबी कविताओं का प्रणयन किया। किंतु विचार एवं भाव में एक विलक्षण गति के साथ लंबी कविता रचना प्रक्रिया में श्री श्री, दाशरथि, कुंदुंति आदि प्रसिद्ध हैं। समकालीन तेलुगु साहित्य में 'भूमिका' (लकड़ी का घोड़ा), 'सांपरायम्' आदि महत्वपूर्ण लंबी कविताएँ हैं। इन्हीं की अगली कड़ी में गोपि का 'जलगीतम्' है।

कविता का भौतिक आधार समाज है। भाषा सामाजिक-भौतिक उत्पत्ति है जो कविता का माध्यम है। उनका सारतत्त्व समाज में उत्पादक संबंधों से प्रभावित मूल्य का प्रतीक है। सामाजिक चेतना उनका प्राण है जो कवि की कल्पना के माध्यम से प्रकट होती है। वस्तुतः कवि का भौतिक आधार समाज है। प्रकृति से प्रतीकों का चयन या प्रकृति से संबंधित सृजन करने पर भी उसका वस्तुजगत समाज ही है। जैसा कि यह विदित ही है

कि कवि समाज में सबसे अधिक संवेदनशील प्राणी है। आसपास की दुनिया को निगूढ़ दृष्टि से परखता है।

पाश्चात्य विद्वान 'एड्गेर एलेन पो' ने इस प्रकार की विचार प्रधान परवर्ती कविताओं को ध्यान में रखकर ही कहा था कि "लंबी कविता विरोधी भावों का पदबंध होता है।" पो का विचार है, "वैचारिकता से बोझिल लंबी रचना में कविता का तत्त्व नहीं होगा और काव्यत्व प्रधान कविता लंबी नहीं होती।" पो के इन विचार से सहमत होने की जरूरत नहीं होते हुए भी लंबी कविता की रचना प्रक्रिया में जुड़े कवि को इस चुनौती को ध्यान में रखना पड़ेगा। काव्यात्मकता कविता की कसौटी होती है और कवि को इस ओर जागरूक होना ही है। यह सुखद संयोग है कि 'जलगीत' इस कसौटी पर भी निश्चित रूप से खरा उतरता है।

4.2. रूप विधान

समकालीन साहित्य में लंबी कविता का विस्तार अभिव्यक्ति के एक नये माध्यम के रूप में हुआ है। कवि ने इस लंबी कविता में जल संबंधी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों और संदर्भों की चर्चा करते हुए अपने सामाजिक सरोकार को ही प्रस्तुत नहीं किया अपितु जल संबंधी वैज्ञानिक तथ्यों को भी इस कविता में समाहित किया है। किसी कवि द्वारा लंबी कविता लिखा जाना, यह गारंटी नहीं है कि वह कविता सार्थक कविता है और वह बड़ा कवि।

सृजनात्मकता हर तरह की कविता की पहली शर्त है- लंबी हो या छोटी। हाँ, यह जरूरी है कि कविताओं के लिए सृजनात्मकता के साथ-साथ अनुभव की भी बड़ी रेंज (Range) प्रतिभा भी है और विषय वस्तु के साथ अंतरंग में जल संवेदना की आर्द्रता भी

है। यह संवेदना कविता का प्राण है जो अनुभूति एवं शिल्प को सशक्त करती है। इस कविता में रचनाकार के विचारों, सरोकारों, संवेदनाओं को, आशा एवं आकांक्षाओं को, भावों-अभावों को, व्यंजित एवं संयोजित करती है और प्रतीकात्मक एवं बिंबात्मक भाषा में अभिव्यक्ति देती जाती है। भावों के संवाहन के लिए मिथक सहयोगी बन जाते हैं। गोपि की इस लंबी कविता के प्रतिपाद्य की प्रस्तुति में यह सब अनायास हो गया।

कविता आम दुनिया के तथ्य को जीवन का सत्य बनाकर प्रस्तुत करती है, इसके लिए कविता अनुभव और अनुभूति को एक आध्यात्मिक संदर्भ देती है, एक ऐसी दुनिया की रचना करती है जो अनुभाविक है अनुभूतिक है, आध्यात्मिक है। एन. गोपि इस कविता की भूमिका में स्पष्ट कहते हैं कि "यह वैज्ञानिक रचना नहीं है, विज्ञान की भूमि पर उपजी दार्शनिक और मानवीय कविता है।"

यह हिंदी में अनूदित काव्यकृति 'जलगीत' तेलुगु मूल 'जलगीतम्' का पुनरावतरण है लेकिन यह आसान बात नहीं है। ठीक है कि तेलुगु शब्द समूह का अधिकांश संस्कृत से गृहीत है और इसीलिए तेलुगु से हिंदी में अनुवाद अपेक्षाकृत सरल दिखाई पड़ता है और यह 'सरलता' कई बार अनुवादक को इस प्रलोभन में डाल देती है कि वह शब्दों को बदले नहीं, यथावत रख दे। उदाहरण के लिए यह अंश देखिए।

4.3. शब्द-चयन के स्तर पर

मूल :'परिणामम् जीवगुणम्'[150]

अनुवाद : 'परिणाम जीवन का गुण है'[151]

---

[150] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.10

[151] जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.20

यहाँ 'परिणाम' शब्द तेलुगु से सीधे उठाया गया है किंतु हिंदी में इसका पर्याय होता है 'विकास'। यह समरूपी किंतु भिन्नार्थी हिंदी-तेलुगु शब्दों में से एक है। तेलुगु से हिंदी में किये गये अनेक अनुवादों में सामान्यतः इस तरह की त्रुटियाँ मिलती हैं या कई बार तेलुगु शब्दों को इसी समरूपता के भ्रम में यथावत् ले लेने से लक्ष्य भाषा हिंदी में दुरूहता आ जाती है। सुखद विस्मय की बात यह है कि 'जलगीतम्' को हिंदी अनुवादिका माणिक्यांबा ऐसे फिसलन भरे रास्तों पर से बिना विचलित हुए गुजर गयीं। पूरे अनुवाद में केवल यही एक अर्थांतरकारी प्रयोग देखने को मिलता है। इस अनूदित कृति 'जलगीत' की सबसे बड़ी विशेषता उद्धाटित हुई और वह हैः अनुवाद की सहजता। अनुवाद-मूल्यांकन विशेषकर कविता के अनुवाद-मूल्यांकन में जो एक बात अब अधुनातन अनुवाद विमर्ष के द्वारा स्वीकार की जा रही है वह है कि अनुवाद चूंकि लक्ष्य भाषा के पाठकों के लिए किया जाता है। इसलिए उसे वैसा ही सहज होना चाहिए जैसा कि लक्ष्य भाषा की कोई रचना होती है। जब यह कहा जाता है कि अच्छा अनुवाद वही होता है जो मौलिक लगे, अनुवाद नहीं, तो इसके पीछे यही धारणा बलवती है। 'जलगीत' इस दृष्टि से लक्ष्य भाषा हिंदी की अपनी मौलिक रचना लगती है। सवाल है कि अनुवादिका ने यह कैसे संभव कर दिखाया। इसके लिए विशेष रूप से निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

जलगीत की अनुवाद में पहली कठिनाई 'जल' शब्द से ही शुरू हो जाती है। चूंकि हिंदी में 'जल' पुल्लिग शब्द है और इसके साथ 'जल' के जितने पर्याय शब्द हिंदी में मिलते हैं वह सब पुल्लिंग के अंतर्गत ही आते हैं। पानी शब्द भी ईकारांत स्त्रीलिंग शब्द

का अपवाद है अर्थात् वह भी पुल्लिंग शब्द ही है। परंतु कवि इस शब्द को स्त्रीलिंग वाचक में प्रयोग करके अत्यंत भावुकता से कई प्रसंगों में लिया है। जैसे -

मूल : काल्ल किंद मट्टिकि पट्टम गट्टाडु
"इदि भूगोलम्" अन्नाडु
नीटितल्लि मुसिमुसिगा नव्वुकुंदि
मनिषि अहंकारं संगति
मरोसारि चूडालनि अनुकुंदि।[152]

अनुवाद : पैरों तले मिट्टी को पट्टाभिषिक्त किया,
और कहा-"यह भूगोल है"
जल-माता मुस्कायी।
मनुष्य की अहंभावना को,
सोचा-देखेगी-फिर कभी।[153]

यहाँ पर अनुवादिका ने इस स्त्रीलिंग शब्द वाचक के लिए 'जलमाता' का प्रयोग किया जिसको हिंदी समीक्षकों तक ने स्वीकार किया हैं।

समुद्र को भी कवि ने 'नित्य चूलिंता' (नित्य गर्भवती) शब्द का प्रयोग करके समुद्र को स्त्री वाचक के रूप में दर्शाया है।

मूल : "सततं संतानान्नि पोगोट्टुकुन्ना
निगनिगलाडे नित्य चूलिंत समुद्रम्"[154]

---

[152] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.3

[153]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.15

अनुवाद : "निरंतर संतान को खोकर भी

सलोनी नित्य गर्भवती सी है

समुद्र की रसभरी गगरी।"[155]

यहाँ मुख्य रूप से 'निगारिंपु' तेलुगु शब्द के लिए हिंदी के देशीय शब्द 'सलोनी' भी ठीक है परंतु कवि के भाव पूर्णरूप से लाने के लिए 'रसभरी गगरी' शब्द का प्रयोग किया गया है। समुद्र को स्त्री वाचक शब्द न बनाते हुए अनुवादिका ने सफलता प्राप्त की है। यहाँ भावानुवाद के साथ अनुवाद में स्त्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा का शब्द सही लगता है।

मंचु (ओस) के लिए हिंदी में बर्फ या हिम शब्दों का प्रयोग करने से कवि के प्रसंग में अर्थ के साथ शब्द रमणीयता व्यक्त नहीं हो सकता। ओस में शीतलता, आर्द्रता के बारे में बताते हुए कवि ने ओस को स्त्रीलिंग वाचक बताया है। इसलिए अनुवादिका ने हिम शब्द के बदले 'हिमानी' का प्रयोग किया है जिसमें काव्य सौंदर्य प्रतीत होता है।

4.4.लोकोक्तियों एवं मुहावरों का अनूदित रूप

तेलुगु की लोकोक्तियों एवं मुहावरों को हिंदी में अनुवाद करते समय भी अनुवादक को विशेष ध्यान देना पड़ता है। उदाहरण के लिए

मूल : "तातल कोसं नील्लु तेवटानिकि

तातलु दिगि वच्चारु भगीरथुडिकि"[156]

---

[154] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.48

[155]जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.16

[156] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.95

कठिन कार्य करते समय हिंदी में नाना नीचे नहीं आते बल्कि नानी की याद आती है। इसलिए पहला पंक्ति का तातलु (नाना) शब्द को ऐसा ही रखा गया है। क्योंकि संस्कृत में तात् (नाना) शब्द का अर्थ होता है पिता जी और तातन् शब्द का अर्थ होता है पिता जी के पिता।

अनुवाद :"तातन् के लिए जल लाते

नानी याद आ गयी भगीरथ को"[157]

हिंदी में नीरू (जल) को पानी के शब्द में अनुवाद करने से भी पुल्लिंग वाचक शब्द ही प्रतीत होता है। जैसे-

मूल :"ईनाडु नीरू

कलत कलतगा रोदिस्तुन्नदि।"[158]

अनुवाद :"आज जलधारा

कल कल से रो रही है"[159]

यहाँ पानी या जल शब्द को अनुवाद में पानी के बदले 'जलधारा' का प्रयोग किया गया है। इस प्रसंग में कवि ने जल या पानी को किसी भी लिंग वाचक के रूप में प्रयोग किया गया है, परंतु हिंदी में स्त्रीलिंग वाचक शब्द ही औचित्य है। ध्यान देने की बात यह है कि तेलुगु में अनेक नपुंसक लिंग वाचक शब्द, हिंदी में कुछ शब्द पुल्लिंग वाचक में, कुछ स्त्री लिंग वाचक में बदल जाते हैं। क्रिया पद प्रयोग के साथ वह स्पष्ट हो जाता है।

---

[157]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.90

[158] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.39

[159]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.46

संस्कृत शब्दों को अनुवाद करते समय भी अर्थ संबंधी भ्रमों से भी कई कठिनाइयाँ सामने आती हैं। एक ही संस्कृत शब्द के तेलुगु में एक अर्थ, हिंदी में दूसरा अर्थ आ सकता है। यहाँ अनुवाद का प्रयोग जिम्मेदारी के साथ होनी चाहिए। परिणाम, परमार्थ, परमावधि, साहित्य केधारालु आदि शब्द इसी के अंतर्गत आते हैं।

अनुवादिका की लक्ष्य भाषा पर पकड़ और अनुवादिका की कार्यरचना क्षमता। हिंदी अनुवादिका की मातृभाषा नहीं है लेकिन हिंदी का तद्भव और देशज प्रयोगों का ज्ञान उन्हें है इसलिए तत्सम प्रयोगों से यथासंभव बचते हुए अनुवादिका ने सहज और सरस अनुवाद पर्याप्त चुने हैं। जैसे-

मूल :

"लोयल अडुगुन,
कालुवलु गलगललाड़ायि।
वागुल गिन्नेलतो,
नदुलु पेदवुलु तडुपुकुन्नायि।"[160]

अनुवाद :

"तराइयों के दामन में,
झरने झरझराने लगे।
झरनों की प्यालियों से,
नदियों ने अपने अधर आर्द्र किये।"[161]

---

[160] जलगीतम् (दीर्घ कविता),एन.गोपि, पृ.सं.4

[161]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.15

मूल पाठ में तद्भव का जो सौंदर्य है वही अनुवाद में उतर आया है, विशेषकर 'कालुवलु गलगललाडयि' के लिए 'झरने झरझराने लगे' अनुवाद सरहनीय है। निर्झर या झरना शब्द में 'झरने की क्रिया' सन्नहित है। निराला ने प्रयोग किया था 'झर, झर, झर, निर्झर, गिर – सर में', लेकिन एक अनुवादक के द्वारा 'झरनों' का झरझराना प्रयोग लक्ष्य भाषा हिंदी पर उसका मोह दर्शाता है। इसी प्रकार संस्कृत-हिंदी के तद्भव शब्दों और उर्दू शब्दों का यथावश्यक प्रयोग अनुवादिका ने किया है। जैसे- यह उदाहरण देखिएः

मूल :

"वर्षान्नि प्रसविंचि,
मेघालु तनुवु चालिंचायि।
कन्नवारिकि कडुपु कोता मिगिल्चायि।
मब्बुला अल्पायुष्कालेकानि,
भूमिकि,
आयुष्षुनु पेंचि मरी वेल्लायि।"[162]

अनुवाद :

"वर्षा का प्रसव कर
बदलियों ने दम तोड़ दिया।
जन्मदात्री के पेट में, मरोड़ ही रह गया।
बदलियाँ अल्पायु हैं, फिर भी

[162] जलगीतम् (दीर्घ कविता), एन.गोपि, पृ.सं.05

धरती की

आयु में इजाफा ही कर गयीं।"[163]

इसी तरह अनुवादिका के शब्द चयन में 'मनहर' उछाह, सलोनी, असूखी, नदियाँ, निढाल, शब्द रहित गीत, मुकरना आदि शब्द लक्ष्य भाषा पर उनके अधिकार और भाषा मर्मज्ञता का परिचायक है। यहीं पर अनुवादिका की काव्यमर्मज्ञता ही नहीं बल्कि काव्य-रचना क्षमता पर भी ध्यान जाता है। कहा गया है कि काव्यानुवाद करने के लिए अनुवादक का स्वयं कवि होना आवश्यक है। अर्थात् भावयित्रि और कारयित्रि दोनों प्रकार की प्रतिभाएँ उसमें होनी चाहिए। इस अनुवाद की सहजता का यह दूसरा कारण है। अनुवाद की प्रक्रिया में स्त्रोत भाषा या मूलनिष्ठता और लक्ष्य भाषा के प्रति निष्ठा के चिरंतन द्वंद से इस काव्यकृति की अनुवादिका भी निश्चय ही गुजरी हैं और इसमें महत्त्व लक्ष्य भाषा को ही दिया गया है इसीलिए अनूदित पाठ सहज प्रवाहपूर्ण बन पड़ा है। जैसे-

"हाँ, हिमानी मनोहर ही है!

मन को छेड़ते हुए। सुदूर फैला हुआ शब्द-रहित

गीत ही है।

मगर कभी कभी

हिमानी भी रूठ जाती है।"[164]

यहाँ 'हिमानी' ओस (मंचु) के लिए आया है। 'ओस' की जगह 'हिमानी' विकल्प का चयन अनुवादिका की मर्मज्ञता का सूचक है। यहाँ कहीं अनुवाद का पलड़ा स्त्रोत

[163]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.16

[164]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.21

भाषा की ओर अधिक झुका है, वहाँ अभिव्यक्ति क्लिष्ट हो गयी है। लेकिन ऐसे स्थल बहुत कम है।

4.5. अनूदित पाठ का विश्लेषण एवं मूल्यांकन

अनुवाद मूल्यांकन में पाठधर्मिता की जगह प्रभावधर्मिता को आजकल अधिक महत्त्व दिया जा रहा है, क्योंकि अनूदित हो जाने के बाद रचना स्रोत भाषा से छूटकर लक्ष्य भाषा की निधि बन जाती है। अनुवाद की परंपरा हमेशा लक्ष्य भाषा की परंपरा का विस्तार करती है। इस दृष्टि से 'जलगीत' काव्य रचना हिंदी कविता की परंपरा का एक नया विस्तार है, तेलुगु मिट्टी की सुगंध लिये यह फूल हिंदी बगिया का ही श्रृंगार है।

आचार्य डॉ.एन.गोपि द्वारा तेलुगु में सृजित 'जलगीतम्' का पुनः सृजन/अनुवाद हिंदी में आचार्य पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि) ने अत्यंत प्रभावित ढंग से किया है। बहुमुखी प्रतिभाशाली आचार्य एन.गोपि ने अपनी इस लंबी कविता के माध्यम से अपने पाठकों से जल विहार करवायी है तो, हिंदी अनुवाद का आस्वादन करना गंगा में कश्ती पर सैर करना है। दोनों भाषाओं में पढ़कर आनंद उठा सकने वाले पाठकों का मन 'जलगीत' का नाम लेते ही, तरबतर हो जाता है। क्यों नहीं होगा ? आखिर हम सब 'पनियारे प्राणी' ही तो हैं। जल के माध्यम से अभिव्यक्त कवि की आत्मीयता अपने संपूर्ण भावों के साथ अवतरित है। इस आत्मीयता के कारण अनुवाद की भाषा में भी एक नवीन सौंदर्य की झलक दिखायी पड़ती है। शब्द चयन से लेकर अनूदित पाठ की लय और गति तक से यह प्रकट होता है कि अनुवादिका ने हिंदी भाषा के मुहावरे को पकड़ने में सफलता प्राप्त की है। संस्कृत साहित्य के संस्कार ने भी अनुवाद को औदात्य प्रदान किया है।

सत्ताईस छोटे-छोटे खंडों में विभक्त यह लंबी कविता मानवता एवं दार्शनिकता को समेटते हुए, विज्ञान की भूमिका पर अंकुरित हुई। अतः इसकी विषय वस्तु में विस्तार

के साथ साथ गहराई का भी समावेश हो गया। ऐसी गंभीर विषय वस्तु पर लिखी गयी कविता का अनुवाद करने वाली आचार्य माणिक्यांबा को हिंदी एवं तेलुगु भाषाओं का अपार ज्ञान तो है ही, साथ में समस्त भारतीय भाषाओं की जननी कहलाने वाली संस्कृत भाषा में भी वे सुसंपन्न हैं। अतः मूल शब्द एवं अर्थों के साथ साथ उनके अंतर्मन में छिपी दार्शनिकता को भी वे सफलतापूर्वक उतार सकीं। इन्हीं कारणों से इस 'तरल-गंभीर' कविता का उन्होंने बड़ी सरलता से हिंदी पाठकों के लिए पुनःसर्जन किया है जिसमें उन्हें अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई।

किसी भी विषय का अनुवाद करने के लिए सबसे बड़ी माँग यह होती है कि अनुवादक को दोनों भाषाओं का विस्तृत ज्ञान होने के साथ साथ विषय वस्तु की भी जानकारी होनी चाहिए। 'जलगीत' कविता की विषय वस्तु जल से जुड़ी हुई सारी की सारी समस्याओं के चारों ओर घूमते हुए, उसके सारे तत्त्वों को समेटते हुए आगे बढ़ती है। आगे बढ़ते बढ़ते, रुककर सोचने के लिए बाध्य करती है और चेतावनी भी देती है। इन सारी बातों से ही नहीं बल्कि पानी की अवधाराणा से कौन अवगत नहीं है ? अनुवादिका भी इसकी अपवाद नहीं। अतः मूल कविता के ही समान अनुवाद में भी सरल-सहज भाषा का प्रयोग हुआ। क्योंकि इस 'जल चर्मधारिणी' (पृथ्वी के लिए एक नवीन प्रयोग) पर वास करने वालों का अस्तित्व अब संकट में है। साधारण से साधारण मनुष्य तक उसे पहुंचाना है; उसे सावधान करना है। पाठक के सम्मुख जब ये पंक्तियाँ आती हैं।

"खोने के बाद ही पता चलता है
किसी चीज की कीमत
पानी क्या, पानी है।
सोना है, सोना बहता नहीं है।

इसलिए सोना गले में नहीं उतरता।

इसीलिए पानी के सामने सोना क्या चीज है ?"[165]

तो अपने आप एक झटका लगता है कि 'नीर के बिना नर का और चराचर विश्व का क्या अस्तित्व' ? क्या पलभर के लिए हमारे मन में इस विचार का संचार नहीं होता कि हम प्राकृतिक जलचक्रों को विस्तृत कर कृत्रिम जलयज्ञ करने के लिए उतावले हो रहे हैं ? आज मेघ मंथन के स्थान पर हृदय मंथन की अत्यधिक आवश्यकता है। क्योंकि जीवन का आधार सदा से नीर है। जीव हिंसा का कारण भी आज नीर है। मानव संबंधों को समान प्रदूषित भूगर्भ जल जैसे वाक्यों को पढ़ते ही स्त्रोत भाषा के पाठक के समान लक्ष्य भाषा का पाठक भी इन प्रदूषित 'जल' 'वायु' के साथ साथ प्रदूषित मानवीय संबंधों पर भी सोचने पर विवश होता है। यहाँ अनुवाद की विशिष्टता अपने आप उभरकर आती है।

अनुवाद को पढ़ते समय, वह अनुवाद नहीं लगना चाहिए, मूल रचना लगनी चाहिए। इसके लिए वैज्ञानिक ढंग से कला का प्रयोग होना चाहिए। जलगीत में हमें इसके यत्र-तत्र-स्वतंत्र दर्शन होते हैं। उदाहरण के लिए प्रस्तुत हैः

"जल का तपस्या ही हिम है।

हिम की इस तपस्या को भग्न मत करो।"[166]

---

[165]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.62

[166] जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.64

इन पंक्तियों को पढ़ते ही, हिंदी साहित्य के प्रेमियों के समक्ष कामायनी की इन आरंभिक पंक्तियों का स्मरण अवश्य आता हैः 'नीचे जल था ऊपर हिम था, एक तरल था एक सघन। एक तत्त्व की प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन !'

अनूदित जलगीत की इन पंक्तियों को पढ़ते ही, महाकवि प्रसाद की उन पंक्तियों का स्मरण करनाः कसौटी के लिए और क्या चाहिए ?

अनुवादक को जब तक विस्तृत रूप से अध्ययन करने की आदत नहीं होती तब तक ऐसे लक्ष्य-भाषा की मूल रचनाओं का स्मरण आना असंभव है। क्योंकि भाषा के ज्ञान के साथ साथ लक्ष्य-भाषा के मुहावरेदार प्रयोग का ज्ञान ही अनुवाद को सुंदर एवं पठनीय बनाता है। इन गुणों के साथ साथ अनुवादिका ने यह सिद्ध किया है कि उनका ज्ञान कोरा पुस्तकीय नहीं बल्कि हिंदी भाषा-भाषियों का सहवास भी है और उन्होंने उसका पूर्णरूप से उपयोग किया है। जैसे कि कवेलू, कुररी जैसे शब्द। आज नैसर्गिकता एवं प्राकृतिक सौंदर्य से कोसों दूर भाग रहे हम अपनी भाषा को भी कृत्रिमता से लाद रहे हैं। ऐसे में, मिट्टी की महक और जलधारा के कलकल नारे को हमारे मस्तिष्क में उतारने वाले मूल कवि के भावों को अनुवादिका ने भी उतनी ही कुशलता से उतारा है : 'वर्षा की धाराओं से बुने नन्हें झरने, सच-नन्हें ही हैं झरने। प्रवाहों की उंगली पकड़कर उनकी गोद में समाने तक वे नन्हें झरने ही हैं।'

अनुवाद की सफलता तभी मानी जा सकती है जब उसमें मूल के समकक्ष रखे जा सकने वाले मुहावरों और कहावतों का उचित प्रयोग हो जैसे कि 'दिल भर आया', 'अब पछताये हो क्या', पानी देना, नानी याद आना आदि जो अत्यंत सार्थक हैं। अनुवाद में स्थानीय भाषा के शब्द भी यहाँ-वहाँ दिखते हैं-जैसे चुरका।

मूल रचयिता के भाव अपने होते हैं और भाषा भी अपनी होती है। छंद अपना होता है। अतः वह बड़ी स्वेच्छा से रचना कर सकता है। किंतु अनुवादक के लिए कई बंधन। स्त्रोत एवं लक्ष्य भाषाओं की जानकारी का सहारा लेकर वह परकाय-प्रवेश करता है। गद्य के अनुवाद में कुछ कुछ विस्तार करते हुए व्याख्यात्मक ढंग से घटा-बढ़ाकर अनुवाद का कार्य सुसंपन्न कर सकता है। किंतु, छंदों की गति और उसके लय को लेकर कविता का अनुवाद करना कुछ दुष्कर कार्य है। भावों की क्षति न होते हुए, मुक्त (क) छंदों का ही सही अनुवादिका ने कई अनुवाद किये हैं। अतः उनका वह अनुभव जलगीत जैसी लंबी कविता के अनुवाद में भी दिखता है। जैसे कि यह प्रवाहमान अनुवाद देखिएः

"हे जल!

आज भी तुम रहस्यमयी पिटारी हो,

नव नव फूलों की,

विकसित फुलहारी हो !"[167]

अच्छे अनुवाद के लिए आवश्यक सभी गुण इस अनूदित लंबी कविता में विद्यमान हैं। जैसे कि कविता में निहित संदेश व उसका संदर्भ दोनों उजागर हुए हैं। क्योंकि आज जल तथा वायु के आगे प्रदूषित विशेषण जोड़ने पर हम लोग मजबूर हो रहे हैं। क्या आज के ऐसे संदर्भ में इन पंक्तियों को पढ़ने वाले पाठक के मन में घंटी नहीं बजती ? बस ! किसी भी रचना की इससे बढ़कर और क्या सार्थकता हो सकती है ?

मूल कवि तथा अनुवादिका दोनों ही अध्यापन कार्य से जुड़े हैं। अतः उनमें अपने विषय को समझाने तथा जागरूक करने का प्रयास रहा है और वे सफल भी हुए हैं। एक

[167]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), पृ.सं.40

ओर तेलुगु भाषियों के समक्ष कबीर के दोहे रखे गये हैं तो दूसरी ओर हिंदी भाषी तेलुगु के वेमना जैसे कवियों से परिचित हुए हैं। यह अनुवाद के ही माध्यम से संभव है।

अनुवाद में कहीं-कहीं स्थानवाचक संज्ञा शब्दों को पाद-टिप्पणी में स्पष्ट किया गया है, जैसे-कोल्लेरू (आंध्र प्रदेश के पूर्वी तटवर्ती इलाके में स्थित सरोवर), नन्नया (ग्यारहवीं शताब्दी के कवि। तेलुगु में 'महाभारत' को अनूदित करनेवाले तीनों कवियों (कवित्रय) में प्रथम। तेलुगु के वे ही आदिकवि माने जाते हैं।), अल्लसानि पेद्दना(सोलहवीं शताब्दी के तेलुगु के प्रबंध-कवि तथा कृष्णदेवराय के दरबारी कवि), पोतना (पन्द्रहवीं शताब्दी के तेलुगु कवि और तेलुगु-काव्यजगत् के 'आंध्र महाभारत' के प्रणेता), कवि वेमना (सत्रहवीं शताब्दी के तेलुगु के महान सन्त कवि, जो कबीर के समकक्ष माने जाने वाले कवि हैं), कोलराडो (अमेरिका के अरिजोना राज्य की बड़ी नदी), काकतीय राजाओं (तेरहवीं शताब्दी के सम्पूर्ण दक्षिण भारत पर शासन करनेवाला राजवंश), विजय नगर कृष्ण देवराय (सोलहवीं शताब्दी के विजयनगर साम्राज्य के प्रमुख राजा।) कुंटाला जल-प्रपात (आंध्र प्रदेश के आदिलाबाद जिले में स्थित एक छोटा जल - प्रपात) आदि।

हिंदी और तेलुगु में संस्कृत के समान रूपी समानार्थी शब्दों के प्रयोग में अनुवादक के लिए कहीं कठिनाई नहीं होती। परंतु, जहाँ समान रूपी भिन्नार्थी शब्द आते हैं, वहाँ अनुवादक को अत्यंत सतर्कता से अपना काम करना पड़ता है। स्वेच्छानुवाद के कारण अनुवाद में अक्षर-संख्या का पालन नहीं किया जा सका। मूल के निर्माण में जो 'पंच' (Punch) हैं, अनुवाद में उसे यथासंभव लाने का प्रयास हुआ है।

गोपि की कविता से गुजरते हुए ऐसा महसूस होता है कि गोपि वेदना और संवेदना के कवि हैं। शहर में रहते हुए भी कवि की चेतना में ग्राम-प्रदेश पूरी तरह जिंदा है। प्रकृति से उन्हें लगाव है, विकास के नाम से जन-जीवन में प्रसारित विलास और

विकृतियों के प्रति उनका मन विद्रोह कर उठता है और कभी-कभी कवि के भीतर बैठा कर्मशील (Activist) जग उठता है। डॉ.वि.वि.बी.रामा राव ने उनकी कविता में मनो-वास्तववाद (Psychological Realism) और मानववाद (Humanism) के जो दर्शन किये उसकी प्रतीति उनके काव्यों में से हमें भी अवश्य मिलती है।[168]

"मैंने श्री एन.गोपि द्वारा रचित तथा प्रो.मणि (प्रो.माणिक्यांबा) द्वारा हिंदी में अनूदित काव्य 'जलगीत' का रसास्वादन किया और तृप्त हुआ। 'पानी' वर्तमान मानव-जीवन की मूलभूत समस्या का रूप लेता जा रहा है , क्योंकि वह जीवन का ही दूसरा नाम है। मेरी जानकारी में 'पानी' पर लिखी हुई शायद सबसे लम्बी कविता है, अब तक की। इसमें पानी की तरह ही एक सहप्रवाह है और दुर्लभ पठनीयता। प्रो.मणि ने अपने हिंदी रूपांतर में उस सहज प्रवाह को आद्यंत बना रखा है और इस प्रकार यह एक उच्च स्तरीयता प्राप्त कर सका है। मैं इस महत्वपूर्ण अनुवाद के लिए अनुवादिका को हार्दिक साधुवाद देता हूँ और इस मूल रचयिता को कोटिशः बधाइयाँ।[169] - केदारनाथ सिंह

"जलगीतम् का अनुवाद मेरे जीवन में मील के पत्थर जैसा है। चूंकि इस अनुवाद से मुझे बहुत सारी ख्याति मिली और कई पुरस्कार भी मिले हैं। इसके साथ मन का आनंद।" - प्रो.मणि

भारतीय साहित्य में ही नहीं विश्व साहित्य में यह रचना अपनी महत्ता एवं प्रासंगिकता को बरकरार रखेगी। यह कवि मानस एन.गोपि की सर्वोत्कृष्ट रचना है। भारतीय साहित्य के मध्य सेतु बनाने का काम श्रेष्ठ अनुवादक ही कर सकते हैं। इस रूप

---

[168] 'Voices of the wing' Edited by Dr.V.V.B.Rama Rao

[169]जलगीत (लंबी कविता), एन.गोपि, अनु.पी.माणिक्यांबा(प्रो.'मणि'), फ्लग पर उदृत।

में प्रो.पी.माणिक्यांबा ने बेहतरीन कार्य किया है। इससे हिंदी भाषा समृद्ध होगी एवं भारतीय भाषाओं के मध्य सांस्कृतिक संपर्क सूत्र बढ़ेगा। यह रचना भारतीय साहित्य की धरोहर के रूप में देखी जानी चाहिए।

पंचम अध्याय

‘समय को सोने नहीं दूँगा’ और
‘समुद्र, मैं और गोवा’ संग्रहों के
मूल एवं अनूदित पाठ का वि**श्ले**षणात्मक मूल्यंकन

पंचम अध्याय

5. 'समय को सोने नहीं दूँगा' और 'समुद्र, मैं और गोवा' संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यंकन

5.1. समय को सोने नहीं दूँगा

किसी भी कविता को अनुवाद करने के लिए कुछ दशाएँ होती है। पहला अनुवादक जो अनुवाद करना चाहने वाला कृति को ध्यान से पढ़ना जरूरी है और पढ़कर उसे मूल भाव को अच्छी तरह से समझना भी अनिवार्य है। ताकि विचारों की, भावों के बीच का अंतर समझकर, उसे अपने मन में भर लेना है। एक तरह से अनुवाद का कार्य पराकय प्रवेश जैसा है। पाठकों को लगना चाहिए कि ये कविताएँ अनुवादक ही लिखी हो। अनुवाद का मतलब है, हो सके तो सच्चाई के साथ, सुंदर रूप से लक्ष्य भाषा अनुवाद करना। अनुवाद के बारे में कुछ लोगों का कहना है कि 'It can`t be beautiful if it is faithful and can`t be faithful if it is beautiful' लेकिन यह धारणा कुछ हद तक गलत साबित करता है, क्योंकि अनुवाद में पुनःसृजन अनिवार्य है। नहीं तो दो भाषाओं को जानने वाला कोई भी शब्दकोष के माध्यम से अनुवाद कर सकता है।

अनुवादक को अनुवाद करने का स्वेच्छा रहना जरूरी है। क्योंकि जब दो भाषाओं में अनुवाद करने के लिए दोनों भाषाओं की वाक्य निर्माण एक जैसा नहीं रहता है। कुछ भाषाओं में सहायक क्रियाओं को आवश्यकता पड़ता है तो कुछ भाषाओं में नहीं।

5.1.1. समय को सोने नहीं दूँगा लिखने का कारण

डॉ. एन. गोपि का मानना है कि समय को सोने नहीं दूँगा समय के अनेक पहलुओं को प्रतिबिंबित करता है। इसमें आर्ति, वेदना और व्याख्या है। मैं यह समझता हूँ कि मैंने ये कविताएँ एक प्रकार की अचेतावस्था में लिखी थीं। इस संग्रह की रचना के कुछ समय पहले 17 साल की मेरी बेटी की मृत्य हो गई थी। मैं पाताल में गिर गया था। बड़ी मुश्किल से ऊपर चढ़कर, धरती पर रेंगते हुए, समय से सवाल करते हुए, लिखी गई कुछ कविताएँ इस संग्रह में हैं। व्यक्तिगत दुःख सामान्य धरातल पर आकर विश्वदुःख के पास किस प्रकार पहुँच जाता है, इसी से संबंधित दृश्य इस संग्रह में दिखाई देंगे। यह संग्रह मुझे मनुष्य के और क़रीब ले गया।

5.1.2. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण

साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2000 में पुरस्कृत मूल तेलुगु कृति कालान्नि निद्रपोनीयनु यानी समय को सोने नहीं दूँगा की कविताओं में फूल है, बारिश है, सूरज है, आकाश है, समुद्र है, जल के रूप में आँसू की बूँदे हैं – यानी प्रकृति का स्वाधीन संसार है। इन कविताओं के माध्यम से इस संसार का मनुष्य-जीवन में महत्व व्यंजित किया गया है, प्रकृति के तत्व के समक्ष मनुष्य की लघुता का भी अहसास कराया गया है। प्रकृति का मानवीकरण जो इनमें किया गया है उसे एक अलंकार के या सरलीकृत के रूप में नहीं लिया जा सकता। यह गुण कवि श्री एन. गोपि की लगभग प्रत्येक कविता में है। बोध को संवेदना या भाव में परिवर्तित करने का यह ऐसा प्रयास है जो अब धीरे-धीरे समाप्त होता रहा है और एक तरह से दुर्लभ होता जा रहा है।

समय को सोने नहीं दूँगा में संग्रहित कविताओं में स्थान-स्थान पर अनेक अछूती उपमाएँ देखने को मिलती हैं जो कवि के जीवन-पर्यवेक्षण और उसके प्रति राग की ओर संकेत करती हैं। हिंदी के कविताप्रेमी पाठकों को इन कविताओं में एक नया और अनूठा रस मिलेगा।

इसमें कवि कहता है कि समय नहीं बदलता है, बल्कि मनुष्य बदलता है। समय में विविध बिंबों से मनुष्य अचेतन अवस्था में रहता है। छाया को कितना सुंदर वर्णन किया है-

पेड़ से जन्म लेता नहीं साया

धूप से लड़कर जीता गया अमृत-कवच है वह।[170]

इसमें अनंत तत्व है। समस्याओं से लड़ना ही मनुष्य का प्राथमिक गुण है। लड़ाई की जीत के बाद उसे मुग्ध रूप से शांति मिलती है।

समय को सोने नहीं दूँगा शीर्षक की सार्थकता के बारे में कवि इस प्रकार कहता है-

समय के पन्ने पर

कालातीत स्याही से

जब चित्र रचा जाता है

तो उसका नाम होता है

मानव! [171]

[170] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 91.

[171] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.101.

मनुष्य कालातीत से संघर्ष कर, मानवता को बचाके रखना चाहिए। विज्ञान कितना ही वास्तविकता को बतायें, परंतु एक पानी की बूँद ही कविता बन जाती है। उस बूँद को बरसाने वाला ही मनुष्य है। निरंतर बरसने वाला यह पानी की बूँद मनुष्य को सोने नहीं देता है। समय से भी मनुष्य उत्तम है। मनुष्य समय के खोपड़ी पकड़ कर किया जाने वाला अनश्वर अनुभवों के सफर के सामने यह सारा संसार आश्चर्यचकित हो जाता है। यही समय को सोने नहीं देती है। मनुष्य और समय के बीच में होने वाला संघर्ष ही कालजलम् नामक कविता में निरूपण किया है कवि।

इसमें कवि रूप स्वभावों के क्रियाओं को निरुपण करके, कोई साधारण मनुष्य के सोच के बाहर उन क्रियाओं को प्रतिबिंबित वस्तु निरूपण किया है।

एक छलनी
एक छान
छानने का एक कपड़ा
अनुभवों के महान चित्रों के रंगों से
प्रभावित होनेवाला लिट्मस कागज़ है जीवन।[172]

कवि अपने कविताओं के बारे में बताते हुए कहते हैं

चाहे जितने भी मंत्र-तंत्र करूँ
मेरी कविताएँ घमंड नहीं करतीं
ज़रा-सा शर्माती हैं
पर डर उनके स्वभाव में है ही नहीं।[173]

---

[172] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 45.

समय को सोने नहीं दूँगा में कविताएँ इस प्रकार हैं- यहाँ फूल हैं, बारिश है, सूरज है, आकाश है, समुद्र है, जल के रूप में आँसू की बूँदें हैं, पत्थर हैं – यानी प्रकृति का एक स्वाधीन संसार है। इन कविताओं के माध्यम से इस संसार का मनुष्य – जीवन में महत्व व्यंजित किया गया है और महत्व भी क्या व्यंजित किया गया, प्रकृति के विराट तत्व के समक्ष मनुष्य की लघुता का अहसास कराया गया है। ऊपर मानवीकरण की बात आई है, लेकिन यहाँ मानवीकरण को एक अलंकार के या सरलीकृत रूप में नहीं लिया जा सकता। यह गुण कवि गोपि भी लगभग प्रत्येक कविता में है जो बोध को संवेदना या भाव में परिवर्तन करने का ऐसा प्रयास है जो धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है, दुर्लभ हो गया है। और इसीलिए जिसकी ज़रूरत और अधिक बढ़ गई है, उसके प्रति वैज्ञानिक चेतना के समानांतर कविता भी अपना काम कर रही है और अपनी प्रासंगिकता को, अपने महत्व को भी प्रमाणित कर रही है। इस तरह की कविताएँ अब दुर्लभ होती जा रही है।

इस कविताओं में प्रकृति से सीधे तामात्म्य है, मार्ग में आनेवाले सारे अवरोधों, सभ्यता के आवरणों को ध्वस्त किया गया है –

सभी नेता मिल जाएँ फिर भी
बारिश की एक बूँद बरसा नहीं सकते
इसलिए मैं बादलों को ही प्रणाम करता हूँ।[174]

[173] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 31.

[174] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 25.

धरती द्वारा आकाश की ओर

किया गया विस्फोट है

बारीश की बूँद

इसलिए मैं समुंदरों को ही प्रणाम करता हूँ।[175]

इन कविताओं में प्रकृति, कवि (मनुष्य), कविता घुल-मिलकर एक हो गए हैं। इसीलिए कविता पर बहुत भरोसा किया गया है, कविता को विषय बनाकर अनेक कविताएँ लिखी गई हैं। यह कहा गया है कि, देखा जाए तो बारिश की बूँदें भी अक्षरों जैसी ही हैं। जगह जगह विश्वकाव्य की अवधारणा ने रूप धारण किया है, कविता विश्व के प्रत्येक कण में व्याप्त हो गई है। ये कविताएँ मानवीय करुणा की वाहक भी हैं-

समय के पन्ने पर

कालातीत स्याही से लिख रहा हूँ

स्याही का नाम है आँसू।[176]

इसी कालातीत स्याही से मानव नामक चित्र की सृष्टि होती है। बिना आँसूओं के इस चित्र में प्राण-प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती। ओएसिस रेगिस्तान की आँख हैं, आँसू खून का पर्याय हैं, मंदिरों में पत्थरों की दरारों से आँसू ही बहते हैं और

आँखों में खिलनेवाले अनोखे पुष्प हैं

आँसू ऐसे स्वच्छ पानी की नदियाँ हैं

जिनके तल देखे जा सकते हैं।

---

[175] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 25.

[176] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 99.

किसी अदृश्य हाथ ने
नारियल के अंदर के पानी की तरह
भरे हैं ये आँसू
बादल हमारे बस में नहीं होते हैं न !
अपने आप अचानक मेघ जो बरसाते हैं
वह पानी भी आँसू है
विश्वदुःख के करीब जा रहा हूँ
जग अपने हाथ का सहारा नहीं देंगे।[177]

कविता का जन्म-स्थान ऐतिहासिक तेलंगाणा प्रांत है। उसने तेलुगु कवि वेमना पर शोधकार्य किया है। इन कविताओं में आंध्र की जनता की संघर्षशीलता तथा जातीय भावना व्यक्त हुई है। ब्लो आउट और एपिटाफ कविताएँ इस संदर्भ में पठनीय कविताएँ हैं।

रोटी नामक कविता में रोटी जिस संघर्ष से कमाई जाती है वह अन्न को ब्रह्म बना देता है। अन्न का वास्तविक महत्व उन्हें समझ में आता है जो कठोर परिश्रम के बाद उसे प्राप्त करते हैं। उनके लिए वह क्रांतचक्र बन जाती है।

रोटी आसमान से छूटकर नहीं गिरती
धरती के भीतर की उर्वरता से
पसीने की बूँदों पर चढ़कर आनेवाला
भूख खेतों की मिट्टी के गीतों पर
ताल देनेवाले हाथों में से

[177] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 73.

चलकर आनेवाला क्रांतिचक्र है यह।[178]

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार समय को सोने नहीं दूँगा संग्रह की बहुत-सी कविताओं में अनेक अछूती उपमाएँ देखने को मिलती हैं। इतनी सारी नई उपमाएँ कवि के जीवन-पर्यवेक्षण और उसके प्रति राग की ओर संकेत करती हैं। एक कविता है, एकवचन उनकी कुछ पंक्तियाँ देखिए-

यहँ एक आदमी था कहाँ गया ?

कली के फूल बनकर खिलते समय
उठनेवाली ताज़ी महक की तरह हँसता था
एक अद्‌भुत दृश्य-सा दिखता था
मानो पत्तों के बीच में से किरणें फूट रही हों। [179]

5.1.3. अनुवाद संबंधी समस्याएँ

5.1.3.1. शब्द प्रयोग के स्तर पर

उदाहरण के लिए

इदि मेट्ट पोलला मट्टिरागानिकि
चेतुलु वेसे तालांलोंचि
नडिचोच्चिन कांतिचक्रम्।[180]

---

[178] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006.पृ. सं. 19.
[179] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.96.
[180] कालान्नि निद्रपोनिव्वनु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, 1998. पृ.सं. 9.

उपर्युक्त पंक्तियों में हिंदी में इदि यह के रूप में आने से ही उसका रूप सुंदर अनुवाद होगा। उसी तरह कहीं कहीं विभक्ति प्रत्ययों का उपयोग करना अनिवार्य है। रोट्टे सूर्युडु तेलुगु भाषा में सही है मगर हिंदी में रोटी सूरज नहीं कहते, रोटी का सूरज कहना पड़ता है।

सूखे खेतों की मिट्टी के गीतों पर
ताल देनेवाले हाथों में से
चलकर आनेवाला कांतिचक्र है यह।[181]

5.1.3.2. वाक्य निर्माण को लेकर

कविता को अनुवाद करते समय अधिकतर वाक्य निर्माण का प्रयोग नहीं होता है। क्योंकि कविता में वाक्यों के बजाय शब्दों से, पद-बंधों से कविता बनती है। लेकिन डॉ. एन. गोपि की कविताओं पर जगह-जगह पर वाक्यों के प्रयोग हुए हैं। इन वाक्यों को हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादक को सावधानी से रहना जरूरी है। क्योंकि दोनों भिन्न भाषें होने के कारण वाक्य-निर्माण में अनुवाद का वाक्य ही नहीं, बल्कि अर्थ भी बदल सकता है। कई बार वाक्य निर्माण भी बदल जाता है।

उदाहरण के लिए –

कालानिकि चेतनाइना ओके ओक्क पिच्चि पनि मृत्युवु
अदि तन गोप्पतनंगा मुरिसिपोतुंदि।[182]

हिंदी में इसका अनुवाद हुआ

---

181 समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 19.

182 कालान्नि निद्रपोनिव्वनु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, 1998. पृ.सं. 101.

समय एक ही बेकार काम जानता है वह है मौत

उसीको अपना सामर्थ्य समझकर खुश हो जाता है।[183]

उपर्युत्क अनुवाद पंक्तियों में कई बदलाव आये हैं। जैसे तेलुगु में समय को कालम् कहते हैं। लेकिन हिंदी में भूतकाल, भविष्यत तथा वर्तमान को सूचित करते समय ही या अकाल के संदर्भ में ही काल शब्द का प्रयोग करते हैं, अन्यथा बहुत कम इसका प्रयोग होता है। हिंदी में काल शब्द का अर्थ कालम् चेशाडु (मृत्यु हो गया) या यम अर्थ में इसका प्रयोग करते हैं। इसलिए उपर्युक्त पंक्तियों में काल को समय शब्द में बदल दिया गया है।

5.1.3.3. पद-बंधों के संदर्भ में (शब्द स्तर पर)

तेलुगु के शब्दों को हिंदी में सटीक शब्द का चयन भी अनुवाद के लिए अत्यंय आवश्यक है। एक कविता में अंदी अंदका (मिली न मिली), अनुकुंटमगानि (सोचते हैं हम) ये दोनों पदों से कविता की शुरुआत होती है। इसका अनुवाद हिंदी में हम सोचते हैं कि, हम समझते हैं रूप में हुआ। लेकिन और संक्षिप्त रूप में अनुवाद करने से शायद अच्छा होगी।

डप्पु कविता को नेपथ्य के साथ पढ़े बिना अनुवाद करना असंभव माना गया है। क्योंकि अनुवादक कई वर्षों तक आंध्र प्रदेश से दूर होने के कारण यहाँ की परिस्थितियों से अनजाने थीं। क्योंकि इसमें कोमरय्या के बारे में पता करने के बाद ही अनुवाद करना सटीक होगा।

एपिटाफ शीर्षक कविता को अनुवाद करते समय भी कई समस्याएँ आयी है, इसका कारण यह है कि अनुवादक दिल्ली में रहना और यहाँ की प्रांतों के बारे में

[183] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006.पृ. सं. 104.

जानकारी की कमी। काचीगुडा, बोग्गुलकुंटा, अबिड्स क्या है यह नहीं जानती है अनुवादक। इस कविता में जिक्र किये कवि एवं कविताओं के बारे में भी अनुवादक अनजान थी। इसलिए ज्यादा जानकारी लेने के बाद ही अनुवाद किये। क्योंकि किसी भी कविता को अनुवाद करने का मतलब वहाँ की संस्कृति के बारे में जानना अनिवार्य है।

5.1.3.4. लिंगगत समस्याएँ

तेलुगु में स्त्रिलिंग, पुंलिंग, नपुंसकलिंग हैं। जबकि हिंदी में स्त्री, पुलिंग दो ही लिंग हैं। हिंदी में लिंग विधान, संस्कृत के समान शब्द के रूप में आधारित है। शब्द के लिंग का निर्धारण करने वाले जितने नियम हैं, सब अपवादों से भरे हुए हैं। अहिंदी भाषी के लिए शब्दों के लिंग का निर्णय करना कठिन हो जाता है। एक ही शब्द के दोनों लिंगों में भिन्न-भिन्न अर्थ हो जाते हैं। उदाहरण के लिए 'हार' का पुलिंग में अर्थ 'पुष्पमाला' है तो स्त्रीलिंग में 'पराजय'।

कालजलम् कविता में कवि माँ की अंचल से समुद्र का तुलना किये हैं। लेकिन समुद्र नपुसंग लिंग है। इसलिए तेलुगु स्त्री लिंग की जैसी समुद्रम् पोंगिंदि, समुद्रम गर्जिस्तोंदि कहते हैं। हिंदी में नपुंसक लिंग नहीं है। पानी, पत्थर, रप्पा, आकाश आखिर सुख-दुख जैसे भाव भी स्त्रीलिंग या पुल्लिंग में रहता है। हिंदी में समुद्र पुल्लिंग है। यहाँ पर तेलुगु में समुद्रम् तल्लिला तल निमिरिंदि है। इसी रूप में हिंदी में अनुवाद करने से अस्वाभाविक लगता है।

ज्ञान को हिंदी में पुल्लिंग के रूप में प्रयोग होता है मगर हिंदी में अलग है।

5.1.3.5. देशज शब्दों के संदर्भ में

मांडलिक हर भाषा की खासियत और पद संपदा भी है। इन्हें हिंदी में देशज शब्द भी कहा जाता है। ये शब्द अपने प्रांत में, इलाके में एक भाषा से रूपांतर न होकर स्वयं सिद्ध बनते हैं। इन शब्दों को खास तौर पर वहीं लोग जानते हैं, जो वर्षों से उसी इलाके या प्रांत में निवास करते हैं। इसलिए इन शब्दों को अनुवाद करने में किसी भी अनुवाद के लिए अनुवाद-कार्य कठिन होगा। लेकिन जिस अनुवादक ने दोनों भाषाओं को अर्थात् स्त्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषाओं की जानकारी हो तो वह आसानी से अनुवाद कर सकता है।

लेकिन इसके लिए लक्ष्य भाषा में भी इस देशज शब्द की अर्थ प्रतीत होने वाला शब्द रहना अनिवार्य है। कभी कबी ऐसा होता है कि मूल भाषा में देशज शब्द के लिए लक्ष्य भाषा में समान अर्थ देने वाला शब्द नहीं मिल पाता है। ऐसी स्थिति में अनुवादक समान अर्थ प्रतीत होने वाला किसी पर्याय शब्द से काम लेना पड़ता है। पोक्किलि, गय, उरलिन, उड्डीनलु जैसे शब्दों को बिना जानकारी अनुवाद नहीं कर सकते।

5.1.3.6.शीर्षक को लेकर समस्याएँ

रचना में शीर्षक ही शीर्षस्त होता है। रचना में शीर्षक का वह स्थान है जो महल में महाद्वार होता है। जैसे किसी राजमहल में की भव्यता उसके प्रवेशद्वार अर्थात् महाद्वार से ज्ञात होती है है वैसे रचना की भव्यता और श्रेष्ठता उसके शीर्षक से ज्ञात होता है। किसी भी रचना की श्रेष्ठता के जितने भी विभिन्न मानदंड हैं उनमें सर्वप्रथम है उसका 'शीर्षक'। अतः अनुवाद में भी शीर्षक मार्मिक, सार्थक, आकर्षक तथा उन सभी गुणों से युक्त हो जो मूल भाषा में है। किंतु लक्ष्य भाषा में मूल भाषा में समान शीर्षक खोजना

एक जटिल समस्या है। मूल शीर्षक में जो गुण विद्यमान हैं, उन्हें अनुवाद में लाना कभी-कभी मुश्किल हो जाता है।

उसी तरह चच्चिपोतुन्न उत्तरम् (मरती हुई चिट्टी) यह कविता का शीर्षक ही हिंदी में कुछ अटपटा-सा लगता है। क्योंकि मरती हुई चिट्टी की बदले में लुप्त होती हुई चिट्टी नाम रखने के लिए कई लोग सुझाव दिये हैं। लेकिन अनुवादक को सूझा कि उसका शीर्षक मरती हुई चिट्टी ही सटीक लगी और वहीं रखा गया।

और एक कविता बोंता (गुदड़ी) इसका भी शीर्षक रखने के लिए प्रांत की संबंध में समस्या आयी है। तेलुगु प्रदेश में गुदड़ी सिर्फ गरीबों में रहे, यह जरूरी नहीं है। मध्य वर्ग के लोग भी इसका उपयोग करते हैं। गुदड़ी पुराने कपड़ों से लेकिन हिंदी में इसके लिए हिंदी में सटीक शब्द ही नहीं मिली तो गुदड़ी या कंथा ये दोनों शब्द सही लगा।

5.1.4. अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यंकन

अनुवादक आर. शांता सुंदरी का मानना है कि -गद्य की अपेक्षा पद्य का अनुवाद कठिन होता है। इस दिशा में प्रयत्न करने की प्रेरणा सन् 1996 में मुझे श्री हरिवंशराय बच्चन से प्राप्त हुई है। भाषाओं के बीच अनुवाद द्वारा आदान-प्रदान के संबंध में उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा और इस काम में अपनी ओर से मुझे भी प्रयत्न करने की बात कही। अनुवाद साहित्य के महासागर में मेरा यह प्रयास भी एक बूँद के समान है।

अतीत के फल मैंने प्राप्त कर लिए। वर्तमान में चमक रहा हूँ। भविष्य में बीज बिखेर रहा हूँ। घावों से अभी मेरा मन हारा था। इस पुरस्कार ने उस पर चंदन का लेप लगा दिया है। मेरे काव्य जीवन में यह केवल पड़ाव है। मैं समझता हूँ कि भविष्य में नित्य सत्यन्वेषण करते रहने के लिए यह एक मार्ग बनेगा। इससे जितने भी लोग जुड़े हैं उन सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ।

कई वर्षों से, लगभग तीस साल से ऊपर कविता लिखने वाला कवियों को समय भी परीक्षा लेती है। कोई भी कवि समय दिया गया उत्साह से या उध्रेक से कविताएँ लिखता है। बाद में कवि और समय के बीच प्रतियोगिता चलता है। इस प्रतियोगिता में कवि समय को पार किया या समय से वंछित रह गया या समय से पीछे रह गया देखने से किसी कवि का स्थान, कविता की कीमत हम अनुमान लगा सकते हैं। इस दृष्टि से देखें तो समय से पार करने वाला है कवि एन. गोपि। पाँच दशकों से ज्यादा वे समय को, समय रखा गया परीक्षाओं को पार करते हुए कविताओं की कीमत को एवं अपना स्थान को कविता संसार में सुस्थिर रखते आ रहे हैं।

समय से संबंधी तात्विक विचारों के समाहा है समय को सोने नहीं दूँगा। इस कविता संग्रह में कविता की और समय के बीच रहे संबंधों से विचारों को उत्तेज कराती है। कविता वास्तविक जगत् तथा कवि के बाह्य जगत् का प्रतिबिंब है, यह हम सब जानते हैं। उस प्रतिबिंब में कवि सिर्फ कविता को लिखके ही नहीं छोड़ते बल्कि उसमें बदलाव तथा परिणाम के बारे में विचार-विमर्श करता है। परिणाम फिर से समय से संबंधित विषय है। उस रूप में देखा जाए तो, कविता समय से शासन किया जाता है। समय और कविता के बीच में कुछ साम्य देखने को मिलते हैं। हम का मतलब है हमारा समय ही है। समय से अपनेआप को अलग करके रहना असंभव है। कभी-कभी समय हमसे अलग होने जैसा दिखाई देता है, बल्कि ऐसा पूर्ण रूप से होता नहीं है। उसी तरह कविता भी है। वह कितना स्वीयात्मक है, उतना ही वस्तुपरक भी है। कविता में, समय में हमें उसे अलग करके दिखाना असंभव है।

इस तरह का समय को, कविता को एक साथ जोड़ कर दोनों पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास किया है डॉ. एन. गोपि ने। दोनों पर कोमल से, तीर आर्द्र से उसी समय

बहुत बड़ा विचारों से इस तरह दोनों घोड़ों पर एक साथ सवारी करके अनुभव सफर में आने वाले सफर में बड़ा प्यार से पाठकों के सामने लाये हैं।

हमें कभी-कभी ऐसा लगता है कि कवि किस समय के बारे में बात कर रहे हैं अपनी कविता में। वे बीती हुए समय के बारे में लिखे या वर्तमान को चित्रित करें, भविष्य को दर्शाये इन सबसे पहले वे लिखते समय के पलों को भौतिक वास्तविकता के पास ही शुरु करता है। भूत एवं भविष्य ये दोनों सामाजिक वास्तविकता को प्रतिबिंबित पलों का महत्व हमेशा रहता है। किसी भी समय में कविता के बारे में बात करते हैं तो ये तीनों काल आते हैं। भूत और भविष्य से अटूट संबंध रखने वाला वर्तमान अलग से कहीं नहीं रहता है। इसलिए समय अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये सारे विषय हम गोपि की कविता में देखने को मिलती हैं।

कवि को समय पर जीत होने की पूरा आत्मविश्वास है। कभी-कभी ऐसा विचार करते हैं कहीं समय हमें छोड़कर गहरीं नींद में है क्या यह जानने के लिए उत्सुक भी है। समय छोड़े गत स्मृतियों से बहुत प्यार भी है। इन सबको पार करने के बाद, समय से लड़ कर अपना विचारों को प्रकट कर समय पर विजय प्राप्त करता है। दुःख, वियोग ताथ हार, निराश से चैतन्यरहित करने वाले समय के प्रयत्नों को विफल करके हम समय को सोने नहीं देना ही मानव का असली जीवन है यह कवि का मानना है। इस कविता संग्रह में पहला पृष्ट से लेकर अंतिम पन्ना तक समय से संबंधी एक क्रमानुसार रूप है। समय को लेकर कवि की विचार बहुत विस्तार है। इसमें कवि पहला समय के साथ दोस्ती की भावना ही रखता है। प्यार से, आत्मीयता के साथ ही शुरु करता है। समय के साथ साथ जीने जैसा होता है।

कई समय से ढकने वाली गुदड़ी फट गयी तो पत्नी सुई-धागा से उसे मरम्मत करती है। यह समय के साथ जीना ही है।

अप्पुडामे करलाम् पट्टुकुनि
कालदेवतातो युद्धम् चेस्तुनट्टुगा उंदि।[184]

कहकर एक सुंदर दृश्य हमारे सामने लाते हैं। उसके बाद कालजलम् कविता में समुद्र और समय के बीच व्यूहत्मक घर्षणा को दिखाकर समय से रहा भय को दूर कराने का प्रयास करता है। समय अंधेरा का जाल बिछाना, फंसी हुई मछलियों को छुडाने के कोशिश में समुद्र, उसके बाद नाव जैसा बदलकर तट के आश्रय लिए चाहने वाला समय, समय और समुद्र के बीच होनेवाली सामरस्य लहरों को देखने के बाद हमें मिलने वाला ही जैसा आत्मविश्वास पैदा करता है। समुद्र जैसा हमें भी समय का कोपड़ी प्यार से करने का प्रेम पैदा हो जाता है। लेकिन यह इतना आसान काम नहीं है। अपना भय को दूर करने के लिए समय पर व्यंग्य रूप से कवि कहता है।

क्यालेंडर्लु तिनि बलिसिन कालानिकि
गमनमे तप्पा गम्यम् लेदु
परुगेत्ते कालान्नि नम्मकु
दानिकि कन्नील्लु तागे अलावाटुंदि।[185]

कहकर समय को उल्टा दिखाने का प्रयास करता है।

समय के साथ न चल सकने पर
पैरों तले की ज़मीन खिसक जाएगी।[186]

---

[184] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006.पृ. सं. 30.
[185] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.43.
[186] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.49.

कहकर कुछ विधेय प्रकट करता है। इतना करने पर कविता उल्टा-पुल्टा होने पर थोड़ा-सा चिड़चिड़ाता है।

हम सोचते हैं कि हम समझते हैं
पर कविता का रहस्य कोई नहीं जानता
पूरी तरह समझने से पहले ही
समय के गर्भ से एक नया ग्रह पैदा हो जाता है।[187]

कहकर निस्साहय स्थिति में रह जाता है। धीरे धीरे व्यंग्य, चिड़चिड़ापन दूर होकर समय के प्रति एक गंभीर दृष्टि आ जाता है। इस तरह दृष्टि आने के लिए अपने अनुभव ही सहायता करती है।

समय के बाघ ने अपने नाखून से
जो जख्म किए थे
वे मेरे चेहरे पर अभी भी है।

पहचानकर, उसमें काल प्रभाव को ढूंढता है। धीरे से आत्मविश्वास बढ़ता है। इसका भी कारण समय ही है कहकर सच्चाई का ग्रहण करता है।

उसमें काल प्रभाव को ढूंढता है। धीरे धीरे आत्मविश्वास का स्तर बढ़ता है। उसका परोक्ष रूप भी समय ही है।

समय बालों को सफेद रंग डालती है। इस अनुभव से आये हुए आत्मविश्सास के साथ कवि समय से खेलने के लिए तैयार हो जाता है।

समय को दिखाई नहीं देता
उससे आँख-मिचोली खेल सकते हैं।[188]

---

[187] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.54.

यहाँ धीरे धीरे एक-एक सीढ़ी चढ़कर, समय से आगे जाने का मनुष्य की तरह अपनेआप को साबित करने का प्रयास करता है। अभी कवि को समय से डर नहीं है। युद्ध जैसा बड़ा काम भी नहीं है। कवि भी सामान्य आदमी नहीं है।

रात को चूमकर

सुबह का कुल्ला करनेवाला

मनुष्य नहीं तो और क्या हो सकता है ?

हृदय को मनुष्य का रूप मिले तो वह माँ बनता है।[189]

समय से भी मनुष्य बड़ा है।

इससे कवि समय को सोने नहीं देता है।

समय को सोने न देना ही

जीवन है कहकर,

कालपत्रम् मीदा

कालातीत सिरातो

रासिनप्पुडु एर्पडिन चित्रम् पेरु

मनिषि। कहकर धीरज से प्रकट करता है।

मृत्यु नामक एक ही अस्त्र से समय को पकड़कर, फेंक देता है और वजयहास करता है।

कालम् कंटे मनिषे गोप्पवाडु

---

188 समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.80.

189 समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.91.

कालानिकि चेतनाइन ओके ओक्क

पिच्चिपनि मृत्युवु

जीवितम् मृत्युवु रेंडू

मनिषि कालानिकि विसिरिन सवाल्ले कहकर समय को परिहास करता है।

तन शैधिल्यान्नि

कालम् मोहम्मीद गिरवाटेस्ताडु

कालानिकि कन्नम् वेस्तू

मनिषि मोक्काइ चील्चुकोस्ताडु कहकर, समय पर विजय पाकर विजय स्तंभ बोता है।

गोपि की कविता में खास बात यह है कि वे प्रकृति को अद्‌भुत रूप से मानव से जोड़ता है। प्रकृति को मानवीकिकरण के क्रम में वे अपनेआप में स्तब्ध होकर, अपनेआप को अलग से देखने का प्रयास करता है। गोपि की कविता में हमें यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रकृति को मानवीकिकरण करते समय, कवि को समाज सहायता करता है। कुछ कविताओं में रंग (वर्ण) को वर्णन मानविकीकरण करने की शैली अद्‌भुत है। पहले वर्षा के बूंदों से शुर करता है,

चिनुकुलकु कल्लुंटाइ

चूपुल्लोंचि अर्थालु वर्षिस्ताइ कहकर,

कागितम्मीदा कुरिसिन वर्षम्

मोलकलु मोलकलुगा व्यापंचे कहकर दृश्य को आँखों के सामने दिखाते हुए

वर्षमंटे नाकु मेघाला तालपत्राल्लो लिखिस्तुन्न

महाकाव्यंला उंटुंदनि विनम्र होकर

गगनम् रासिन आद्स्र्वप्न वर्षम् तन्मय होकर, उतना तन्मय भाव में भी छतरी नहीं पकड़ने की मुश्किल भावना को समझकर, और गहराई में बारिश को समझने का प्रयास

करता है। प्रकृति को मानविकीकरण करने से लेकर प्रकृति और मनुष्य के बीच अंतर नहीं देखने की स्थिति में चला जाता है।

मनिषिकी प्रकृतिकी तेड़ालेनि
ऋतु प्रकोपनंलो
समन्वय सम्मेलनंला
विकसिंचिन प्रेमा ई वर्षम् कहकर,
निजानिकी वर्षम्
नन्नु नेनु वेच्चबेट्टुकुने कन्नीटि वस्त्रम् कहता है।

उपर्युक्त दो कविताओं को पढ़ने के बाद हमारा विचार और गहरा हो जाता है। बारिश को आँसूओं की वस्त्र से तुलना ही नहीं, बल्कि शीतल होकर नहीं रहने का गरम की हृदय से उसे खड़ा करने की बरसने की जरूरते होने वाली आँसूओं को याद दिलाकर हमारे मन में आँसूओं की बारिश बरसती है।

एंडुटाकुलकु कूडा पच्चनि ज्ञापकालुंटाइ
एक्कडिनुंचो ओ सीताकोकचिलुक एगिरोच्चि
ना कॉलरुपाइ वालिते
पद्यम् रेक्कलल्लार्चिनट्लुंदि
मौनम् पंडुतुदि
सूर्योदयमंता एर्रगा
ओक महाव्यधलोंचि पुट्टिन चिरुनव्वु
सूर्यदयमंता गोप्पदि
मोग्गा पुव्ववुतुन्नप्पटि तोलिपरिमलमंला नव्वेवाडु।

इस तरह प्रकृति को मानवीकरण करना कवि के प्रतिभा को प्रतिबिंबित कई कविताओं को उदाहरण के तौर पर ले सकते हैं।

प्रकृति के बाद इस कविता संकलन में दूसरा अभूत अनुभूति देने वाला अंश दुखः, पीड़ा। कविता को पीड़ा में कविता के रूप में लिखने के लिए अपना स्वयं अनुभवों, अपना जीवन को प्रदान रूप मान लिया जाने पर, उसीमें एक नया दृष्ठि को देखा है कवि गोपि ने। अपनी कविता में कवि स्वयं कवि कहाँ बहना चाहिए, कहाँ किसकना चाहिए, इतना तो ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। बेटी की मृत्यु के बारे में बिना छतरी के दुखः में दुखिःत होते हुए, अचानक

एंदुको तनकी लोकम् नच्चलेदु
एंदुको ई पुव्वुल्नी तानु मेच्चलेदु।

कहकर बेटी की अंतर्मुखी को समझने का प्रयास करता है। उपर्युक्त दोनों कविताएँ हमें न की कवि के बेटी को बल्कि संसार में कई युवा बीच में इस लोक को छोड़ जाने की बात याद आकर मन को विकलित करता है। लोक के बारे में बात किये बिना, अपना स्वयं दुखित होने के प्रति पाठकों को लोक-अनुभूति का महसूस कराता है। मृत्युदुखम् कविता में इसका और अच्छा काम हुआ है। अपना घर का दुखः के दृश्य को चित्रित करते हुए, उसीमें मानवीय सारांश को अलग करके दिखाया है। इससे कवि को वास्तव घटना के प्रति आत्मीय दृष्टि, स्वयं भाव की गहराई पता चलता है। कवि वास्तविक जरत् को मिलने के क्रम मे ही, शिल्प का सृजन होता है।

दुखः होने के पहले पलों में प्रेमसहित परामार्श स्थिति से, कभी न रुकने वाली दुखः को सहने की शक्ति नहीं होने के कारण कई लोग हट जाते हैं, तो अपना दुखः को सहने के स्थिति तक मृत्यदखःम् कविता एक महाकाव्य जैसा लगता है।

ओका तोबुट्टुवु

तना वोडिने पडवगा चेसि

तुफानुलोंचि दाटिंचडानिकि समायत्तामवुतुंदि

मनिषि अलिकिडि कोसम् प्राणालु विलविल्लाडुतायि

वारिनि कन्नीटि तीगलतो अल्लुकुनि

पाइकि लेवालनि वुंटुंदि।

कहकर एक सहायता के लिए देखे वेदना के बारे में किसी का अनुभवों में जाते हैं। सामूहिक मानव अनुभवों को, अपना स्वयं अनुभवों के बीच रहे सीमा को पार करने का कवि प्रयास कर, सफल होने के पलों में कविता जन्म लेती है कहने के लिए यह कविता दर्शाता है। इस प्रयास में संघर्ष में कवि को स्वतंत्र मिलती है। अपना दुखः में से बाहर आकर, स्वतंत्रता पाकर, दुखाःन्नि मोय्याटिनिकि अदेमन्ना नील्लकुड़ा कहकर सचाई में चला जाता है।

भाष्पोपनिषत् नामक कविता में

कन्नीटि नदिलो

एन्नटिकी ओड्डुचेरनि पडवा

कन्नु जैसा कहना, रक्त समुद्रम् कविता में

भाष्पालु कल्ललो पूचे अपुरूपा पुष्पालु

अडुगु कनिपिंचे सेलयेल्लु कन्नील्लु

एवरो तेलियकुंडा निंपिना कोब्बरिनील्लु कन्नील्लु कविता में कवि को आँसूओं के प्रति कितना प्रेम है दिखाई देता है।

किसी ने बिना बताये भरे हुए नारियल पानी ही आँसू कहने पर कभी-कभी आँसूओं के प्रति कवि का प्रेम पाठकों को रुला देती है।

गोपि की कविता में जो विलक्षण शैली है वह निराडंबरता। कविता शिल्प में निराडंबरता को पालन करते हुए सभी पाठकों मनाना बहुत कठिन काम है। शब्तस्तर पर हो, बिंब स्तर पर हो, भाव संक्लिष्टता में आडंब दिखाना अत्यंत आसान काम है। आँखों को तेजस् आये जैसे सौंदर्य भाव से आकर्षित करना एक कला है। सहज भाषा में, विनम्रता के साथ पाठकों को कविता के प्रति आकर्षित करना अत्यंत कठिन काम है। इस कठिन कार्य को हल करने में कवि गोपि अपनी कविताओं में दर्शाया है। कविता एक ही आदमी के मन में विशेष रूप में आने वाली पानी नहीं है, मानव जीवन के महासुमुद्र के अगाध जल कहकर, वह बादल, वर्षा की बूँद, बारिष, बाढ़ के रूपों में बदलकर मिट्टी में जाकर, कभी एक बार अपने में से, अपना मिट्टी में से उद्भव होने का ग्रहण करने वालों कवियों का निराडंबरता ही आदत बन जाती है।

रोटी कविता में

मनियार्डरु कंटे

अम्मकु उत्तरमे ऑक्सिजन कदा कहकर बहुत सादा रूप में कहते हुए, एक ही समय में माँ और पत्र को समझाने का सामर्थ्य गोपि में है।

गुदड़ी के बारे में बताते हुए

ई बोंता मीदा पडुकुन्नप्पुडल्ला
अम्मा अम्मम्मा अक्का अंदरि ओडिलो
एका कालंलो सेदतीरिनट्टुंदी

कहकर, कविताओं के सूक्तियों को साधारण रूप में रखते हुए हमारे मन में आत्मीयता का परिमल ला सकते हैं।

कविता का सृजन करना बहुत ही संक्लिष्ट प्रक्रिया है। अनेकानेक मुह, कोण इसमें रहते हैं। यह सभी को मिला देती है। भूत, भविष्य, वर्तमान, व्यक्ति, समाज, तार्किकता,

सपना, अन्वेषणा, परिणामों को, वास्तविकता, अद्‌भुत, आनंद, दुखः इस तरह सभी को मिलाकर भिन्न रीतियों में आविष्कार होता है। यह सृजन कार्य कवि गोपि में हमें सौम्य रूप से देखने को मिलती है।

डॉ. एन. गोपि कवि ही नहीं, बल्कि पद में जैसा आचार्य से उपकुलपति बड़ा हुआ, उसी तरह विशिष्ट कवि भी हुए। कई कविता संग्रह लिखे हैं। कई दूसरे ग्रंथ भी लिखे हैं। कई पुरस्कार भी पाये हैं। विश्वविद्यालयों के स्तर पर, साहित्यिक जगत् में अनेक सम्मान पाये हैं। इस प्रकार देखा जाए तो, कवि एन. गोपि. निरंतर श्रामिक, नित्य कलाकार है। वे आर्द्र कवि, निशित रूप से विमर्शक, गहराई से काम करने वाला शोधकर्ता, साधना रखने वाला कवि। इतने विशेषता रखने वाले विश्वविद्यालय स्तर पर किसी भी शाखा में एक ही होते हैं।

यह संग्रह का समय को सोने नहीं दूँगा। अन्वर्थनामदेयम्। समय कुछ समय तक उसे सोने नहीं दिया। समय से शर्त रखकर, समय को सोने नहीं देने की शपथ करता है। इस पुस्तक में संकलित अधिक कविताएँ काल-स्पृहा ज्यादा दिखाई देते हैं। समय से कवि करने वाले संग्राम प्रदान इतवृत्तम् है।

अर्थ गांभीर्य दिखाने वाले निपुणता रखने वाले कुछ ही ,कविताओं में भावपुष्टि अन.आर .डॉ -में से गोपि जी एक हैं। आधुनिक कवियों ंतपद्मनाभरावआंध्रप्रभा , .1998-8-25 ,साप्ताहिक[190]

पेड़ से जन्म लेता नहीं साया

[190] गोपि साहित्यदर्शनम् (दृक्कोणालु समाक्षलु), 50 वर्ष पूरा करने के उपलक्ष्य में तीन दशकों की साहित्य विवेचन अंक, सपांदकगण-एंडलूरि सुधाकर आदि, हैदराबाद-1998, पृ.सं. 207.

धूप से लड़कर जीता गया अमृत-कवच है वह।[191]

इसमें अनंत तत्व है। समस्याओं से लड़ना ही मनुष्य का प्राथमिक गुण है। लड़ाई की जीत के बाद उसे मुग्ध रूप से शांति मिलती है।

समय को सोने नहीं दूँगा शीर्षक की सार्थकता के बारे में कवि इस प्रकार कहता है-

समय के पन्ने पर

कालातीत स्याही से

जब चित्र रचा जाता है

तो उसका नाम होता है

मानव! [192]

मनुष्य कालातीत से संघर्ष कर, मानवता को बचाके रखना चाहिए। विज्ञान कितना ही वास्तविकता को बतायें, परंतु एक पानी की बूँद ही कविता बन जाती है। उस बूँद को बरसाने वाला ही मनुष्य है। निरंतर बरसने वाला यह पानी की बूँद मनुष्य को सोने नहीं देता है। समय से भी मनुष्य उत्तम है। मनुष्य समय के खोपड़ी पकड़ कर किया जाने वाला अनश्वर अनुभवों के सफर के सामने यह सारा संसार आश्चर्यचकित हो जाता है। यही समय को सोने नहीं देती है। मनुष्य और समय के बीच में होने वाला संघर्ष ही कालजलम् नामक कविता में निरूपण किया है कवि।

---

[191] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 91.

[192] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.101.

यहाँ कवि रूप स्वभावों के क्रियाओं को निरुपण करके, कोई साधारण मनुष्य के सोच के बाहर उन क्रियाओं को प्रतिबिंबित वस्तु निरूपण किया है।

एक छलनी
एक छान
छानने का एक कपड़ा
अनुभवों के महान चित्रों के रंगों से
प्रभावित होनेवाला लिट्मस कागज़ है जीवन।[193]

कवि अपने कविताओं के बारे में बताते हुए कहते हैं

चाहे जितने भी मंत्र-तंत्र करूँ
मेरी कविताएँ घमंड नहीं करतीं
ज़रा-सा शर्माती हैं
पर डर उनके स्वभाव में है ही नहीं।[194]

समय को सोने नहीं दूँगा में कविताएँ इस प्रकार हैं- यहाँ फूल हैं, बारिश है, सूरज है, आकाश है, समुद्र है, जल के रूप में आँसू की बूँदें हैं, पत्थर हैं – यानी प्रकृति का एक स्वाधीन संसार है। इन कविताओं के माध्यम से इस संसार का मनुष्य – जीवन में महत्व व्यंजित किया गया है और महत्व भी क्या व्यंजित किया गया, प्रकृति के विराट तत्व के समक्ष मनुष्य की लघुता का अहसास कराया गया है। ऊपर मानवीकरण की बात आई है, लेकिन यहाँ मानवीकरण को एक अलंकार के या सरलीकृत रूप में नहीं लिया जा सकता।

---

[193] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 45.

[194] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 31.

यह गुण कवि गोपि भी लगभग प्रत्येक कविता में है जो बोध को संवेदना या भाव में परिवर्तन करने का ऐसा प्रयास है जो धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है, दुर्लभ हो गया है। और इसीलिए जिसकी ज़रूरत और अधिक बढ़ गई है, उसके प्रति वैज्ञानिक चेतना के समानांतर कविता भी अपना काम कर रही है और अपनी प्रासंगिकता को, अपने महत्व को भी प्रमाणित कर रही है। इस तरह की कविताएँ अब दुर्लभ होती जा रही है।

इस कविताओं में प्रकृति से सीधे तामात्म्य है, मार्ग में आनेवाले सारे अवरोधों, सभ्यता के आवरणों को ध्वस्त किया गया है –

सभी नेता मिल जाएँ फिर भी
बारिश की एक बूँद बरसा नहीं सकते
इसलिए मैं बादलों को ही प्रणाम करता हूँ।[195]

धरती द्वारा आकाश की ओर
किया गया विस्फोट है
बारीश की बूँद
इसलिए मैं समुंदरों को ही प्रणाम करता हूँ।[196]

इन कविताओं में प्रकृति, कवि (मनुष्य), कविता घुल-मिलकर एक हो गए हैं। इसीलिए कविता पर बहुत भरोसा किया गया है, कविता को विषय बनाकर अनेक कविताएँ लिखी गई हैं। यह कहा गया है कि, देखा जाए तो बारिश की बूँदें भी अक्षरों

[195] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 25.

[196] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 25.

जैसी ही हैं। जगह जगह विश्वकाव्य की अवधारणा ने रूप धारण किया है, कविता विश्व के प्रत्येक कण में व्याप्त हो गई है। ये कविताएँ मानवीय करुणा की वाहक भी हैं-

समय के पन्ने पर
कालातीत स्याही से लिख रहा हूँ
स्याही का नाम है आँसू।[197]

इसी कालातीत स्याही से मानव नामक चित्र की सृष्टि होती है। बिना आँसूओं के इस चित्र में प्राण-प्रतिष्ठा नहीं की जा सकती। ओएसिस रेगिस्तान की आँख हैं, आँसू खून का पर्याय हैं, मंदिरों में पत्थरों की दरारों से आँसू ही बहते हैं और

आँखों में खिलनेवाले अनोखे पुष्प हैं
आँसू ऐसे स्वच्छ पानी की नदियाँ हैं
जिनके तल देखे जा सकते हैं।
किसी अदृश्य हाथ ने
नारियल के अंदर के पानी की तरह
भरे हैं ये आँसू
बादल हमारे बस में नहीं होते हैं न !
अपने आप अचानक मेघ जो बरसाते हैं
वह पानी भी आँसू है
विश्वदुःख के करीब जा रहा हूँ
जग अपने हाथ का सहारा नहीं देंगे।[198]

---

[197] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 99.

कवि का जन्म-स्थान ऐतिहासिक तेलंगाणा प्रांत है। उसने तेलुगु कवि वेमना पर शोधकार्य किया है। इन कविताओं में आंध्र की जनता की संघर्षशीलता तथा जातीय भावना व्यक्त हुई है। ब्लो आउट और एपिटाफ कविताएँ इस संदर्भ में पठनीय कविताएँ हैं।

तेलंगाणा में कर्फ़्यू के तूफ़ानों को देखा हमने
रायलसीमा में रक्ताश्रुओं की बाढ़ों को देखा
छू लेने मात्र से उँगलियों पर कोंपल उगानेवाली कोनसीमा में...[199]
हैदराबाद में
काचीगुडा में रेल से उतरकर चलते हुए
अबिड्स के जंगल में घुसने से पहले ही
बाँई ओर हमारा गाँव आता है।[200]

रोटी नामक कविता में रोटी जिस संघर्ष से कमाई जाती है वह अन्न को ब्रह्म बना देता है। अन्न का वास्तविक महत्व उन्हें समझ में आता है जो कठोर परिश्रम के बाद उसे प्राप्त करते हैं। उनके लिए वह क्रांतचक्र बन जाती है।

रोटी आसमान से छूटकर नहीं गिरती
धरती के भीतर की उर्वरता से
पसीने की बूँदों पर चढ़कर आनेवाला

---

[198] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं. 73.

[199] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.65

[200] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.84

भूख खेतों की मिट्टी के गीतों पर

ताल देनेवाले हाथों में से

चलकर आनेवाला क्रांतिचक्र है यह।[201]

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार समय को सोने नहीं दूँगा संग्रह की बहुत-सी कविताओं में अनेक अछूती उपमाएँ देखने को मिलती हैं। इतनी सारी नई उपमाएँ कवि के जीवन-पर्यवेक्षण और उसके प्रति राग की ओर संकेत करती हैं। एक कविता है, एकवचन उनकी कुछ पंक्तियाँ देखिए-

यहँ एक आदमी था कहाँ गया ?

कली के फूल बनकर खिलते समय

उठनेवाली ताज़ी महक की तरह हँसता था

एक अद्‌भुत दृश्य-सा दिखता था

मानो पत्तों के बीच में से किरणें फूट रही हों। [202]

डॉ. एन. गोपि का मानना है कि समय को सोने नहीं दूँगा समय के अनेक पहलुओं को प्रतिबिंबित करता है। इसमें आर्ति, वेदना और व्याख्या है। मैं यह समझता हूँ कि मैंने ये कविताएँ एक प्रकार की अचेतावस्था में लिखी थीं। इस संग्रह की रचना के कुछ समय पहले 17 साल की मेरी बेटी की मृत्य हो गई थी। मैं पाताल में गिर गया था। बड़ी मुश्किल से ऊपर चढ़कर, धरती पर रेंगते हुए, समय से सवाल करते हुए, लिखी गई कुछ कविताएँ इस संग्रह में हैं। व्यक्तिगत दुःख सामान्य धरातल पर आकर विश्वदुःख के पास

---

[201] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006.पृ. सं. 19.

[202] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.96.

किस प्रकार पहुँच जाता है, इसी से संबंधित दृश्य इस संग्रह में दिखाई देंगे। यह संग्रह मुझे मनुष्य के और क़रीब ले गया।

सपने की तरह आई
बुरे सपने की तरह चली हुई
लहर-सी उठी
भयानक तूफ़ान की तरह उमड़ पड़ी
विदा लिए बिना ही
बिना छतरी, दुःख में छोड़ गई
न भुलाए जानेवाला अलाव बनकर रह गई।[203]

अनुवादक आर. शांता सुंदरी का मानना है कि -गद्य की अपेक्षा पद्य का अनुवाद कठिन होता है। इस दिशा में प्रयत्न करने की प्रेरणा सन् 1996 में मुझे श्री हरिवंशराय बच्चन से प्राप्त हुई है। भाषाओं के बीच अनुवाद द्वारा आदान-प्रदान के संबंध में उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा और इस काम में अपनी ओर से मुझे भी प्रयत्न करने की बात कही। अनुवाद साहित्य के महासागर में मेरा यह प्रयास भी एक बूँद के समान है।

अतीत के फल मैंने प्राप्त कर लिए। वर्तमान में चमक रहा हूँ। भविष्य में बीज बिखेर रहा हूँ। घावों से अभी मेरा मन हारा था। इस पुरस्कार ने उस पर चंदन का लेप लगा दिया है। मेरे काव्य जीवन में यह केवल पड़ाव है। मैं समझता हूँ कि भविष्य में नित्य सत्यन्वेषण करते रहने के लिए यह एक मार्ग बनेगा। इससे जितने भी लोग जुड़े हैं उन सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ।

---

[203] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.35

कई वर्षों से, लगभग तीस साल से ऊपर कविता लिखने वाला कवियों को समय भी परीक्षा लेती है। कोई भी कवि समय दिया गया उत्साह से या उध्रेक से कविताएँ लिखता है। बाद में कवि और समय के बीच प्रतियोगिता चलता है। इस प्रतियोगिता में कवि समय को पार किया या समय से वंछित रह गया या समय से पीछे रह गया देखने से किसी कवि का स्थान, कविता की कीमत हम अनुमान लगा सकते हैं। इस दृष्टि से देखें तो समय से पार करने वाला है कवि एन. गोपि। पाँच दशकों से ज्यादा वे समय को, समय रखा गया परीक्षाओं को पार करते हुए कविताओं की कीमत को एवं अपना स्थान को कविता संसार में सुस्थिर रखते आ रहे हैं।

समय से संबंधी तात्विक विचारों के समाहा है समय को सोने नहीं दूँगा। इस कविता संग्रह में कविता की और समय के बीच रहे संबंधों से विचारों को उत्तेज कराती है। कविता वास्तविक जगत् तथा कवि के बाह्य जगत् का प्रतिबिंब है, यह हम सब जानते हैं। उस प्रतिबिंब में कवि सिर्फ कविता को लिखके ही नहीं छोड़ते बल्कि उसमें बदलाव तथा परिणाम के बारे में विचार-विमर्श करता है। परिणाम फिर से समय से संबंधित विषय है। उस रूप में देखा जाए तो, कविता समय से शासन किया जाता है। समय और कविता के बीच में कुछ साम्य देखने को मिलते हैं। हम का मतलब है हमारा समय ही है। समय से अपनेआप को अलग करके रहना असंभव है। कभी-कभी समय हमसे अलग होने जैसा दिखाई देता है, बल्कि ऐसा पूर्ण रूप से होता नहीं है। उसी तरह कविता भी है। वह कितना स्वीयात्मक है, उतना ही वस्तुपरक भी है। कविता में, समय में हमें उसे अलग करके दिखाना असंभव है।

इस तरह का समय को, कविता को एक साथ जोड़ कर दोनों पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास किया है डॉ. एन. गोपि ने। दोनों पर कोमल से, तीर आर्द्र से उसी समय

बहुत बड़ा विचारों से इस तरह दोनों घोड़ों पर एक साथ सवारी करके अनुभव सफर में आने वाले सफर में बड़ा प्यार से पाठकों के सामने लाये हैं।

हमें कभी-कभी ऐसा लगता है कि कवि किस समय के बारे में बात कर रहे हैं अपनी कविता में। वे बीती हुए समय के बारे में लिखे या वर्तमान को चित्रित करें, भविष्य को दर्शाये इन सबसे पहले वे लिखते समय के पलों को भौतिक वास्तविकता के पास ही शुरु करता है। भूत एवं भविष्य ये दोनों सामाजिक वास्तविकता को प्रतिबिंबित पलों का महत्व हमेशा रहता है। किसी भी समय में कविता के बारे में बात करते हैं तो ये तीनों काल आते हैं। भूत और भविष्य से अटूट संबंध रखने वाला वर्तमान अलग से कहीं नहीं रहता है। इसलिए समय अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये सारे विषय हम गोपि की कविता में देखने को मिलती हैं।

कवि को समय पर जीत होने की पूरा आत्मविश्वास है। कभी-कभी ऐसा विचार करते हैं कहीं समय हमें छोड़कर गहरीं नींद में है क्या यह जानने के लिए उत्सुक भी है। समय छोड़े गत स्मृतियों से बहुत प्यार भी है। इन सबको पार करने के बाद, समय से लड़ कर अपना विचारों को प्रकट कर समय पर विजय प्राप्त करता है। दुःख, वियोग ताथ हार, निराश से चैतन्यरहित करने वाले समय के प्रयत्नों को विफल करके हम समय को सोने नहीं देना ही मानव का असली जीवन है यह कवि का मानना है। इस कविता संग्रह में पहला पृष्ट से लेकर अंतिम पन्ना तक समय से संबंधी एक क्रमानुसार रूप है। समय को लेकर कवि की विचार बहुत विस्तार है। इसमें कवि पहला समय के साथ दोस्ती की भावना ही रखता है। प्यार से, आत्मीयता के साथ ही शुरु करता है। समय के साथ साथ जीने जैसा होता है।

कई समय से ढकने वाली गुदड़ी फट गयी तो पत्नी सुई-धागा से उसे मरम्मत करती है। यह समय के साथ जीना ही है।

तब वह ऐसी दिखाई देती है
मानो तलवार लेकर समय से युद्ध कर रही हो ![204]

कहकर एक सुंदर दृश्य हमारे सामने लाते हैं। उसके बाद कालजलम् कविता में समुद्र और समय के बीच व्यूहत्मक घर्षणा को दिखाकर समय से रहा भय को दूर कराने का प्रयास करता है। समय अंधेरा का जाल बिछाना, फंसी हुई मछलियों को छुडाने के कोशिश में समुद्र, उसके बाद नाव जैसा बदलकर तट के आश्रय लिए चाहने वाला समय, समय और समुद्र के बीच होनेवाली सामरस्य लहरों को देखने के बाद हमें मिलने वाला ही जैसा आत्मविश्वास पैदा करता है। समुद्र जैसा हमें भी समय का कोपड़ी प्यार से करने का प्रेम पैदा हो जाता है। लेकिन यह इतना आसान काम नहीं है। अपना भय को दूर करने के लिए समय पर व्यंग्य रूप से कवि कहता है।

कैलंडरों को खा-खाकर मोटा होता जा रहा है समय
वह केवल गमन जानता है गम्य नहीं !

अस्पष्ट आकारों का संगीत
कानों में अँधेरा भर दे, इससे पहले
रास्तों पर आँखें छिड़काइए
कम से कम सपने तो उगेंगे !

मनुष्यों के बीच फैले
रेगिस्थानों को देखकर चिंतित हूँ मैं ![205]

---

[204] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.30

कहकर समय को उल्टा दिखाने का प्रयास करता है।

समय के साथ न चल सकने पर

पैरों तले की ज़मीन खिसक जाएगी।[206]

कहकर कुछ विधेय प्रकट करता है। इतना करने पर कविता उल्टा-पुल्टा होने पर थोड़ा-सा चिड़चिड़ाता है।

हम सोचते हैं कि हम समझते हैं

पर कविता का रहस्य कोई नहीं जानता

पूरी तरह समझने से पहले ही

समय के गर्भ से एक नया ग्रह पैदा हो जाता है।[207]

कहकर निस्साहय स्थिति में रह जाता है। धीरे धीरे व्यंग्य, चिड़चिड़ापन दूर होकर समय के प्रति एक गंभीर दृष्टि आ जाता है। इस तरह दृष्टि आने के लिए अपने अनुभव ही सहायता करती है।

समय के बाघ ने अपने नाखून से

जो जख्म किए थे

वे मेरे चेहरे पर अभी भी है।

पहचानकर, उसमें काल प्रभाव को ढूंढता है। धीरे से आत्मविश्वास बढ़ता है। इसका भी कारण समय ही है कहकर सच्चाई का ग्रहण करता है।

---

[205] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.43

[206] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.49.

[207] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.54.

उसमें काल प्रभाव को ढूंढता है। धीरे धीरे आत्मविश्वास का स्तर बढ़ता है। उसका परोक्ष रूप भी समय ही है।

समय बालों को सफेद रंग डालती है। इस अनुभव से आये हुए आत्मविश्सास के साथ कवि समय से खेलने के लिए तैयार हो जाता है।

समय को दिखाई नहीं देता

उससे आँख-मिचोली खेल सकते हैं।[208]

यहाँ धीरे धीरे एक-एक सीढ़ी चढ़कर, समय से आगे जाने का मनुष्य की तरह अपनेआप को साबित करने का प्रयास करता है। अभी कवि को समय से डर नहीं है। युद्ध जैसा बड़ा काम भी नहीं है। कवि भी सामान्य आदमी नहीं है।

रात को चूमकर

सुबह का कुल्ला करनेवाला

मनुष्य नहीं तो और क्या हो सकता है ?

हृदय को मनुष्य का रूप मिले तो वह माँ बनता है।[209]

समय से भी मनुष्य बड़ा है।

इससे कवि समय को सोने नहीं देता है।

समय को सोने न देना ही

जीवन है

कहकर,

---

208 समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.80.

209 समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.91.

समय के पन्ने पर
कालातीत स्याही से लिख रहा हूँ
स्याही का नाम है आँसू !

कहकर धीरज से प्रकट करता है।

मृत्यु नामक एक ही अस्त्र से समय को पकड़कर, फेंक देता है और विजयहास करता है।

समय से भी बड़ा है आदमी
समय एक ही बेकार काम जानता है
वह है मौत
उसी को अपना सामर्थ्य समझकर ख़ुश हो जाता है।
लेकिन जीवन और मृत्यु
दोनों ऐसे सवाल हैं जिन्हें मनुष्य समय के सामने रखता है।[210]

कहकर समय को परिहास करता है।

हँसते-हँसते अपने विनाश को
समय के मुँह पर दे मारता है
समय में छेद करते हुए
उसे चीरते हुए पौधा बनकर निकल आता है।[211]

कहकर, समय पर विजय पाकर विजय स्तंभ बोता है।

---

[210] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.104

[211] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.104

गोपि की कविता में खास बात यह है कि वे प्रकृति को अद्भुत रूप से मानव से जोड़ता है। प्रकृति को मानवीकिकरण के क्रम में वे अपनेआप में स्तब्ध होकर, अपनेआप को अलग से देखने का प्रयास करता है। गोपि की कविता में हमें यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्रकृति को मानवीकिकरण करते समय, कवि को समाज सहायता करता है। कुछ कविताओं में रंग (वर्ण) को वर्णन मानविकीकरण करने की शैली अद्भुत है। पहले वर्षा के बूंदों से शुर करता है,

बूँदों की आँखें होती हैं
नज़रों से अर्थों की वर्षा होती है।[212]

कहकर,

कागज़ पर गिराई गई बारिश
अनेक अंकुर बनकर फैलती है।[213]

कहकर दृश्य को आँखों के सामने दिखाते हुए,

वर्षमंटे नाकु मेघाला तालपत्राल्लो लिखिस्तुन्न
महाकाव्यंला उंटुंदनि विनम्र होकर
गगनम् रासिन आद्स्वप्न वर्षम् तन्मय होकर

उतना तन्मय भाव में भी छतरी नहीं पकड़ने की मुश्किल भावना को समझकर, और गहराई में बारिश को समझने का प्रयास करता है। प्रकृति को मानवीकिकरण करने से लेकर प्रकृति और मनुष्य के बीच अंतर नहीं देखने की स्थिति में चला जाता है।

मनिषिकी प्रकृतिकी तेड़ालेनि

---

[212] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.25

[213] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.98

ऋतु प्रकोपनंलो
समन्वय सम्मेलनंला
विकसिंचिन प्रेमा ई वर्षम् कहकर,
निजानिकी वर्षम्
नन्नु नेनु वेच्चबेट्टुकुने कन्नीटि वस्त्रम् कहता है।

उपर्युक्त दो कविताओं को पढ़ने के बाद हमारा विचार और गहरा हो जाता है। बारिश को आँसूओं की वस्त्र से तुलना ही नहीं, बल्कि शीतल होकर नहीं रहने का गरम की हृदय से उसे खड़ा करने की बरसने की जरूरते होने वाली आँसूओं को याद दिलाकर हमारे मन में आँसूओं की बारिश बरसती है।

सूखे पत्तों के पास भी
हरियाली की यादें होती हैं।
जीवन की एक अनुपम दशा है बचपन
कोई पूछे कि क्या तुम्हें बचपन चाहिए ?
तो मैं कहूँगा, नहीं-नहीं।[214]
मौन फलता है
सूर्योदय की लहर लाल होकर
समय को दिखाई नहीं देता
उससे आँख-मिचोली खेल सकते हैं।[215]

[214] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.51
[215] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.80

इस तरह प्रकृति को मानवीकरण करना कवि के प्रतिभा को प्रतिबिंबित कई कविताओं को उदाहरण के तौर पर ले सकते हैं।

प्रकृति के बाद इस कविता संकलन में दूसरा अभूत अनुभूति देने वाला अंश दुखः, पीड़ा। कविता को पीड़ा में कविता के रूप में लिखने के लिए अपना स्वयं अनुभवों, अपना जीवन को प्रदान रूप मान लिया जाने पर, उसीमें एक नया दृष्टि को देखा है कवि गोपि ने। अपनी कविता में कवि स्वयं कवि कहाँ बहना चाहिए, कहाँ किसकना चाहिए, इतना तो ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। बेटी की मृत्यु के बारे में बिना छतरी के दुखः में दुखिःत होते हुए, अचानक

न जाने क्यों यह संसार उसे नहीं भाया

इन फूलों को उसने गले नहीं लगाया।[216]

कहकर बेटी की अंतर्मुखी को समझने का प्रयास करता है। उपर्युक्त दोनों कविताएँ हमें न की कवि के बेटी को बल्कि संसार में कई युवा बीच में इस लोक को छोड़ जाने की बात याद आकर मन को विकलित करता है। लोक के बारे में बात किये बिना, अपना स्वयं दुखित होने के प्रति पाठकों को लोक-अनुभूति का महसूस कराता है। मृत्युदुखम् कविता में इसका और अच्छा काम हुआ है। अपना घर का दुखः के दृश्य को चित्रित करते हुए, उसीमें मानवीय सारांश को अलग करके दिखाया है। इससे कवि को वास्तव घटना के प्रति आत्मीय दृष्टि, स्वयं भाव की गहराई पता चलता है। कवि वास्तविक जरत् को मिलने के क्रम में ही, शिल्प का सृजन होता है।

[216] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.35

दुखः होने के पहले पलों में प्रेमसहित परामार्श स्थिति से, कभी न रुकने वाली दुखः को सहने की शक्ति नहीं होने के कारण कई लोग हट जाते हैं, तो अपना दुखः को सहने के स्थिति तक मृत्यदखःम् कविता एक महाकाव्य जैसा लगता है।

एक बहन
अपनी गोद को नाव बनाकर
इस तूफ़ान से पार ले जाने की तैयारी करती है।
मनुष्य की आहट के लिए प्राण छटपटाते हैं।
आँसूओं की लताओं से लिपटकर
उनके सहारे ऊपर उठने की इच्छा होती है।[217]

कहकर एक सहायता के लिए देखे वेदना के बारे में किसी का अनुभवों में जाते हैं। सामूहिक मानव अनुभवों को, अपना स्वयं अनुभवों के बीच रहे सीमा को पार करने का कवि प्रयास कर, सफल होने के पलों में कविता जन्म लेती है कहने के लिए यह कविता दर्शता है। इस प्रयास में संघर्ष में कवि को स्वतंत्र मिलती है। अपना दुखः में से बाहर आकर, स्वतंत्रता पाकर, **दुखाःन्नि मोय्याटिनिकि अदेमन्ना नील्लकुड़ा** कहकर सचाई में चला जाता है।

बाष्पोपनिषद् नामक कविता में

आँसूओं की नदी में
कभी किनारा न पानेवाली नाव है
आँख।[218]

[217] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.37

जैसा कहना रक्त का समुद्र कविता में

आँखों में खिलनेवाले अनोखे पुष्प हैं
आँसू ऐसे स्वच्छ पानी की नदियाँ भी हैं
जिनके तल देखे जा सकते हैं।
किसि आदृश्य हाथ ने
नारियल के अंदर के पानी की तरह
भरे हैं ये आँसू।[219]

आँसू कविता में कवि को आँसूओं के प्रति कितना प्रेम है दिखाई देता है।

किसी ने बिना बताये भरे हुए नारियल पानी ही आँसू कहने पर कभी-कभी आँसूओं के प्रति कवि का प्रेम पाठकों को रुला देती है।

गोपि की कविता में जो विलक्षण शैली है वह निराडंबरता। कविता शिल्प में निराडंबरता को पालन करते हुए सभी पाठकों को मनाना बहुत कठिन काम है। शब्तस्तर पर हो, बिंब स्तर पर हो, भाव संक्लिष्टता में आडंबर दिखाना अत्यंत आसान काम है। आँखों को तेजस् आये जैसे सौंदर्य भाव से आकर्षित करना एक कला है। सहज भाषा में, विनम्रता के साथ पाठकों को कविता के प्रति आकर्षित करना अत्यंत कठिन काम है। इस कठिन कार्य को हल करने में कवि गोपि अपनी कविताओं में दर्शाया है। कविता एक ही आदमी के मन में विशेष रूप में आने वाली पानी नहीं है, मानव जीवन के

[218] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.51

[219] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.73

महासुमुद्र के अगाध जल कहकर, वह बादल, वर्षा की बूँद, बारिष, बाढ़ के रूपों में बदलकर मिट्टी में जाकर, कभी एक बार अपने में से, अपना मिट्टी में से उद्भव होने का ग्रहण करने वालों कवियों का निराडंबरता ही आदत बन जाती है।

मरती हुई चिट्ठी कविता में

माँ के लिए मनीआर्डर से ज़्यादा

चिट्ठी ही ऑक्सीजन-सी लगती है न ![220]

कहकर बहुत सादा रूप में कहते हुए, एक ही समय में माँ और पत्र को समझाने का सामर्थ्य गोपि में है।

गुदड़ी के बारे में बताते हुए

मैं जब भी इस पर लेटता हूँ

तो लगता है

कि माँ, नानी, दीदी-इन सबकी गोद में

एक साथ लेटकर थकान मिटा रहा हूँ।[221]

कहकर, कविताओं के सूक्तियों को साधारण रूप में रखते हुए हमारे मन में आत्मीयता का परिमल ला सकते हैं।

कविता का सृजन करना बहुत ही संक्लिष्ट प्रक्रिया है। अनेकानेक मुह, कोण इसमें रहते हैं। यह सभी को मिला देती है। भूत, भविष्य, वर्तमान, व्यक्ति, समाज, तार्किकता, सपना, अन्वेषणा, परिणामों को, वास्तविकता, अद्भुत, आनंद, दुखः इस तरह सभी को

---

[220] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.21.

[221] समय को सोने नहीं दूँगा, मूल कवि डॉ. एन. गोपि, अनुवाद डॉ. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006. पृ. सं.29

मिलाकर भिन्न रीतियों में आविष्कार होता है। यह सृजन कार्य कवि गोपि में हमें सौम्य रूप से देखने को मिलती है।

डॉ. एन. गोपि कवि ही नहीं, बल्कि पद में जैसा आचार्य से उपकुलपति बड़ा हुआ, उसी तरह विशिष्ट कवि भी हुए। कई कविता संग्रह लिखे हैं। कई दूसरे ग्रंथ भी लिखे हैं। कई पुरस्कार भी पाये हैं। विश्वविद्यालयों के स्तर पर, साहित्यिक जगत् में अनेक सम्मान पाये हैं। इस प्रकार देखा जाए तो, कवि एन. गोपि. निरंतर श्रामिक, नित्य कलाकार है। वे आर्द्र कवि, निशित रूप से विमर्शक, गहराई से काम करने वाला शोधकर्ता, साधना रखने वाला कवि। इतने विशेषता रखने वाले विश्वविद्यालय स्तर पर किसी भी शाखा में एक ही होते हैं।

यह संग्रह का समय को सोने नहीं दूँगा। अन्वर्थनामदेयम्। समय कुछ समय तक उसे सोने नहीं दिया। समय से शर्त रखकर, समय को सोने नहीं देने की शपथ करता है। इस पुस्तक में संकलित अधिक कविताएँ काल-स्पृहा ज्यादा दिखाई देते हैं। समय से कवि करने वाले संग्राम प्रदान इतवृत्तम् है।

साहित्य अकादमी द्वारा वर्ष 2000 में पुरस्कृत मूल तेलुगु कृति कालान्नि निद्रपोनीयनु यानी समय को सोने नहीं दूँगा की कविताओं में फूल है, बारिश है, सूरज है, आकाश है, समुद्र है, जल के रूप में आँसू की बूँदे हैं – यानी प्रकृति का स्वाधीन संसार है। इन कविताओं के माध्यम से इस संसार का मनुष्य-जीवन में महत्व व्यंजित किया गया है, प्रकृति के तत्व के समक्ष मनुष्य की लघुता का भी अहसास कराया गया है। प्रकृति का मानवीकरण जो इनमें किया गया है उसे एक अलंकार के या सरलीकृत के रूप में नहीं लिया जा सकता। यह गुण कवि श्री एन. गोपि की लगभग प्रत्येक कविता में है। बोध को

संवेदना या भाव में परिवर्तित करने का यह ऐसा प्रयास है जो अब धीरे-धीरे समाप्त होता रहा है और एक तरह से दुर्लभ होता जा रहा है।

समय को सोने नहीं दूँगा में संग्रहित कविताओं में स्थान-स्थान पर अनेक अछूती उपमाएँ देखने को मिलती हैं जो कवि के जीवन-पर्यवेक्षण और उसके प्रति राग की ओर संकेत करती हैं। हिंदी के कविताप्रेमी पाठकों को इन कविताओं में एक नया और अनूठा रस मिलेगा। अर्थ गांभीर्य दिखाने वाले निपुणता रखने वाले ,कविताओं में भावपुष्टि अन.आर .डॉ -कुछ ही आधुनिक कवियों में से गोपि जी एक हैं। ंतपद्मनाभराव , .1998-8-25 ,आंध्रप्रभा साप्ताहिक[222]

5.2. समुद्र, मैं और गोवा

5.2.1.कविता लिखने के पीछे कारण

कवि डॉ. एन. गोपि के अनुसार 26, 27 जुलाई, 2008 में गोवा की राजधानी पंजिम में साहित्य अकादमी (मुंबई) और गोवा कला अकादमी का संयुक्त तत्त्वावधान के अतर्गत पश्चिम और दक्षिण भारत के लेखकों की सभाओं का आयोजन किया गया था। उनमें मैं भी निमंत्रित था। गोवा का नाम सुनते ही मेरे उछल पड़ने के दो कारण थे। पहला, गोवा का सौंदर्य और दूसरा, केंद्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत मेरे काव्य-संग्रह कालान्नि निद्र पोनिव्वनु (समय को सोने नहीं दूँगा) का कोंकणी भाषा में अनुवाद करने वाले प्रमुख कोंकणी कवि, जिन्हें मुझसे पहले ही साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला था, रमेश. बी. वेलुस्कर जी से मिलने की आकांक्षा। इतना ही नहीं, मेरे प्रिय मित्र, डॉ. पोलि विजयराघव रेड्डी जी (आंध्रप्रदेश हिंदी अकाजदमी के भूतपूर्व अध्यक्ष) के

---

[222] गोपि साहित्यदर्शनम् (दृक्कोणालु समाक्षलु), 50 वर्ष पूरा करने के उपलक्ष्य में तीन दशकों की साहित्य विवेचन अंक, सपांदकगण-एंडलूरि सुधाकर आदि, हैदराबाद-1998, पृ.सं. 207.

सुझाने पर रमेश जी को प्रेरित करनेवाले मोहनदास सुर्लकर जी के दर्शन करके उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने की इच्छा भी मेरे मन में थी।

मैं ख़ुद नहीं जानता था कि गोवा जाकर मैं ये कविताएँ लिखूँगा। मेरे साथ मेरी धर्मपत्नी, अरुणा भी गोवा आई थी। मेरे अंदर से अनायास ही कविता फूट पड़ने लगी थी और यह देखकर वह भी आश्चर्य चकित रह गई। मानों सागर की लहरों के साथ मेरी कविताएँ होड़ करने लगीं। मैं जिस प्रांत से हूँ, वहाँ पानी का अभाव भले ही रहता हो, फिर भी समुद्र मेरे लिए नई बात नहीं है। बंगाल की खाड़ी और अरब सागर को मैंने जी भर देखा था। मॉरिशस, साइप्रस, अमेरिका जैसे देशों की जलनिधियों को मन में भरकर लाया था। पर गोवा की बात अलग है। और फिर बरसात के मौसम में गोवा। एक तरफ़ समुंदर और दूसरी ओर हरित सागर।

मन की अनुभूति को मैंने अक्षरों में प्रकट किया है, बस। मुझे इस बात कर भ्रम नहीं है कि यह एक महान कविता है। लेकिन ये कविताएँ मेरे भावोद्वेग के द्योतक अवश्य है।

रमेश वेलुस्कर जी और मोहनदास सुर्लकर जी से मुलाकात एक अनमोल अनुभव था। ख़ासकर सुर्लकर जी को प्रत्यक्ष देखना और गोवा के शिक्षा क्षेत्र के लिए की गई उनकी अपूर्व सेवाओं के बारे में कुछ भी न जानने वाले मेरे प्रति उनका आत्मीयता दिखाना, इन बातों से मैं गद्गद हो उठा था। मेरे मन में यह विचार आया कि हाल ही में 75 साल पूरे करने वाले उस महान साहित्यकार को यह पुस्तक समर्पित करू। मुझे ऐसा लग रहा है कि उन्हीं के शहर के समुद्र जल को अपने हाथों से उनके हाथों में उँडेल रहा हूँ।

गोवा-पंजिम के आंध्रसंघम् के लोगों ने भी हमारे प्रति बड़ी आत्मीयता प्रकट की। पहले ही कहना चाहिए था, उसे अंत में कह रहा हूँ। इन कविताओं का हिंदी में अनुवाद

करनेवाली मेरी बहन, श्रीमति आर. शांता. सुंदरी (विख्यात तेलुगु लेखक श्री कोडवटिगंटि कुटुंबराव जी की सुपुत्री) काफ़ी समय से कई कविताओं का अनुवाद करती आ रही हैं। अप्रत्याशित रूप से बना अक्षर-संबंध है हमारा। उनके प्रति आभार प्रकट न करके उस आभार को नए सिरे से दोहराना ही उचित रहेगा।

5.2.2. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण

केतु विश्वनाथ रेड्डी के अनुसार दलअसल समुद्र, मैं और गोवा का मूल कृति गोवालो समुद्रम् की कविताएँ तेलुगु के विविध पत्रिकाओं में छपी थीं। उन पत्रिकाओं में नव्या, विशालांध्र मंडे, नेटी निजम, साहित्य प्रस्थानम, आंध्रप्रदेश, विशालांध्र संडे, पत्रिका, साहित्य नेत्रम, भूमिका, आंध्रप्रभा साहिती गवाक्षम, चिनुकु आदि प्रमुख हैं।

इस कविता संकलन के बारे में बात करते हुए श्री केतु विश्वनाथ रेड्डी ने कहा कि प्रस्तावना में जैसा कवि एन. गोपि ने कहा कि गोपि की प्रधान दृष्टि रूप से परीशीलन दृष्टि। गोपि जी गोवा के अंतराल में देखे जाने वाला संगीतकार के स्वर सम्मेलन दृष्टि है। उन्हें गोवा में समुद्र अथक कविता जैसा दिखता है। आशीश पूर्वक संगीत सुनायी देता है। इसलिए उनको अनदेखी हल से खेत जोतने वाले धरती जैसा समुद्र दिखाई देता है।

पश्चिम पहाडियों में पानी का फूल कहता है गोपि जी। लेकिन इनकी कविताएँ ही पश्चिम पहाडियों में खिले पानी के फूल हैं। अरब सागर में सवारी करने वाले जवान अश्व है। कोंकणी भाषा के किंकणी ध्वनि में सुनाई देने वाले लय विन्यास है कविताएँ।

इस कविता संग्रह में कविताओं को और मुझे दोनों को अनुबंध में न केवल गोवा का आस्वादन करना ही नहीं बल्कि मैं भी गोपि के जैसा बिना पानी के देश के वासी जैसा समुद्र से बातचीत करना चाहता हूँ।

बादलों की चाहतों को तो उड़ाते रहते हो

पर क़ाबू नहीं कर पाते उन्हें।

'जाकर सब जगह बरसो'!

तुम्हारे इस आदेश का पालन नहीं होता।[223]

इन कविताओं को पढ़ते समय अरब सागर, मांडवी और जुव्वारी नदियाँ, उनके संगम, वहाँ की पहाडियाँ, पेड़-पौधे, ठंडी हवा, बरसते चोर बरसात, प्रकृति की हरियाली, बीच इन सब दृश्य मन में शब्द मुद्रा (छाप) करते हैं। हमारे आँखों में भावचित्र के माध्यम से सूक्तिशैली विन्यास से मन को तृप्त करते हैं।

बीजों के अंदर

जो ख़ामोश खलबली मचाती है

वहीं कोंपल-गीत की शुरूआत है।[224]

जैसा हमारे मन में गोवा की गीत उत्सुकता भरते हैं। उसमें कवि इन कविताओं को अंजलि पकड़कर खड़ा होता है।

इन कविताओं से न केवल दृश्य का आभास होता है, बल्कि अनदेखी अंतर्गत लय को सुनना चाहिए और रक्त प्रसरण के साथ पढ़ना चाहिए।

मुझमें पैर भिगोने से भी डरकर

भागर रहे हो!

इसीलिए

पानी के ये अक्षत

डाल रहा हूँ तुम पर![225]

---

[223]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 26.

[224]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 1 & 2.

इन कविताओं का नेपथ्य समुद्र ही है, बारिश में भीगी समुद्र है। सबके आँखों में चमकने वाला समुद्र ही है। पावों को भिगाने के लिए डराने वाले मेट्टा () जीवों के ऊपर चार अक्षित यह समुंदर बरसाते तो कितना अच्छा होता है। यह गोपन्ना (गोपि) का सपनों का सागर है। मेरे सपनों का समुंदर भी है।

रमेशम. वैलुस्कर, गोवा के अनुसार अब मेरे हाथ में डॉ. एन. गोपि की कविताएँ थीं। समय को छूकर, उसे गुदगुदाने वाली और उनकी नींद हराम करने वाली कविताएँ मन में घर कर गई थीं। मेरे रायबरेली वाले घर पर इन कविताओं को कोंकणी का रूप मिला। सृजनात्मकता की पीड़ा भी सुखदायक होती है, इसका एहसास मुझे, समय को सोने नहीं दूँगा पढ़कर हुआ था। भारतीय साहित्य के परिप्रेक्ष्य में बड़े होने वाले कवि का यह स्वागत था और डॉ. एन. गोपि उन कविताओं के रचायिता के रूप में स्वागत के योग्य थे।

गोवा पहुँच कर मैंने सुर्लकर जी से फोन पर संपर्क करने की कोशिश की, पता चला कि आप परदेश भ्रमण के लिए गए हैं। मैं अनुवाद के बारे में सुर्लकर जी से बात करना चाहता था। तब तक मेरी पत्नी के अतिरिक्त संसा में अन्य किसी को भी यह खबर नहीं थी कि डॉ. एन. गोपि की कलाकृति कालान्नि निद्रपोनिव्वनु का अनुवाद कोंकणी में हो चुका है। अब सुर्लकर जी गोवा लौटेंगे तो उनको पता चलेगा। अचानक मेरी दृष्टि डॉ. एन. गोपि जी के बायेडेटा पर पड़ी। उसमें उनका फोन नंबर था। मैंने नंबर घुमाया और प्रत्युत्तर चाहा। दूसरी तरफ से डॉ. एन. गोपि बोल रहे थे। मैंने उनको बताया कि उनकी कविता संग्रह का अनुवाद कोंकणी में हो चुका है। उनकी आवाज़ से पता चला था कि मेरी बात सुनकर वे आनंद लहरों पर सवार होकर अंतराल भ्रमण कर रहे थे।

[225]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 18.

उसके बाद फोन के माध्यम से हमारा संपर्क जारी रहा। डॉ. एन. गोपि हमसे मिलना चाहते थे। संयोगवश गोवा में साहित्य अकादमी की ओर से एक साहित्यिक अनुष्ठान जुलाई 2008 में होनेवाला था। डॉ. एन. गोपि जी का उसमें सहभग था।

गोवा-दर्शन के लिए भी डॉ. एन. गोपि उतने ही अधीर थे। अचानक सितंबर 8 में डॉ. एन. गोपि का फोन आया। उन्होंने बताया कि गोवा का समुद्र देखकर वे बहुत प्रभावित हुए थे और इस आत्मीयता के गर्भाशय से जन्मा है एक कविता संकलन समुद्र, मैं और गोवा। इस कविता संग्रह की प्रस्तावना मैं लिखूँ यह उनकी चाह है। गोमंत भूमि के स्पर्श से संवेदित ये कविताएँ अब गोपनीय नहीं रहीं। तेलुगु में जन्म ले चुकी ये कविताएँ हिंदी की व्यापकता लेकर मेरे पास पहुँच भी गई थीं, इनका स्वागत मैं अपनी ओर से, सारे गोवा की ओर से करता हूँ और समुद्र की ओर से करता हूँ। यह अपनी भूमि की कविता है, अपने समुद्र की कविता है, यह पानी की कविता है, यह पानी को समझने की कविता है।

समुद्र, मैं और गोवा एक छोटा सा प्यार भरा एहसार है जो डॉ. गोपि को गोवा का दर्शन करने के बाद प्राप्त हुआ। हरी-भरी पहाड़ियों के साथ खेलती हुई बारिश, माण्डवी, जुआरी जैसी हमारे मन को खींचकर अपने दिल के पास रख लेने वाली लुभावनी नदियाँ, यहाँ के किनारों की चमकीली रेल पर आकर अपनी लहरों को दुलराने वाला समन्दर देखकर गोपि जी का मन खनक उठा है, गूँज उठा है, और उनकी ये जल-तरंगों उनके अंतर्मन में से खींच लाई हैं ये कविताएँ।

डॉ. एन. गोपि को पानीसे बहुत प्यार है, उनका जल-गीत इसका गवाह है। नन्हें मुक्तक में भी समंदर तथा जल के ऊपर कुछ कविताएँ हैं। इस संग्रह का बस अट्ठारह कविताएँ हैं, संकलन की पहली कविता में ही वर्षा की बूँदों से उनका जो संबंध है, वह उजागर होता है।

डॉ. एन. गोपि गोवा देखने आये। उन्होंने यहाँ की भूमि पर जो पाया वह बहुत ही व्यापक है। इस भूमि का प्यार, इस भूमि का सौंदर्य, यहाँ की नदियों का दिल बहलानेवाला बहाव तथा चिर नृत्य की असंख्य मुद्राओं में नृत्यरत सागर ने डॉ. गोपि के हृदय को ऐसे छू लिया है कि वे कह उठे हैं कि जब वे गोवा छोड़कर अपने प्रदेश में जायेंगे, अपने शहर हैदराबाद जायेंगे जहाँ समुद्र नहीं है, तब उनको वहाँ सागर की कमी नहीं खलेगी। कारण अब वे पूरा सागर अपने अंदर भर कर ले जा रहे हैं। डॉ. गोपि इस भूमि में कितने रच-बस गये हैं इसका यह सबूत है। प्रकृति के सान्निध्य में उनकी प्रतिभा किस प्रकार अंकुरित होती है यह परिलक्षित है।

अपनी प्रस्तावना कविता में डॉ. गोपि कहते हैं कि कविता कैसे अवतरित होती है। कैसे प्रस्फुटित होती है। और चंद शब्दों में वे आगे कहते हैं कि पानी के बिल्लौर का चमक उठना ही कविता है। इससे पता चलता है कि यह कविता आत्मा लेकर आती है। इस संग्रह में एक जगह वे कहते हैं कि बारिश की बूँदें सीधी गिर रही हैं या तिरछी क्या फ़र्क पड़ता है। बस गिरना जरूरी है। बीजों के अंदर जो खामोश खलबली मचती है वही कोंपल तथा गीत की शुरुआत है। गोवा की भूमि पर पानी का जो साक्षात्कार उन्होंने किया है उसका परिणाम सृजन-सुंदरता में हुआ है। मुझे तो इस कविता के बिंबों में व्यापकता का पुट दिखाई देता है। समुद्र को धारण करने वाला गोवा डॉ. गोपि की कविता में जमीन के प्रतीक के रूप में आता है और उसमें उनके मन की व्यापकता झलकती है।

गोवा के महाकवि पद्मश्री बा.म.बोरकर जी ने गोवा के बारे में अपनी मराठी कविता में लिखा है

माझया गोव्याच्या भूमि

गडया नारळ मधाचे

कडया कपारीत पहा

घट फुटती दुधाचे।

अर्थात् मेरी गोवा की भूमि में नारियल मधु से भरे हुए होते हैं और गिरी कन्दराओं से होकर झरनेवाले निर्झरों से दुग्ध के घट फूटकर बहते रहते हैं। गोवा के अन्य कवि डॉ.र.वि.पंडित अपनी एक कविता में लिखते हैं-

दर्या गाजोता

चोय दर्या गाजोता

दर एक ल्हारां तुल्यान दे व नाचोता

चोय देव नाचोता

इस कोंकणी कविता का अर्थ है- सागर गरज रहा है देखो। सागर गरज रहा है। हर लहर में ईश्वर नृत्य कर रहे हैं। इन दोनों शीर्षस्थ कोंकणी कवियों की कविताओं में पानी के बगैर गोवा का दर्शन होता ही नहीं है। यहाँ के नारियल के पेड़ों की सृष्टि भी उतनी ही सुषमामयी है, सागर की मनमोहक आभा तथा उसका उतना ही आदिम गहरा व्यक्तित्व जरूर याद आता है और डॉ. गोपि भी गोवा के इस पानी को छोड़कर नहीं लिख सके हैं। उनको यह पानी किस तरह आक्रांत करता है इसका सबूत इस संकलन मिलता है।

डॉ. एन. गोपि ने गोवा का चित्र खींचकर हमारे सामने रखा है। यहाँ के खपरैल के मकान, समंदर के किनारे पर पुर्तगालियों के द्वारा खड़े किये गये दीपगृह, मीराभार, यहाँ के पहाड़, यहाँ के लोगों का बंधुत्व भाव, यहाँ की बारिश आदि सबको समेटकर अपनी कविताओं में ढाला है। यहाँ की प्राकृतिक हरीतिमा ने उनके संवेदनशील मन पर क्या जादू किया है, इसका वर्णन ये कविताएँ करती हैं।

पानी इस संसार की एक ऐसी चीज़ है जहाँ से सारी जीवित सृष्टि की रचना शुरू होती है, सारे जीवों के साथ पानी का यह रिश्ता बड़ा ही गहरा होता है। इसीलिए पानी के प्रति सभी जीवों में बहुत आकर्षण होता है। मनुष्य इस आकर्षण का प्रदर्शन बहुत सारे माध्यमों से करता है, कोई उसको कविता, कोई कथा, कोई चित्र, कोई संगीत तो कोई नृत्य या शिल्प में व्यक्त करता है तो कोई और किसी प्रकार से। डॉ. एन. गोपि गोवा के अपने इस आकर्षण और विचारों को सुंदर कविताओं के माध्मम से व्यक्त करते हैं। दिल को लुभानेवाली इन कविताओं का मैं सहर्ष स्वागत करता हूँ और गोवा की ओर से उनका अभिनंदन, अपनी कविताओं पर मुझे चार शब्द कहने का मौका देने के लिए भी बहुत आभार।

डॉ. एन. गोपि के संवेदनशील साहित्यिक कृतित्व का पथ प्रशस्त हो यही मनोकामना।

5.2.3. अनुवाद संबंधी समस्याएँ

5.2.3.1.शीर्षकों का अनुवाद

इस यात्रा-वृत्तांत कविता संग्रह में लगभग 18 कविताएँ हैं जिनके शीर्षकों का अनुवाद मूल कृति जैसा अनुवाद में भी रखा गया। कविता संग्रह का शीर्षक है- गोवालो समुद्रं। इसका हिंदी अनुवाद होना था गोवा में समुद्र। लेकिन अनुवादक ने इसे गोवा, मैं और समुद्र ऱखा है जो कविताओं के अनुसार सटीक लगे। मूल कृति से अनुवाद में शीर्षकों का नाम में कुछ भी बदलाव नहीं की गयी। मूल कृति में अंग्रेजी के शीर्षकों जैसे बिगफुट, एन.आई.ओ. गेस्ट हाउस आदि को वैसा ही रखा गया, हिंदी में अनुवाद नहीं किया गया। और आवश्यकतानुसार कुछ शीर्षकों का अनुवाद किया गया जो दोनों भाषाओं समान अर्थ का प्रतीत होता है। जैसे प्रस्तावना, संगम, आविष्कार, मौलिकता आदि। इसीलिए

अनुवाद ग्रंथ जब हम पढ़ते हैं तो हमें नहीं लगता है कि यह अनुवाद का नहीं बल्कि मूल ग्रंथ ही है।

5.2.3.2. शब्दानुवाद/भावानुवाद

तेलुगु और हिंदी दोनों अलग-अलग भाषा परिवार के होने के कारण तेलुगु से हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादक को यह समझना चाहिए कि मूल भाषा के अर्थ लक्ष्य भाषा में नहीं मिलने पर दोनों संस्कृत शब्दावली के नज़दीक रहने के कारण लक्ष्य भाषा में शब्दानुवाद या भावानुवाद से ही अनुवाद करना पड़ता है। इस तरह का अनुवाद हमें एन. गोपि के कविता-संग्रहों में जगह-जगह पर मिलते हैं। भावानुवाद से तात्पर्य यह है कि मूल भाषा के भाव को हिंदी में हू-ब-हू न होकर, उसके सार को भाव के रूप में अनुवाद किया जाता है। इस कृति में अनुवादक ने कई जगह भावानुवाद तथा शब्दानुवाद द्वारा अनुवाद करने की कोशिश की और अनुवादक सफल भी हुए। उदाहरण के तौर पर नीचे दिया जा रहा है-

चलती हवा /मीठे सपनों को छितरा नहीं देती / अधमरी चेतना को /प्राणवायु ज़रूरी है![226]

कलरव पर चढ़कर आने वाले/किरण-रथ के आगे / हाथ जोड़कर खड़ी रहे।/पानी के बिल्लौर का / चमक उठना ही कविता है।[227]

---

[226]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 1.

[227]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 2.

5.2.3.3. लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग

हम सब जानते हैं कि कहावत का दूसरा नाम लोकोक्ति है। ये दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द हैं। कहावत का प्रयोग स्वतंत्र प्रयोग के रूप में होता है, जब कि मुहावरे का वाक्य प्रयोग करने के लिए क्रिया की आवश्यकता होती है। मुहावरा एक वाक्यांश होता है तो कहावत पूरा वाक्य। कहावत मानव जीवन की अनुभूति का निचोड़ होती है। कहावत विशिष्ट प्रसंग में विशिष्ट संदर्भ के साथ प्रयुक्त होती है। इसके प्रयोग से वह प्रसंग अधिक प्रभावपूर्ण बनता है और संदर्भ अर्थवान बनता है। कहावतें सभी भाषाओं के कथन को पुष्ट करती हैं और अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन जाती है। इनमें व्यावहारिक सत्य निहित होने के कारण ये अभिव्यंजना की दृष्टि से अत्यंत सशक्त होती हैं। किंतु ये अभिव्यंजना की दृष्टि से जितनी सशक्त हैं अनुवाद में उतनी ही कठिन होती हैं। स्त्रोत भाषा की कहावतों का लक्ष्य भाषा में समान रूप से अनुवाद करने में अनेक कारणों से समस्याएँ खड़ी होती हैं।

मुहावरों से भी अनुवादक को एक तरह से जूझना ही पड़ता है। मुहावरे याने सामाजिक अथवा सामुहिक अनुभूति को अभिव्यक्त करने की विशिष्ट शैली है। किसी बात को सीधी-सरल भाषा में कहने तथा मुहावरेदार भाषा में कहने से भिन्न-भिन्न प्रभाव परिलक्षित होते हैं। मुहावरों द्वारा कही गयी बात अधिक प्रभावशाली, व्यंजक, मार्मिक एवं सरस होती है। किंतु एक भाषा के मुहावरों को दूसरी भाषा में यथावत संप्रेषित करना अत्यंत कष्ट साध्य होता है। इसलिए अनुवादक का प्रथम कर्तव्य है कि वह शब्द तथा अर्थ से मूल से पूर्णतः समानता रखने वाला लोकोक्ति एवं मुहावरा खोजे और अगर वह मिलता हो तो प्रयुक्त करे। जहाँ शब्द तथा अर्थ की दृष्टि से मूल के पूर्णतः समान

लोकोक्ति एवं मुहावरा न मिलता तो वहाँ शब्द और अर्थ की दृष्टि से समान लोकोक्ति एवं मुहावरा का प्रयुक्त करे।

उपर्युक्त कथन से यह पता चलता है कि अनुवादक ने सुंदर अनुवाद करने के लिए कई बार लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग करके सफल भी हुए और अनुवादक तेलुगु भाषी होने के कारण तेलुगु प्रांत में रहने वाले जगहों को गोवा में रहने वाले स्थानों को तुलना करते हुए अनुवाद किया है।

जैसे कि बारिश के बारे में अनुवाद नीचे दिया जा रहा है-

मुझमें पैर भिगोने से भी डरकर

भागर रहे हो!/इसीलिए

पानी के ये अक्षत/डाल रहा हूँ तुम पर।[228]

उपरोक्त कविता में 'अक्षत डालना' मुहावरा का प्रयोग सटीक लगता है। क्योंकि समुद्र में रहते हुए, बारिश में भीगना जैसा लगता है कि कोई ऊपर से हम पर अक्षत डालकर आशीर्वाद दे रहे हैं। मूल एवं अनूदित पाठ में यह अर्थ निकलता है। इसलिए यहाँ पर सुंदर अनुवाद हुआ है।

बीच के बारे में अनुवाद के बारे में-

गोवा में बरसातें/गोरिल्लों की तरह आक्रमण करती हैं अचानक![229]

रात भर दस्तक देता रहता है दरवाजें पर / समुद्र।

कमरे में मेरे सपनों के सागर पर /हमला।[230]

[228]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 18.

[229]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 17.

यहाँ पर 'दस्तक' देना मुहावरा का प्रयोग किया गया है। इसका भावार्थ यह है कि कवि का मन कहता है कि रात भर समुंदर के लहरे उनके कमरे के पास आता-जाता एक सुंदर दृश्य को अपनी कविता में लिखी हैं। इसी सुंदर दृश्य को अनुवादक ने हिंदी में 'दस्तक देना' मुहावरा का प्रयोग करके अनुवाद करने से लक्ष्य भाषा एवं स्त्रोत भाषा में कोई अंतर नहीं दिखता है।

5.2.3.4. अंग्रेजी शब्दों का हिंदी अनुवाद

आजकल सारे भारतीय भाषाओं के साहित्य में अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग किया जा रहा है। गोवा प्रांत पहले से अंग्रेजी शासन में रहने के कारण वहाँ की हर स्थान पर अंग्रेजी का प्रयोग सार्वजनिक रूप से दिखाई पड़ता है। कोंकणी भाषा को बहुत कम लोग प्रयोग करते हैं। जब मूल कवि वहाँ की प्रदेश या किसी स्थान के बारे में वर्णन करते समय अंग्रेजी शब्द आना स्वाभाविक था। मूल कवि एन. गोपि ने गोवा का वर्णन करते हुए अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। उन अंग्रेजी शब्दों को जैसे कि वहाँ कि बोट और सांता मोनिका के बारे में अनुवादक ने हिंदी में सुंदर ढंग से अनुवाद किया। उदाहरण के तौर पर नीचे दिया जा रहा है-

मेरे गाँव में कमी है पानी की / तेरे बारे में सोचने से ही / सिर से पैर तक बन जाता हूँ

कवि[231]

---

[230]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 19.

[231]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 26.

एक विशाल वस्त्र है सागर / किनारे हैं थान से कटे कपड़े /कौन है जो 'होल सेल' में /

समुद्र को ख़रीद सके![232]

5.2.4. अनूदित पाठ का विश्लेषण और मूल्यंकन

अनुवादक श्रीमति आर. शांता सुंदरी जुलाई के महीने में गोपि जी ने मुझसे कहा था कि एक हफ़्ते के लिए वे और अरुणा जी गोवा जा रहे हैं, मैंने कहा कि जाइए घूम आइए और बताइए कि गोवा कितना सुंदर है।

लोग नई जगह जाते हैं तो शॉपिंग करके वहाँ की ख़ास चीजे ख़रीद लाते हैं- कुछ अपने लिए और कुछ अपनों के लिए। गोपि जी ने भी वही किया पर फ़र्क इतना था कि जहाँ आम लोग चीज़ें लाते हैं, गोपि जी गोवा की सुंदरता को अपनी भावुकता का वर्क़ चढ़ाकर कविता में बाँधकर ले आए। वे मुझे अपनी मुँहबोली बहन मानते हैं, तो फिर मेरे लिए भी कुछ ले आला स्वाभाविक था। वे ही कविताएँ हैं जो वे मेरे लिए ले आए।

अब आपको बनाती हूँ कि मेरी कैसे हुई। उन्होंने अपनी उन 18 कविताओं का मुझसे हिंदी में अनुवाद कराया, और उनके हाथ मेरा नाम भी जुड़ गया।

इन कविताओं का अनुवाद करने में मुझे एक तरह की विशेष अनुभूति इसलिए भी हुई क्योंकि मैंने पहली बार पांडुलिपि से अनुवाद किया है।

ऐसी अमूल्य अनुभूति प्रदान करने वाले गोपि जी के प्रति मैं शब्दों में कृतज्ञता प्रकट नहीं कर पाऊँगी। इसलिए इस अनुवाद को बड़ी विनम्रता से हिंदी पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रही हूँ। पाठक इन कविताओं का आनंद ले पाएँगे तो गोपि जी के प्रति मेरा कृतज्ञता-ज्ञापन हो जाएगा ऐसा मेरा सोचना है।

[232]समुद्र, मैं और गोवा, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवादक आर. शांता सुंदरी, पृ. सं. 27.

तीसरा पुस्तक जो है मेरे बचपन के यादों को अपने साथ लेकर आने वाली गोवा, मैं और समुद्र। इसमें सिर्फ 18 कविताएँ हैं। 2008 में गोवा जानेवाले गोपि जी, वहाँ की समंदर को छोटी पुस्तक में लाने की कोशिश की। सारा किताब समुद्र के बारे में है। उन कविताओं को अनुवाद करने से पहले, वे स्वयं हमारे पास आये, और वहाँ के अनुभवों को कविता के रूप में पढ़ते हुए मुझे सुनाया। कुछ संदर्भों में वहाँ की अनुभूतियों को स्वयं बताये थे।

20 साल समुद्र के तट पर रहने वाली मुझे, समंदर के बारे में इतने सारे विषय है क्या ऐसा लगे जैसा हैं ये 18 कविताएँ। गोवा के विशेषताओं के बारे में छोड़ देने पर, सिर्फ समुद्र, लहरें, समुद्र का तट इन सबको कवि एन. गोपि ने एक नयी दृष्टिकोण से देखकर पाठकों के सामने लाया है। उनके द्वारा कालजल में भी समुद्र है और गोवा में भी समुद्र है। परंतु आठ वर्ष के अंतर में उनके दृष्टि में कितना भेद है।

छठवाँ अध्याय

‘नन्हे मुक्तक’ और ‘गोपि के नन्हे मुक्तक’ संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

छठवाँ अध्याय

6. 'नन्हे मुक्तक' और 'गोपि के नन्हे मुक्तक' संग्रहों के मूल एवं अनूदित पाठ का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन

6.1.नन्हें मुक्तक

6.1.1. नन्हे मुक्तक क्या है ?

नन्हें मुक्तक तेलुगु के लोकप्रिय कवि श्री एन. गोपि की 365 नानीलु कविताओं का हिंदी में रूपांतरित संकलन है। नानीलु का शाब्दिक अर्थ है : हम सबके है। चार चरणों की ये छोटी-छोटी कविताएँ नियमबद्धता से अनुशासित हैं और सीधे मर्म स्पर्श करती हैं।

मूल कवि श्री गोपि के अनुसार नन्हें मुक्तकों के आभिर्भाव के मूल में एक उद्वेग भरी निरंतर संवेदवना छिपी हुई है। यह मानव प्रकृति की भिन्न प्रवृत्तियों के आकलन के लिए किया गया एक संपुटि मानकर, जीवन दुखी होकर जीने के लिए नहीं, जीवन जीत के लिए है, यह मानते हुए की गई एक यात्रा है। मन की अंतः सीमाओं में प्रवेश कर, अनुभूतियों में सराबोर होकर कवि के सामाजिक बनने की एक दशा है। मनुष्य के प्रति अपार प्रेम से, नित्य सत्यान्वेषणरतता से, उपदेशात्मक स्वर से नहीं प्रत्युत अनुरागस्पर्श से कहने की सुगबुगाहट है।

नन्हें मुक्तक का मूल तेलुगु से सटीक हिंदी रूपांतर डॉ. विजयराघव रेड्डी ने किया है। आशा है, प्रांजल भाषा में प्रस्तुत यह सहज-सरल रूपांतरण नानीलु कविताओं की लोकप्रियता ही नहीं, अनुकरणीयता बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होगा।

6.1.2. नन्हे मुक्तक लिखने के पीछे कारण

कवि डॉ. एन. गोपि के अनुसार एक मानसिक दशा में अपने आप प्रस्फुटित ये नानीलु (नन्हें मुक्तक) बिना थके साल भर प्रकट होते रहे। आगे भी ये प्रकट होते रहते यदि 365 होने पर यदि मैंने इन्हें रोका नहीं होता। नन्हें मुक्तक छोटी कविताएँ हैं। बहुत छोटी भी नहीं। बिना अतीव कसावट और बिना अनावश्यक ढिलाई के साथ नानी (नन्हा मुक्तक) मेरे द्वारा रूपायित 20-25 अक्षरोंवाला एक ढाँचा है, एक छंद है। इनमें अक्षरों की संख्या 20 से कम नहीं, और 25 से अधिक नहीं। नानी माने मेरे (ना; नावि = मेरे), (नी; नीवि = तेरे) हैं। मतलब है हम सब के। नानी माने नन्हा बच्चा भी है। ये भी नन्ही कविताएँ हैं न !

इनमें मैंनेर चार चरमणों के ही नियम का पालन किया। चरणों के विभाजन में वचन कविता के अंतर्गत जो संगति है वह इन में नहीं है। फिर भी निर्माण की दृष्टि से इन में भी नियमबद्धता देखी जा सकती है। पुस्तक के तीन चौथाई नन्हें मुक्तक ऐसे हैं जिनके दो-दो चरणों में एक-एक भाव का अंश निहित है। इनमें प्रथम दो चरणों में एक भाव का अंश है तो अंतिम दो चरणों में दूसरा। प्रथम भावांश का समर्थन करते हुए या उसकी सार्थकता का प्रतिपादन करते हुए दूसरा भावांश रहता है :

घड़ा फूट गया / कुढ़ते हो क्यों ?

माटी दूसरा रूप लेने की / कर रही है तैयारी।

इस मुक्तक में प्रथम भावांश का समर्थन दूसरा भावांश कर रहा है।

बहुत थोड़े कुछ ऐसे भी मुक्तक है जिनके चारों चरणों में एक ही भाव है। इन मुक्तकों के प्रथम दो चरणों के पढ़ने पर भाव अधूरा रह जाता है। प्रयास के साथ दूसरे दो

चरणों के पढ़ने से ही अर्थ स्पष्ट हो जाता है। यहाँ निर्माण की दृष्टि से मुक्तक दो वाक्यों में विभाजित-सा दिखने पर भी दोनों को मिलाने से ही वह पूरा हो जाता है। उदाहरणार्थः

उम्र कैद का मतलब है / जिंदगी को

समय के साथ / टाँग देना।

इस के दो वाक्यों में से दूसरा प्रथम को आगे बढ़ाने वाला विस्तरण है।

तेलुगु के संत कवि वेमना की कविताओं का यदि छंदविधान की दृष्टि से अवलोकन करें तो हमें उन के द्वारा रूपायित एक निश्चित फार्मूला दिखाई देता है। जैसेः

उप्पु कप्पुरंबु ओक्क पोलिकनुंडु / चूड चूड रुचुल जाड वेरु

पुरुष लंदु पुण्य पुरुषलु वेरया / विश्वधाभिराम विनुर वेमा।

अर्थात्

नमक व कपूर दिखने में हैं एक-से / मगर है स्वाद उन का अलग-अलग

पुरुषों में होते हैं पुण्य पुरुष अलग / भूलों न मानव वेमना की सूक्ति कभी।

चौथा चरण मकुट है जो सब में समान रहता है। पहले चरण में दो भिन्न पदार्थों के रूप साम्य के आधार को लेकर वेमना एक भाव प्रकट करते हैं। दूसरे चरण में उनके विपरीत गुण धर्मों के दुष्टांत के आधार पर प्रथम भाव का खंडन करते हैं। इन दोनों चरणों के भाव-विपरीतता का समन्वय कर तीसरे चरण में एक लौकिक सत्य का उद्घाटन करते हैं। यह वेमना का ढाँचा है। वेमना की अधिकांश कविताएँ इसी ढाँचे में हैं।

छंदोगमन में भी सरलता को हासिल कर सूर्य और इंद्र गणों[233] में जो चयन की सहूलियत है, उस का उपयोग करते हुए वेमना ने अपनी कविताओं को दीप्त किया और इस कारण उनकी बहुल व्याप्त हुई।

6.1.3. तेलुगु में नन्हे मुक्तकों का आगमन

गहनता के वास्ते ही छोटी कविता का जन्म हुआ है। इस में कोई संदेह नहीं है। स्मरण रखने की सुविधा तो आनुषंगिक है प्रयोजन है। सांद्रता इस का प्रधान उद्धेश्य है। जहाँ तक संभव हो इन में व्यर्थ पदों का निरोध होता है। गाथासप्तशती में इस प्रकार के संक्षिप्तीकरण का कौशल दिखाई देता है। इन गाथाओं को तेलुगु में अनुवाद करते समय राल्लपल्लि अनंतकृष्ण शर्मा ने उनके लिए छोटे छंदों का ही चयन कर लिया है ; जैसे आटवेलदि, तेटगीति और कंदम। मूल की सांद्रता को वेतेलुगु में बखूब ले आए। व्यंजना के सारे भेद हमें गाथाओं में दिखाई देते हैं।

तेलुगु में प्रचुर मात्रा में प्रकाश में आ रहे 'हाईकु' छंदों में यह संक्षिप्तीकरण प्रक्रिया शिखर पर रहा। 'हाईकु' में अक्षरों की सीमा 17 है। इस सीमा कि पालन मात्र गालि नासर रेड्डी ने किया है। 17 अक्षरों का अनुपालन करना कोई कष्टसाध्य कार्य नहीं है। शिखामणि ने उदाहरण समेत इसे साबित किया है।

एंडिपोयिन कोम्म मीद / काकि ओंटरिगा कूचुंदि

चलि कालपु सायंत्रम् - (इस्मायिल)

[233]तेलुगु में संस्कृत छंद विधान के अनुसार ही नहीं देशी छंद विधान के अनुसार भी कविताएँ लिखी जाती हैं। देशी छंदों में सीसमु, आटवेलदि, तेटगीति आदि प्रमुख छंद माने जाते हैं। इनमें सूर्यगण और इंद्रगणों को काम मे लाते हैं। सूर्यगण दो है और इंद्रगण छह हैं। यहाँ चयन की सुविधा है जब कि संस्कृत छंद विधान में नहीं है।

एंडु कोम्म पै / ओंटरिगा ओ काकि

शिशिर संध्य - **(नासर रेड्डी)**

अर्थात्

सूखी डाल पर / बैठा है कौआ अकेला

शीतकाल की संध्या - **(इस्मायिल)**

सूखी डाल पर / अकेला कौआ एक

शिशिर की संध्या - **(नासर रेड्डी)**

नासर रेड्डी ने प्रतिभा के साथ इस का संक्षिप्तीकरण ते किया। लेकिन कविता 'स्नाप शाट' (Snapshot) सा बन गई है। हो सकता है कि इसमें जैन, बौद्ध दर्शन की स्फूर्ति प्रकट हो, लेकिन औसत पाठक को इस में कोई प्रकंपन नहीं मिलता।

6.1.4. अंतर्वस्तु एवं विश्लेषण और मूल्यांकन

किसी भी कविता में कवि सब नहीं कहता। शेष का (जो अनकहा है) पाठक (श्रोता) अंदाज लगा लेता है। पाठक की साझेदारी से भाव सारे समग्र रूप से आविष्कृत हो जाते हैं। कवि राह दिखाता है अनंत सत्यों की ओर और पाठक उस राह पर चलता है। पाठक जब कवि के साथ समतुल्य भावुक होता है तब यह प्रक्रिया फलीभूत होती है।

लेकिन यह प्रक्रिया दार्शनिक और प्रकृति के साथ की तादात्मय स्थिति जैसी मौन पदार्थों तक सीमित रहती है।

जहाँ वस्तुगत विविधता है यहाँ सहूलियतगत छूट लेने का मार्ग मुझे सही लगा। इससे कवि की सद्यः स्फूर्ति का प्रयत्न बरकरार रहता है। इसलिए मैंने इन में 20-25 अक्षरों तक की छूट ली है। सी. पी. ब्राऊन ने छंदों पर जो ग्रंथ लिखा उसमें उन्होंने 'वृत्तों'Fixed meters और जाति (देशी) छंदों को Changing meters कहा है। Changing में थोड़ी-सी स्वेच्छा और सरकने की जगह मिल जाती है।

नन्हें मुक्तकों में विविध विषय है ; सामाजिक, दार्शनिक कवितात्मक आदि। नन्हें मुक्तकों के आविर्भव के मूल में एक उद्वेगभरित निरंतर संवेदना छिपी हुई है। यह मानव प्रकृति की भिन्न प्रवृत्तियों के आकलन के लिए किया गयार एक प्रयत्न है। जीवन को एक अनुभवों की संपुटि मान कर, जीवन दुःखी होकर जीने के लिए नहीं, जीवन जीत के साथ जीने के लिए है, यह मानते हुए की गई एक यात्रा है। मन की अंतः सीमाओंमें प्रवेश कर अनुभूतियों में सराबोर होकर कवि के सामाजिक बनने की एक दशा है। मनुष्य पर के अपार प्रेम से, नित्य सत्यान्वेषणापरता से, उपदेशात्मक स्वर से नहीं, प्रत्युत अनुरागस्पर्श से कहने की एक सुगबुगाहट है। ये सब इनमें प्रकट हो जाते हैं।

नन्हें मुक्तकों की आकर्षण-शक्ति से मुग्ध होकर 'वार्ता' के तत्कालीन संपादक ए.बी.के. प्रसाद ने 20 सप्ताह तक इन्हें क्रमशः अपने पत्र में प्रकाशित किया। उन्हीं दिनों आंध्रज्योति साप्ताहिक में एस. रघु नामक व्यक्ति ने नानीलु के नाम से ही इसी धुन में कुछ कविताएँ लिखी हैं (19.12.1997) कोट्ल वेंकटेश्वर रेड्डी ने 'रानीलु' के नाम से कुछ कविताएँ लिखी हैं। उनके अनुसार रानीलु का मतलब है राजकीय (रा = राजकीय)

नीतुलु (नी = नीतुलु) अर्थात् राजकीय नीतियाँ। 'काकीनाडा के शिरीश ने मुझे बताया नानीलु के अनुकरण पर मुन्नीलु लिख रहा हूँ।' इन्होंने सीताकोक चिलुक नाम से एक हाइकु संकलन भी प्रकाशित किया है, अनुसरण को दिखाने के उद्धेश्य से नहीं, प्रत्युत यह बताने के लिए कि नानीलु पाठक जगत् में समादृत हुए हैं, मुद्रण में आए ये रचनाएँ, इसका प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

प्रो. विजयराघव रेड्डी के अनुसार कवि डॉ. एन. गोपि मेरे प्रति बहुत स्नेह रखते हैं और सहृदय हैं। उनका जो भी ग्रंथ प्रकाश में आता है उसकी एक प्रति मुझे देना वे नहीं भूलते। इसी क्रम में आप ने अपना 1998 में प्रकाशित ग्रंथ नानीलु उसी वर्ष मुझे अक्तूबर, 26 तारीख को सस्नेह भेंट किया। मैं पुस्तक के इन छोटे मुक्तकों को, जिन्हें मैंने नन्हें मुक्तक अभिहित किया, पढ़ता गया और बीच-बीच मेंर जो मुक्तक मेरे हृदय को झट छू गया, लगे हाथ उस का रूपांतरण कर वहीं पुस्तक में, नानीलुर के सामने की खाली जगह पर लिखता गया। पढ़ना समाप्त हो जाने पर पुस्तक के पन्ने पलट कर गिनती की तो पाया कि 365 नानीलु में से 101 नन्हें मुक्तक के रूप में भी रूपांतरित हो चुके थे।

डॉ. गोपि के शिष्य वृंद और इष्टमित्रों ने दिसंबर 1998 में उनकी 50वीं वर्षगाँठ पर तेलुगु साहित्य के उनके अवदान को लेकर दिनभर का साहित्यिक कार्यक्रम संचालित कर सोल्लास उनके जन्म की अर्धशती मनाई। इस अवसर पर मैंने उन 101 नन्हें मुक्तकों को उनके मूल के देवनागरी लिप्यंतरण के साथ 50वें जन्म दिन के तोहफ़े के रूप में भेंट किया, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया।

मुनींद्र जी के संपादकत्व में हैदराबाद से प्रकाशित साप्ताहिक 'दक्षिण समाचार' के अप्रैल 1999 के एक अंक में इनमें से 12 मुक्तक नन्हें मुक्तक के नाम से प्रकाशित हुए। कहना न होगा कि दक्षिण समाचारर एक ऐसी लघु पत्रिका है जिस के पाठक पूरे भारत

में व्याप्त हैं और ये प्रबुद्ध पाठ वर्ग में आते हैं। इन नन्हें मुक्तकों को पढ़कर देश के एक सुदूर अंचलर के विश्वविद्यालय, असम विश्वविद्यालय, सिलचर की एक पाठक डॉ. सुभदा पांडेय ने मूल कवि डॉ. गोपि को लिखे अपने दि. 21.05.1999 के पत्र में यों उद्गार व्यक्त किएः

दक्षिण समाचार पत्रिका में आप के मुक्तक के हिंदीर अनुवाद प्रकाशित हुए हैं। अनुवादक डॉ. पोलि विजयराघव रेड्डी हैं। आप के मुक्तक इतने हृदयस्पर्शी और प्रभावकारी हैं कि इन्हें पढ़ने के पश्चात मैं आप को पत्र लिखने से रोक न सकी। पता नहीं आप हिंदी पढ़ सकते हैं या नहीं, लेकिन आपकी लेखनी तक मेरा प्रणाम पहुँचे, इसी भावनार से पत्र लिख रही हूँ।..... अनुवादक बंधु को भी नमन कहें। उसी पत्र में 3 मुक्तक उद्धृत करने का अपना लोभ डॉ. शुभदा पांडेय संवरण नहीं कर सकी। उनके द्वारा उद्धृत वे तीन मुक्तक हैं-

घड़ा फूट गया / कुढ़ते हो क्यों ?

माटी दूसरा रूप लेने की / कर रही है तैयारी।।

दुखः प्रकट करने के हैं / माध्यम अनेक

रोना तो बस उसका / एक अंश मात्र।।

भाषा / ड्राइंग रूम का तोता है

फिर बोली / वह तो किचन की महक।।

नन्हें मुक्तकों के रूप में रूपायित होकर तेलुगु नानीलु ने न केवल हिंदी पाठकों के हृदय स्पर्श किया अपितु तेलुगु साहित्यिक जगत के युवा और प्रौढ़ कवियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। नानीलु ग्रंथ के प्रकाश में आए अभी पूरे चार साल नहीं हुए, लेकिन बीसों कवि इस नए छंद को अपनाकर कविताएँ लिखने लगे हैं। एक दर्जन तक नानीलु के संकलन प्रकाश में आए। पत्र-पत्रिकाएँ अलग स्तंभ निर्धारित कर नानीलु के संकलन में जुटी हुई हैं। इस तरह नानीलु के कारण डॉ. गोपि तेलुगु कविता के क्षेत्र में ट्रेंड सेटर के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे हैं। छोटी कविताएँ इसके पूर्व भी तेलुगु में प्रचलित रहीं। गत शती के 1980 के दशक में मिनी कविता के नाम से छोटी कविताओं का ज़ोर रहा जिन का काव्य वस्तु प्रमुखतः सामाजिक होता था। 1990 के दशक में हाइकू कविता का ज़ोर रहा है जिसका वस्तु प्रकृति सौंदर्य और दार्शनिक रहा। 80 और 90 दशकों के बीच एक और नया प्रयोग तेलुगु कविता के शिल्प में हुआ। वह था डॉ. सी. नारायण रेड्डी के द्वारा पाँच चरणों में रूपायित प्रपंच पदुलु छंद विधान, जिस ग्रंथ के हिंदी अनुवाद से प्रभाव ग्रहण कर मणिपुरी कवियों ने अपने काव्य में पाँच चरणों के नए छंद को प्रवेश कराया। 90 दशक के अंत में डॉ. गोपि ने, जो मिनी कविता के सिद्धहस्त कवि माने गए, मिनी कविता एवं हाइकू दोनों प्रक्रियाओं को सम्मिलित कर एक नई देशी छंद विधान का निर्माण किया है, वही नानीलु है।

101 मुक्तकों के अनुवाद के बाद मैं दूसरे कार्यों में व्यस्त रहा गया, नन्हें मुक्तकों की तरफ़ पुनः मुड़कर देखने की फ़ुरसत नहीं मिली। लेकिन 8 जून, 2000 को मेरे इंफालर के प्रवास के दौरान मुझे एक भयानक सड़क दुर्घटना का शिकार होना पड़ा। फलस्वरूप मेरी दोनों टाँगों और बाएँ हाथ की कलाई की हड्डियों का फैक्चर हुआ। और मुझे बिना पाँवर जमीन पर रखे 96 दिन तक बिस्तार पर पड़े रहना पड़ा।

बिस्तर पर पड़े-पड़े ही मैंने 6 सितंबर, 2000 तक शेष 264 नानीलु को नन्हें मुक्तकों का रूप दिया। एक ऐसी दोलायमान स्थिति से गुज़रते हुए कि 12 सितंबरर को जब मुझे ज़मीन पर खड़ा कर दिया जाएगा तो मैं पूर्वरत् खड़ा रह पाऊँगा, चल पाऊँगा कि नहीं। नन्हें मुक्तकों के खैर, अब तो पूरे 365 नानीलु नन्हें मुक्तक के रूप धरे आपके सामने खड़े हैं, न्योतते हुए कि आएँ कोई हमें स्पर्श करें और कहे कि ये नन्हें मुक्तक हैं हृदयस्पर्शी, और ये पंक्तियाँ भी दुहराए कि, देखने में छोटे लागै घाव करैं गंभीर।

घड़ा फूट गया / कुढ़ते हो क्यों ?

माटी दूसरा रूप लेने की / कर रही है तैयारी।।

कुंड मुक्कलैंदा ? / कुमिलि पोकु

मट्टि मरो रूपम् कोसम् / सिद्धमौतुंदि।

इस मुक्तक के अनुवाद में हम देखते हैं कि चारों चरणों में एक ही भाव है। प्रथम दो चरणों में जो भाव है पूर्ण नहीं है। अंतिम दो चरणों को पढ़ने पर ही भाव पूर्ण हो जाता है। इस तरह अंतिम दो चरण प्रथम दो चरणों के परिपूरक हैं। मूल की वाक्य संरचना (Sentence structure)में अनूदित पाठ की वाक्य संरचना में कोई अंतर नहीं है। हू-ब-हू समानता दो भिन्न भारतीय भाषाओं में, चाहे वे किसी भी भाषा परिवार से संबंधित क्यों न हो, ऐसी समानताएँ पर्याप्त मात्रा में मिलती हैं। इसीलिए तो भारतीय भाषाओं के पारस्परिक अनुवाद में सहूलियतें होती हैं। भाषाविज्ञान की शब्दावली में अभिसरण (Convergence) जो कहा जाता है वह भारतीय भाषाओं में सदियों से

होता रहा है। इसलिए यह सुकरता है। तभी तो यह कहा गया भारत एक भाषाई क्षेत्र है (India is a linguistic area)

जहाँ तक प्रथम दो चरणों का संबंध है मूल पाठ के कथन में अनूदित पाठ के कथन में अंतर है। मूल पाठ में सामान्य कथन है- कुमिलि पोकु अर्थात् कुढ़ो मत। लेकिन अनूदित पाठ में इस सामान्य कथन को प्रश्नार्थक कुढ़ते हो क्यों बना दिया। इस से भाव में अधिक निखार आ गया। ऐसे संदर्भों के संबंध में ही यह कहा जाता है कि कहीं-कहीं अनुवाद मूल से भी बेहतर बन जाता है। संभवतः इसी कारण पाठक शुभदा पांडेय को यह अनुवाद अधिक भाया और उन्होंने इसे उद्धृत किया।

दुखः प्रकट करने के हैं / माध्यम अनेक

रोना तो बस उसका / एक अंश मात्र।।

दुःखानिकि / सवालक्ष माध्यमालु

एडुपु / ओकानोक पार्श्वम्।।

इस मुक्तक के मूल में दूसरे चरण में एक पदबंध (Phrase) है- सवालक्ष माध्यमालु तेलुगु में बहुत सारे भाव को व्यक्त करने के लिए (लाख) सवालक्ष (लाखों) का प्रयोग होता है। यह मुहावरा (तेलुगु में इसे नुडिकारम कहते हैं) जैसा है अधिक प्रचलित है और रूढ़ हो गया है। अनुवाद में सवालक्ष माध्यम के लिए मात्र माध्यम अनेक है जो कि पर्याप्त नहीं है। यदि इसके स्थान पर माध्यम लाखों होता, तो मूल के नज़दीक होता। मूल में तीसरे चरण में एक ही शब्द एडुपु का प्रयोग है तो अनुवाद में एक लंबा पदबंध रोना तो बस उसका प्रयुक्त हुआ है जो मूल की व्याख्या जैसी है।

भाषा / ड्राइंग रूम का तोता है

फिर बोली / वह तो किचन की महक।।

भाषंटे / ड्राइंग रूम का चिलुक

मरि यास ? / वंटिंटि परिमलम्।।

तीसरे और चौथे चरणोंर में मूल और अनुवाद में जो थोड़ा-सा अंतर हैवह इस प्रकार है। यास वास्तव में हिंदी में लहजा होता लिया है। मूल के साथ न्याय करने की दृष्टि से अनुवाद में बोली शब्द का प्रयोग किया गया है।

मूल में परिमलम् जो शब्द है असलियत में सुगंध, विशेषकर फूलोंर की सुगंध के लिए यह शब्द संभवतः प्रयुक्त होता है। हिंदी में परिमलम् शब्द तो है लेकिन वह यहाँ सटीक नहीं होता। इसलिए महक का प्रयोगर किया गया है जो औचित्यपूर्ण (appropriate)एवं स्वीकार्य (acceptable)भी है।**- डॉ. विजयराघव रेड्डी**

6.1.5. अनुवाद संबंधी समस्याएँ

नन्हें मुक्तकों के अनुवाद में मुख्य रूप से चार प्रकार के अनुवाद दिखायी देता है। वे हैं-

1. भावानुवाद /शब्दानुवाद
2. अंग्रेजी शब्दों का अनुवाद
3. उर्दू एवं फारसी शब्दों का प्रयोग
4. अनुवाद में अशुद्धियाँ
5. लोकोक्ति एवं मुहावरों का प्रयोग

उपर्युक्त चार प्रकार के अनुवादों को एक एक करके नीचे बताया जा रहा है-

6.1.5.1. भावानुवाद / शब्दानुवाद

अनुवादक ने इस कविता-संग्रह में कई बार भावानुवाद एवं शब्दानुवाद का प्रयोग किया। चूँकि तेलुगु और हिंदी दोनों की जननी संस्कृत होने के कारण दोनों भाषाओं में कई ऐसे शब्द होते हैं जो दोनों भाषाओं में समान अर्थ प्रतीत होता है। इसलिए कई मुक्तक ऐसे ही शब्दानुवाद तथा भावानुवाद से ही मूल एवं अनुवाद भाषा में ज्यादा अंतर दिखाई नहीं देता है। मूल एवं अनूदित भाषा में मुक्तों की अक्षरों की संख्या समान होने के कारण मुक्तों के अनुवाद समान प्रतीत होता है। वास्तव में शब्दानुवाद तथा भावानुवाद दोनों के प्रयोग से अनुवाद में सहजता पायी गया और कई पाठकों को यह लगता है कि यह अनूदित मुक्त नहीं है, बल्कि मूल स्वयं मुक्तक है। इस तरह मुक्तों के अनुवाद में भावानुवाद का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण के तौर पर कुछ नन्हे मुक्तकों को नीचे दिया जा रहा है-

रजो-धर्म है / कल्लोल जलधि। / लड़कियों को / प्यार से देखिए।।[234]

'बोर्ड' पर / गणित हल करने को कहा तो / कविता लिखी मैंने / मार खाई मास्टर जी से।।[235]

ईरानी होटलों की / पुरानी मेज़ों पर / छात्र अपना भविष्य / तराश रहे हैं।।[236]

[234]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 127.

[235]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 128.

[236]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 132.

6.1.5.2. अंग्रेजी शब्दों का अनुवाद

मूल कवि कई जगह अंग्रजी शब्दों का प्रयोग किया है। आजकल हर भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग स्वाभाविक समझा जा रहा है। परंतु अनुवादक भी अपने संकलन में उन शब्दों का अर्थ या शब्द को हिंदी में अनुवाद करने के बजाय अंग्रेजी शब्दों का ही प्रयोग देवनागरी लिप्यांतरण में प्रयोग किया है।

जैसे :

भाषा / ड्राइंग रूम का तोता है

फिर बोली / वह तो किचन की महक।।[237]

दिखता तो है वैसा / मगर पेंडुलम

हिलना अच्छा है / मगर गमन उस से भी अच्छा।।[238]

'रियर ग्लास' में / दृश्य बदल रहे हैं

कार की यात्रा के माने / यही है क्या ?[239]

'पॉश होटलों' को होता है / कमर-दर्द

नीचे की तरफ़ / देख नहीं सकते झुक कर।।[240]

---

[237] नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2001, पृ.सं. 8.

[238] नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 34.

[239] नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 102.

[240] नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 109.

6.1.5.3. उर्दू एवं फारसी शब्दों का प्रयोग

डॉ.एन. गोपि तेलंगाना प्रांत के वासी होने के कारण और कई वर्षों से हैदराबाद में रहने के कारण यहाँ की दक्खिनी भाषा के उर्दू एवं फारसी शब्दों से सुपरिचित हैं। इसलिए उनके कविताओ में जगह-जगह पर इन शब्दों का प्रयोग करते हैं। तो अनुवादक भी कई जगह उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है, लेकिन जहाँ उर्दू एवं फारसी शब्दों की जगह हिंदी की शब्द सटीव वहाँ बदलाव भी किये हैं।

उदाहरणार्थ-

पेड़ों ने / ओढ़े हैं पखेरू / आश्रितों को / आजमाना इसे ही कहते हैं।।[241]

जब तक लिखी न जाती / तब तक ही है कविता तेरी / बाद में काल के लिए / वह वसीयतनामा।।[242]

शांति के वास्ते ही / सहन किया अशांति को / बारिश के वास्ते ही तो / किया सहन धूप को।।[243]

6.1.5.4. अनुवाद में अशुद्धियाँ

मूल कृति एवं अनुवाद ग्रंथ में दोनों को ध्यान में देखा जाये तो कही-कही अनुवाद में अशुद्धियाँ पाया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि मूल एवं अनुवाद जब हम पढ़ते हैं तो कुछ जगह अटपटासा लगता है, जो मुझे लगा है। उदाहरणार्थ कुछ मुक्तकों को नीचे दिया जा रह है-

---

[241]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 17.
[242]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 18.
[243]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 18.

जिंदगानी पूरी / सिमटती नहीं एक कविता में / कविता को होना नहीं चाहिए / महत्वाकांक्षी।।[244]

बीज को / तुच्छ समझते हो क्यों ? / यही तो है टेक / कल के किसलय गीत की।।[245]

शब्द / हो जाते जहाँ विफल / वहाँ अभिव्यक्ति का सहारा / होता है संगीत।।[246]

6.1.5.5. वाच्य के संदर्भ में

संस्कृत के प्रभाव के कारण तेलुगु में कई शब्दों से युक्त लंबे-लंबे समास लिखने की परिपाटी है। लेकिन हिंदी में दो या तीन शब्दों से बढ़कर समास का प्रयोग करना भाषा की प्राकृतिक अनुकूल नहीं है। इसलिए अनुवादक को हिंदी में लंबे वाक्यों या वाच्य के स्तान छेटे वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए। तेलुगु और हिंदी दोनों भाषाओं में वाच्य के संदर्भ अलग-अलग संदर्भ में अनुवाद हुआ है। हिंदी में तेलुगु एवं हिंदी दोनों भारतीय भाषाएँ होने पर भी दोनों भाषाओं की भाषा परिवार होने के कारण वाच्य में थोड़ा-सा परिवर्तन दिखाई देता है। जो इस प्रकार है-

पूरब की डिबिया में से / निकाला

आश्यर्य है, कैसे समा गया था / इतना बड़ा दिन।।[247]

[244]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 15.
[245]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 27.
[246]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 33.
[247]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 117.

6.1.5.6. अनुवाद में कविता का बदलाव

इस कविता-संग्रह में एक जगह प्रकाशक की गलती हो या अनुवादक की गलती हो पता नहीं। लेकिन एक मुक्तक इधर-उधर हुआ है। उसे नीचे दिया गया है।

सुराही के गले से / कान सटा दिए तो

पानी के संवाद में / विश्व रहस्य सुनाई दिए।।[248]

की जगह

आँसू का / है कहाँ स्त्रोत ?

शिला की दरारों से / निकली धारा से पूछो।।[249]

6.1.5.7.मुहावरा/लोकोक्तियों का प्रयोग

हम हरदिन कहावते कहते हैं, कहावतें सुनते हैं । बोलते समय हम जाने या अनजाने कहावतों का प्रयोग कर देते हैं । जब कभी किसी बात को प्रमाणित करने के लिए प्रमाणिक-रूप कहावत को प्रस्तुत करने में असमर्थ (विस्मृति या किसी दूसरे कारण से) होते हैं, तब अक्सर कह देते हैं कि ' अदेमो सामेत चेप्पिनटलु" अर्थात् जैसे कोई कहावत कही जाती है । कहावत प्रस्तुत करने में असमर्थ भले ही हो, पर कहावत का नाम अवश्य लेते हैं । हमारे दैनिक जीवन से कहावतें इस प्रकार हिल-मिल गयी है कि उनको पृथक करना संमय नहीं है । हिन्दी के समान ही तेलुगु में भी कहावतों का प्राचुर्य है । तेलुगु जनता विशेष रूप से कहावतों का प्रयोग करती है । जहां किसी से उपमा देनी

---

[248]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 136.

[249]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 135.

हो, किसी से तुलजा करनी हो अथवा साहृश्य दिखलाना हो वहां कहावतों का प्रयोग किया जाता है जो अभिव्यक्ति की सफलता का सर्वोत्कष्ट साधन है । इनकी तुलना किससे की जाय? यदि वेद, महर्षियों के ज्ञान के भण्डार है तो कहावतें अनता-अनार्दन की अनुभव-सुधा हैं

इसी तरह मुहावरे के प्रयोग से चमत्कार आ जाता है। लेखक का उद्देश्य स्पष्ट होकर शीघ्र ही पाठक के हृदय पर अंकित हो जाता है। मुहावरा वाक्यांश है अवश्य, पर सब वाक्यांश मुहावरे नहीं होते हैं। उदाहरणार्थ "नदी तट पर" वाक्यांश है, मुहावरा नहीं। "टेढ़ी खीर' ' मुहाथरेशर वाक्यांश है, मुहावरा नहीं। अत: मुहावरे में कोई न कोई लाक्षणिक अर्थ अवश्य रहता है । दूसरे शब्दों में उसमें लक्ष्यार्थ की प्रधानता होती है। उदाहरण के लिए "सिर पर सवार होना' ' का अर्थ "किसी के सिर पर आरूढ़ होना' ' न लेकर "तंग करना' ' लेते हैं । इस प्रकार मुहावरों का विशिष्ट अर्थ लिया जाता है । तेलुगु में प्रयुक्त कुछेक मुहावरों पर दृष्टिपात कीजिये- चेयि काल्चुकोमुट' ' जिसका सीधा अर्थ होता है "हाथ जलाना'। पर, यह अर्थ न लेकर दूसरा ही अभिप्रेत अंर्थ लेते हैं "अपने हाथ से खाना बनाना'। कंडुपुलो पाल पोयट' ' आनंद का समाचार सुनाना या तसल्ली देना।) काल्लु चापुट' ' (अशक्तता दिखाना) आदि अन्य उदाहरण हैं।

स्मरण रखने की बात यह' है कि मुहावरे में जो शब्द प्रयुक्त होते हैं वे सर्वथा अपने स्थान पर सार्थक और नापे-तुले होते हैं। उनके स्थान पर दूसरे शब्दों का प्रयोग उपयोगी नहीं होता। उदाहरणार्थ- -'कलेजा मुँह को जाना' के बदले "हृदय मुँह को आना' जान

खाना" के बदले "प्राण खाना' ' कहने से कोई प्रभाव नहीं रहता और वे मुहावरे कहलाने लायक भी नहीं होते। हिन्दी में प्रयुक्त "मुहावरा' ' शब्द फारसी का है । यह शब्द बहुत ही लोकप्रिय है। इस शहद के स्थान पर कुछ विद्वानों ने वाग्धारा, प्रमुखता, वाग्रीति, लढेक्ति, भाषा-संप्रदाय, मुख-व्यवहार, आदि शब्दों को सुझाया है । ' परंतु! इनमें से कोई भी शब्द व्यवहार में नहीं है। 'मुहावरा' ' शब्द व्यावहारिक दृष्टि से जितना उपयुक्त है, उतना और कोई शब्द नहीं। इधर कुछ दिनों से कतिपय विद्वानों में यह धुन सुधार हो गयी है कि वे प्रत्येक विदेशी शब्द को निकाल बाहर करना चाहते हैं और उनके स्थान पर कठिन संस्कृत शब्द गढ़ना चाहते हैं । राष्ट्रभाषा के प्रचार की दृष्टि से यह तक प्रतीत नहीं होता। सच तो यह है कि संस्कृत में मुहावरे का पर्याय शब्द नहीं मिलता। संस्कृत में मुहावरे नाम की कोई चीज नहीं है। अंगुलिदाने भुज गिलसि" जैसे प्रयोग लाक्षणिक प्रयोगों के अन्तर्गत माने जाते है । उनका पृथक अस्तित्व नहीं । अनुमान लगा सकते हैं कि मुहावरे का इतिहास अति प्राचीन है । इन मुहावरों का आविर्भाव कैसे हुआ, यह कौतूहल का विषय हो सकता है।

लोकोक्तियाँ एवं मुहावरे पाठक को हमेशा प्रिय रहे हैं। तेलुगु से हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादक ने कई बार मुहावरा और लोकोक्तियों का प्रयोग किया गया है। जिसे पाठक वर्ग जब अनूदित पाठ को पढ़ते हैं तो नहीं लगता है कि यह अनूदित है, बल्कि मूल कृति ही लगता है। इसलिए कुछ मुक्तकों को उदाहरण के तौर पर नीचे दिया जा रहा हैं-

अरे, यह तो / पक्की झूठी बारिश है / छींटे दो छिटका कर / छू-मंतर हो गई।।[250]

[250]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 68.

आवाज़ / उभर कर फुर्र से उड़ गई / खामोशी / फैल रही है बेझिझक।।[251]

किसी तरह / कर लेते है समझौता / लेकिन वह तो / होता है नाम के वास्ते।।[252]

गाना सुनने में था तल्लीन / बाजू में देखा तो / कबाब में हड्डी-से थे /'सेलफोन' महोदय।।[253]

नन्हे मुक्तकों के बारे में हिंदू पत्रिका में आये टिप्पणी को नीचे दिया जा रहा है।

A steady seriousness and a commitment to simplicity poets make Mr. N.Gopi one of the outstanding poets of our times. Clarity in thought and an analytical approach are hallmarks of his poetry. The inventor of "Nani", new form poetry as a response to Japanese "Haikus".

With six poetry collections, critical works, several research papers and four books on the verge of being published. Gopi is not tired. He wants to experiment with a long poem.[254] – The Hindu, 6-7-1998.

[251]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 73.

[252]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 105.

[253]नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज, दिल्ली, 2005, पृ.सं. 114.

[254] गोपि साहित्यदर्शनम् वर्ष पूरा करने के उपलक्ष्य में तीन दशकों की साहित्य 50 ,(दृक्कोणालु समाक्षलु) 207 .सं.पृ ,1998-हैदराबाद ,एंडलूरि सुधाकर आदि-सपांदकगण ,विवेचन अंक

6.2. गोपि के नन्हें मुक्तक

'गोपि नानीलु' (गोपि के नन्हे मुक्तक) द्वितीय संग्रह हैं। इस संग्रह में कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के कुल दिनों जैसा।) इसमें एन.गोपि की ढेर सारी अनुभूतियाँ मिलती हैं। मन का चित्रण, मनुष्य का चित्रण, राजनीति, साम्यवाद, मानव-जीवन के वैविध्य का अत्यन्त गहराई के साथ चित्रण किया गया है। कुछ मुक्तकों में स्त्री और स्त्रीवादी तत्व उल्लेखनीय हैं। प्रतीकात्मता प्रशंसनीय है। सामाजिक चेतना अवलोकनीय है। सीमित अक्षर-सम्पदा में असीम भाव-संपन्नता की सृष्टि, एक और विशेषता है। यह भी हिन्दी और उर्दू दो भाषाओं में अनूदित हैं। ये सारे नन्हे मुक्तक जब गोपि वरंगल काकातीय विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे, उसी समय वरंगल से हैदराबाद आते-जाते कॉर में बैठे-बैठे लिखे गये थे।

नन्हें मुक्तक तेलुगु के नानीलु का अनुवाद है। नानीलु कविता-प्रक्रिया का प्रयोग आधुनिक तेलुगु काव्य-जगत् में 20 वीं शती के अंतिम दशक से होता रहा है। इस कविता रूप के आविष्कर्ता, सृष्टिकर्ता, ट्रेंड सेटर, प्रवर्तक, सबकुछ डॉ.एन.गोपि हैं। तेलुगु में सामान्य पाठक से लेकर साहित्यकारों तक, सभी ने कविता की इस रूप प्रक्रिया का स्वागत किया, आदर किया और प्रशंसा की। तेलुगु में नन्हें मुक्तकों की इस रूप-प्रक्रिया का अनुसरण आद दो सौ से अधिक कवि करते आ रहे हैं और लगभग उतनी ही पुस्तकें अब प्रकाशित हो चुकी हैं।

6.2.1. गोपि के नन्हे मुक्तकों के परिचय

तेलुगु की इस नवीन मुक्तक काव्य परंपरा में 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक यह रचना एन. गोपि का द्वितीय संग्रह है। इस संग्रह में कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के

दिनों जैसा) । अनुवादक के अनुसार गोपि के नन्हें मुक्तक के अनुवाद में मुझे अनुवाद संबंधी कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। अनुवाद में संप्रेषण की कठिनाई के कारण मूल संग्रह के छह मुक्तकों को छोड़ दिया गया है। इसके स्थान पर गोपि के नव-निर्मित छह मुक्तकों का जोड़ दिया गया है। तेलुगु के मूल के पृष्ठ चार पर एक पद है-

हिमालयाल्लो

अट जनि कांचिते

पेद्दन्ना

गुर्तुकोच्चाडु।

यहाँ इन पंक्तियों का संबंध हिमालय की सुषमा और तेलुगु के प्राचीन कवि पेद्दन्ना के साथ है। इस अंतरार्थ को तेलुगु का एक विद्वान पाठक ही जान सकता है। अनुवाद में एक नन्हें मुक्तक में उक्त संबंध को स्पष्ट करना असंभव-सा लगा। इस अनुवाद की समस्या के कारण इस मुक्तक को अनुवाद में लाया नहीं जा सकता।

तेलुगु मूल के पृष्ट 46 पर एक मुक्तक है-

गोदावरिनि चिलिकिते

भारतं

इप्पुडंता

गीरतमें।

इसका अनुवाद इस प्रकार हो सकता था- **गोदावरी के मंथन से / भारतं / अब तो सारा / गीतरं ही है।** यहाँ गीरतं एक निरर्थक शब्द है, जैसे हिंदी में खाना-वाना, चाय-वाय आदि। हिंदी के पाठक को गोदावरी के मंथन से भारत का संबंध एक ही नन्हें मुक्तक

के माध्यम से समझाना साध्य नहीं था। अतः इस मुक्तक को भी अनुवाद का अंश मान कर छोड़ दिया गया है।

6.2.2. अनुवाद संबंधी समस्याएँ

तेलुगु और हिंदी दोनों भाषाओं की वाक्य निर्माण, सांस्कृतिक भिन्नता के कारण शब्द-प्रयोग, पद-बंद, वाक्य संरचना जैसी व्याकरणगत विशेषताएँ भिन्न हैं। हिंदी में दो लिंग और दो वचन होते हैं। लेकिन तेलुगु में नपुंसक लिंग होने के कारण हिंदी में नपुंसक लिंग का प्रयोग अनुवाद में करते समय अत्यंत सावधानी से करना पड़ता है।

6.2.2.1. उर्दू, अरबी, फारसी एवं तुर्की शब्दों के अनुवाद

कविवर डॉ. एन. गोपि ने भाषा के संबंध में बड़ी उदारता दिखाते हुए अपनी इस मूल पुस्तक में अरबी, फारसी, तुर्की, हिंदी और अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ – कफन (अरबी), जेब (फारसी), चाकू (तुर्की), खिड़की (हिंदी) का तेलुगु तद्भव रूप किटकी आदि। अंग्रेजी के अनेक शब्दों का प्रयोग हुआ है, जैसे- हैजाक, बिज़ी-बिज़ी, रोटीन, कनफ़्यूजन, इण्डिया, लिंक, फ़्यान, हीटर, वोट, इंटरनेट, वेलटेक, स्ट्रटजी, ट्राफ़िक, माइम (Mime), ईविल, ईगल, रोड़, पेज, ट्री, आदि-आदि।

तेलुगु मूल के प्रत्येक पृष्ठ पर एक मुक्तक का भाव, रेखाचित्र के माध्यम से व्यक्त किया गया है, जो एक अनूठा प्रयोग है। अनुवाद-पुस्तक में भी इसे अपनाया गया है। कविवर गोपि ने मानव-मन की चंचलता की तुलना बंदर से करते हुए लिखा है-

मन बंदन नहीं
नन्हा बालक है
जो दिखे उसे

माँगता है।

गोपि के नन्हें मुक्तक में कवि गोपि ने अपनी अद्भुत कला-शक्ति का परिचय दिया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

आकाश कभी-कभी / धरती का कफन बन जाता है।

बादलों को / पसीना नहीं आता / आता तो / हमारी यह हालत न होती

लहरों की भी / क्या होती हैं जड़े / बिना जड़ों के वे / कैसे पहुँचती हैं किनारे !

जब तक फटेंगे नहीं / बादलों के सीने / तब तक बुझेगी नहीं / जीवन की आग।

जीवन विष है / इसी लिए आकर्षक / जीवन अमृत है / इसीलिए संघर्षमय

6.2.2.2. पाद-टिप्पणी

अनुवाद में कहीं-कहीं स्थानवाचक संज्ञा शब्दों को पाद-टिप्पणी में स्पष्ट किया गया है. जैसे- तेलंगाणा (आंध्रप्रदेश का एक भूभाग, जिसमें दल जिले हैं।), हुसैन सागर (हैदराबाद शहर का एक सुंदर तालाब), भद्राचलम् (आंध्रप्रदेश के खम्मम जिले में स्थित गोदावरी नदी का किनारा।), राजमंद्री (आंध्रप्रदेश का एक जिला) आदि।

हिंदी और तेलुगु में संस्कृत के समान रूपी समानार्थी शब्दों के प्रयोग में अनुवादक के लिए कोई कठिनाई नहीं होती। परंतु, जहाँ समान रूपी भिन्नार्थी शब्द आते हैं, वहाँ अनुवादक को अत्यंत सतर्कता से अपना काम करना पड़ता है। स्वेच्छानुवाद के कारण अनुवाद में अक्षर-संख्या का पालन नहीं कियार जा सका। मूल के निर्माण में जो पंच (Punch) है, अनुवाद में उसे यथासंभव लाने का प्रयास हुआ है। डॉ. एन. गोपि के नन्हें

मुक्तकों का अनुवाद हिंदी के अतिरिक्त मराठी, कन्नड़, तमिल, उर्दू आदि भाषाओं में हो चुका है, कुछ अन्य भाषाओं में अभी हो रहा है।

प्रस्तुत संग्रह के अनुवाद में कई स्थानों पर तेलुगु शब्दों के हिंदी पर्याय को ढूँढने में मैं अयोग्य-सा रुकता गया। इस कठिनाई को प्रो. सैयद खालिद कादरी साहब ने सरल बना दिया। शब्द-चयन में डॉ. गोपि तथा प्रो. कादरी जी के साथ मुझे सैकड़ों घण्टे बिताने पड़े। परिणाम यह रहा कि अनुवाद-कार्य में शब्द-क्रम, शब्द-रचना, पंक्ति-विभाजन, पर्यायों के चयन में उक्त दोनों विद्वानों से बहुमूल्य सुझाव मिले। उन्हीं की संगत में यह अनुवाद कार्य संपन्न हुआ। इन दोनों, महानुभावों क प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। डॉ. एन. गोपि ने अत्यंत प्रेम से तेलुगु की अपनी इस रचना को हिंदी में अनुवाद करने की अनुमति देकर मुझे कृतकृत्य किया। मैं उनका आभारी हूँ। प्रो. कादरी साहब को अधिकामंश श्रेय जाता है। मैं उनकी प्रतिभा को नमन् करता हूँ।

गोपि के नन्हें मुक्तक में डॉ. एन. गोपि की ढेर सारी अनुभूतियाँ मिलती हैं। मन का चित्रण, मनुष्य का चित्रण, राजनीति, साम्यवाद, मानव-जीवन के वैविध्य का अत्यंत गहराई के साथ चित्रण किया गया है। कुछ मुक्तकों में स्त्री और स्त्रीवादी तत्व उल्लेखनीय हैं। प्रतीकात्मकता प्रशंसनीय है। सामाजिक चेतना अवलोकनीय है। सीमित अक्षर-संपदा में असीम भाव-संपन्नता की सृष्टि, एक और विशेषता है।

इस संग्रह के सौ से अधिक नन्हें मुक्तक संकल्य (हैदराबाद), मैसूर हिंदी प्रचार परिषद् पत्रिका (बैंगलूर), विवरण पत्रिका (हैदराबाद), स्रवंती (हैदराबाद) मासिक पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित हुई। अतः इन संपादकों के प्रति हार्दिक धन्यावाद।

6.2.2.3. अनुवाद में नन्हे मुक्तकों के बदलाव

अनुवाद में संप्रेषण की कठिनाई के कारण इस कविता संग्रह के 6 मुक्तक तेलुगु मूल से भिन्न हैं जो इस प्रकार है-

तेलुगु में

कालमने मग्गं मीद
ऊचला सूर्युडु,
नेसेदि
उदयन्नि।[255]

की जगह

आँखों के दीदे नहीं ये
आँसुओं के घड़े हैं,
एक ही पत्थर से
फोड़ दिया ना ![256]

मूल मुक्तक और अनुवाद मुक्तक से भिन्न इसलिए है कि समय नामक चरखा के ऊपर सूरज उदय को कातने को हिंदी में मुक्तक के रूप में व्यक्त करना कठन लग रहा था इसलिए उसे गोपि द्वारा लिखित अन्य मुक्तक को रखा गया जिसका अर्थ मूल से भिन्न है।

तेलुगु में

हिमालयल्लो
अट जनि कांचिते

[255] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 2
[256] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 2.

पेद्दन्ना
गुर्तुकोच्चाडु।[257]

की जगह

अंतरावलोकन के लिए
काफी नहीं आँखे,
इसके लिए
दिल भी चाहिए।[258]

यहाँ कवि हिमालय के बारे में वर्णन करते हुए कहता है कि मुझे अल्लसानी पेद्दन्ना (तेलुगु साहित्य के प्रमुख कवि) को स्मरण करता है। बल्कि हिंदी में इसका अनुवाद करने के लिए पेद्दन्ना का अर्थ बड़े भाई होगा या पाद टिप्पणी देने पर भी हिंदी साहित्य पेद्दना की तरह तुलना करने के लिए कोई समानांतर कवि का नाम लेने के लिए कठिनाई महसूस की इसलिए मूल से भिन्न मुक्तक को रखा गया।

तेलुगु में

वेन्न पूसुकोवडानिके
अनुकुन्नां।
चाकुलु
हाईजाकुलु कूडा।[259]

की जगह

ठण्ड से

[257] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 4
[258] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 4
[259] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 45

झड़ गये पत्ते सारे,
बेचारा
क्या ओढ़ता होगा नंगा पेड़ ![260]

यहाँ पर चाकू के उपयोग के बारे में बताते हुए कवि का मानना है कि हाईजाकु (तेलुगु में अपहरण करते समय डराने के लिए) के लिए भी उपयोग कर रहे हैं इसी भाव को अनुवाद में लाने के लिए हिंदी में उपयुक्त शब्द नहीं मिलने के कारण इस मुक्तक को हटाकर, इसके जगह दूसरे मुक्तक को रखा गया।

तेलुगु में

गोदावरिनि चिलिकिते
भारतं।
इप्पुडंता
गीरतमे।[261]

की जगह

दीप नहीं तो
सोने की ढिबरी भी है बेकार,
दीप हो तो
मिट्टी भी है सोना।[262]

यहाँ पर कवि का कहना है कि गोदावरी नदी को मंथने से भारत देश की भव्यता बाहर आयेगी। लेकिन अभी कुछ भी नहीं है अर्थ आने के लिए गीरतमे शब्द का इस्तेमाल

[260] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 45

[261] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 46

[262] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 46

किया है। वास्तव में गीरतमे शब्द का कोई सटीक अर्थ तेलुगु में भी नहीं है। भारतं शब्द का युग्म शब्द गीरतं रखा गया। इस शब्द को अनुवाद करने के लिए अनुवादक ने कठिनाई महसूस किया और इसके जगह दूसरे मुक्तक को रखा गया।

तेलुगु में

चेन्नाई लो
अन्नी वुन्नै।
बीचीलो कूचोनि
पीचुमल्बा तिंदामा अरुद्रा ![263]

की जगह

ईर्ष्या न कर कोई
तो जीवन क्या !
वो तो
बिना पत्तों का पेड़।[264]

यहाँ पर कवि चेन्नाई के बीच (तट) के बारे में वर्णन करते हुए कवि आरुद्र (तेलुगु के आधुनिक महान कवियों में से एक) के बारे में वर्णन किया है, इसे हिंदी में अनुवाद करते समय हिंदी साहित्य में आरुद्रा की तरह कोई भी कवि को रखने पर अपवाद होगा या सटीक नहीं लगने के कारण अनुवादक ने इस मुक्तक को बदलना पड़ा।

तेलुगु में

पसिवाडु

[263] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 95

[264] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 95

कोल्लनु कोडीलु अन्नाडु
व्याकरणान्नि
दिद्दुकोंडि।[265]

की जगह

पानी का भी
होता है व्याकरण,
संभवतः उसे
नावें जानती हैं।[266]

यहाँ पर तेलुगु व्याकरण के बारे में कवि बताते हुए मुर्गी को मुर्गियाँ कहते हुए कुछ ऐसा शब्द का प्रयोग किया जिसे हिंदी मे अनुवाद करना कठिन है। इसलिए उसी जगह व्याकरण से संबंधी एक नया मुक्तक को रखा गया।

इस तरह अनुवादक ने अनुवाद करते समय अनुवाद की कठिनाईयों को समेटते हुए नये मुक्तकों को स्थान दिया है।

6.2.2.4. अंग्रेजी शब्दों का अनुवाद

नन्हे मुक्तकों की तरह गोपि के नन्हे मुक्तक कविता संग्रह में भी मूल कवि डॉ. एन. गोपि ने अंग्रेजी शब्दों का खूब प्रयोग किया है। परंतु अनुवादक ने अर्थ-गहनता की दृष्टि से कही-कही हिंदी शब्दों का प्रयोग करके, सुंदर अनुवाद किया है। उदाहरण के लिए-

कार की आदत पड़ जाए / तो पैरों का नुकसान, / ए.सी. के वश में / हवा की हानि।[267]

---

[265] गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्या प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002, पृ. सं. 104

[266] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 104

[267] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक. डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ.सं. 4

उसका ही है / सारा रिमोट कंट्रोल, / बिगड़ जाए तो / सब गोलमाल।[268]

सारे फूल / नहीं होते एक ही साइज के / तो भी / उनकी ख़ुशबू में नहीं कोई भेद[269]

6.2.3. अनूदित पाठ का विश्लेषण और मूल्यांकन

अनुवादक के अनुसार गोपि के तेलुगु काव्य-संग्रह गोपि नानीलु के हिंदी अनुवाद का मैंने संकल्प लिया और मेरी योग्यतानुसार मैं इस संग्रह का हिंदी अनुवाद कर बैठा। गोपि जी के तब-तब सुनाया करता था। वे ध्यान से सुना करते थे। अनेक स्थलों पर अनुवाद-शैली कुछ अटपटी सी लगी। अतः उन्होंने सुझाया कि इस संग्रह का संशोधन अंग्रेजी विभाग के प्रो. सैय्यद ख़ालिद कादरी साहब से संशोधन करवाया जाय। कादरी साहब की प्रतिभा से गोपि जी भली भाँति परिचित हैं। इसके अतिरिक्त कादरी साहब गोपि जी के घनिष्ठ मित्र हैं। अतः इस संशोधन कार्य के लिए प्रोकादरी साहब से निवेदन . कार्य पूरा हुआ। -किया। उन्होंने तुरंत प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। यथासंभव अनुवाद यह हैदराबाद के वित्तीय अनुदान से ,गोपि जी तृप्त हुए। आंध्र प्रदेश हिंदी अकादमी में 2008अनूदित संग्रह 'गोपि के नन्हें मुक्तक' शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

[268] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक. डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ.सं. 6
[269] गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक. डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, 2008, पृ.सं.16

उपसंहार

उपसंहार

अनुवाद का सामान्य अर्थ है- स्त्रोत भाषा की सामाग्री को लक्ष्य भाषा में पहुँचाना। आज अनुवाद इस मूल कार्य को करते हुए भी स्वयं में लक्षित भाषा के लिए मूल पाठ का कार्य कर रहा है। इसके पीछे वैश्विक दृष्टि एवं भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया का योग है। वैश्विक दृष्टि से तात्पर्य है- स्थानीयता को सार्वकालिकता में देखना। वैश्वीकरण के दौर में अनुवाद लोगों के बीच में सम्प्रेषण का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम हो गया है। वैश्वीकरण के कारण अनुवाद का महत्त्व बढ़ा है। यह अनुवाद ही है जिसके कारण एक संस्कृति के विचार दूसरी संस्कृति तक सहजता से पहुँच रहे हैं। साहित्य की वैश्विक अभिव्यक्ति के लिए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। आज कल विश्व में साहित्य के प्रति लोगों की दृष्टि वैश्विक हुई है और लोग विभिन्न देशों के प्रति जागरुक हुए हैं। अनुवाद के माध्यम से ही हिंदी भाषी पाठक भी विश्व के साहित्य से जुड़ने को उत्सुक हैं।

अनुवाद का क्षेत्र बढ़ने के साथ ही इसकी वैचारिकता का फलक भी विस्तृत हुआ है। अनुवाद-मूल्यांकन के समानांतर शब्दों में अनुवाद-पुनरीक्षण से तात्पर्य है- अनूदित पाठ को फिर से देखना। अनुवाद-संपादन का मतलब है- अनूदित पाठ का सम्यक् रूप से संपादित रूप तैयार करने से है। अनुवाद-समीक्षा, अनूदित पाठ के गुण-दोषों के विवेचन का ही नाम है। अनुवाद में अनुवादक और पुनरीक्षक की भूमिका भी बड़ी महत्त्वपूर्ण है। जहाँ अनुवादक से अनुवाद में कमियाँ, सीमाएँ रह जाती हैं वहीं से पुनरीक्षक की भूमिका शुरू होती है। पुनरीक्षक दोबारा से अनूदित पाठ का सम्यक् रूप से विश्लेषण करता है। यह विश्लेषण शब्द-चयन एवं अर्थ की प्रतीति से जुड़ा हुआ होता है। अनुवाद-मूल्यांकन की वैचारिकी भी अन्य साहित्यिक रूपों के समानांतर विकसित हो रही है और इसके विस्तृत होने की अत्यधिक संभावना बनी है।

डॉ.एन.गोपि तेलुगु के ही नहीं बल्कि भारतीय एवं विश्व साहित्य के महत्त्वपूर्ण रचनाकारों में गिने जाने योग्य हैं। इन्होंने परिपूर्ण कवि के मानदंडों को पूर्ण किया। इसलिए इनकी कविता पूर्णता के भाव से ओत-प्रोत है। भारतीय भाषाओं के प्रति इनका लगाव सर्वविदित है। इनकी कविताओं की खूबी यह है कि कवि और कविता दो नहीं एक है, एकाकार है, जिसके कारण से गोपि जी की कविताओं का अनुवाद करना कठिन दुर्गम है। इनकी कविता को जानने के लिए कवि को जानना पड़ता है और कवि को जानने के लिए उनकी कविता के मूल स्रोत को जानना जरूरी है। स्वयं एन.गोपि ने लिखा है कि "कविता मेरे लिए वेदना भरी एक रासायनिक प्रक्रिया है। वेदना इसलिए कि संक्लिष्ट मानव को व्यवहार में उतरकर, तैरकर बाहर निकलना पड़ता है। कविता मेरी दृष्टि में एक छलनी है, एक छान है, छानने का एक कपड़ा है।"

इनकी रचनाओं में चेतना हैं, संजीदगी है। ये रचनाएँ हमारे आसपास और हमसे जुड़ी हैं। हमारी रोटी, कपड़ा, पानी, हवा, आँसू, हमारे गाँव, रास्ते, आँगन, हमारे माता-पिता, बेटी, हमारी मातृ-भाषा, हमारे पहाड़, नदियाँ, कितने प्यारे हैं, उनकी खूबियों का वर्णन पढ़ने से वह और भी प्यारे लगते हैं। उनसे लगाव और मजबूत होता हैं, भावनाएँ जागृत होती हैं, आज का मनुष्य जो अपने आप से दूर होता जा रहा है। वह फिर से अपनी ओर लौटकर आने लगते हैं, इस तरह की भावनाएँ जाग उठती हैं। न कोई उपदेश हैं, न कोई आदेश हैं, मगर कविताओं का अनोखापन ही लुभावना है। बिल्कुल नये अंदाज में लिखी गयी है। इन्हीं बातों की वज़ह से नये अंदाज के कारण ही यह लोकप्रिय हैं।

डॉ. एन. गोपि की कविताओं को अलग-अलग अनुवादकों ने अलग-अलग कविता-संग्रह को अनुवाद किये हैं। लेकिन इनके द्वारा रचित हर कृति के अनुवादक अनुवाद-जगत में अपना विशेष छाप छोड़े हैं। डॉ.एन. गोपि के अनूदित कृतियों का विश्लेषण और मूल्यांकन करने के लिए मुझे एक-एक कृति अलग-अलग अध्यायों मे बाँट कर करनी पड़ी

और अंत में नीचे हर एक कृति का मूल्यंकन के रूप में संक्षिप्त रूप में नीचे दिया जा रहा है।

जलगीत प्रदीर्घ कविता संग्रह में कवि की मूल चिंता जल प्रदूषण को लेकर है। कवि कहते हैं- "यह शताब्दी है जल को धन के दंश की।" कवि के सामने 'प्रगति' और 'विकास' को लेकर उत्तर-औपनिवेशिक समाज की चिंताएँ हैं। जिस 'विकास' का सपना भारत जैसा देश देख रहा है उसमें सदानीरा नदियाँ या तो सूख रही हैं या फिर इतनी प्रदूषित हो गयी हैं कि उनका जल पीने-नहाने लायक नहीं रहा है।

कवि के अनुसार यह कोई वैज्ञानिक काव्य नहीं है और न ही प्रकृति दर्शन केंद्रित कामायनी जैसा दार्शनिक काव्य। यह तो जल की प्रकृति जीवन सत्ता को उद्घाटित करनेवाला मानवतावादी काव्य है। दर्शन है, लेकिन छौंक मात्र। एक संस्कृति का जल-दर्शन और तत्त्व-ज्ञान कैसे उसकी भाषा में रच-पच कर आता है इसका एक अच्छा उदाहरण है 'जलगीत'। यहाँ भाषा माध्यम नहीं रहती वह एक स्वतंत्र शक्ति का साधन बन जाती है और सामने लाती हैः जल जीवन का सौंदर्यशास्त्र।

जलगीत की कविताओं में कवि ने एक ओर पानी के महत्त्व का वर्णन किया है तो दूसरी ओर उसके संपूर्ण भारतवर्ष की प्रकृति और वैश्विक चेतना को भी समेट लिया है। मानवीय संस्कृति का विकास वस्तुतः जलसंस्कृति का विकास है। इसमें नलगोंडा से लेकर अफ्रीका तक फ्लोरोसिस बीमारी से पीड़ित लाखों लोगों के प्रति हमदर्दी हैं।

कवि एन.गोपि इस विकट आधे-अधूरे समय में जहाँ केवल पानी ही नहीं मनुष्य का अंतःकरण भी बेचा जाता है ऐसी दुनिया में भी इस प्राकृतिक देन के प्रति प्रतिबद्ध हैं- यह प्रतिबद्धता खोखली नहीं, केवल प्रचारात्मक नहीं है बल्कि वैसी प्रतिबद्धता है जो जिंदगी के भीतर से उभरती है तथा हमारे सामने एक शक्ति के रूप में खड़ी होती है।

मूल कवि तथा अनुवादिका दोनों ही अध्यापन कार्य से जुड़े हैं। अतः उनमें अपने विषय को समझाने तथा जागरुक करने का प्रयास रहा है और वे सफल भी हुए हैं। एक ओर तेलुगु भाषियों के समक्ष कबीर के दोहे रखे गये हैं तो दूसरी ओर हिंदी भाषी तेलुगु के वेमना जैसे कवियों से परिचित हुए हैं। यह अनुवाद के ही माध्यम से ही संभव है।

इस तेलुगु कविता का प्रो.माणिक्यांबा जी ने ऐसा अनुवाद किया है जैसे सुधी पाठक को लगता है कि यह अनुवाद नहीं मूल कविता है। प्रो.मणि जी के अनुवाद में तेलुगु भाषा की खूबियाँ तो ज्यों का त्यों रह गयी हैं लेकिन उसके साथ हिंदी की खूबियाँ स्वाभाविक रूप से जुड़ गयी हैं। इसलिए यह कहा जाता है कि 'जलगीत' का वास्तविक रूप से भारतीयकरण हुआ है।

कवि 'कालान्नि निद्र पोनिव्वनु' (I will not let time to sleep) समय को सोने नहीं दूंगा... कहकर शपथ ली है। कवि की शुभ भावना शीर्षक से ही प्रकट होती है। सच कहा है कि जिसका वक्त ही सो गया उसके लिए कुछ रहता ही नहीं। इसलिए 'समय को सोने नहीं दूंगा' की कविताओं में कवि ने समाज, गाँव, रास्ते, आंगन, सरोवर, बेटी और माता-पिता, चिट्टी से जुड़े रिश्तों को जागृत किया है। ऐसा करके कवि ने समाज को और समय को सोने नहीं देने का कार्य किया है। इस पुस्तक में संग्रहित बहुत सारी कविताओं में काल की चर्चा की गयी है। कुछ समय के लिए समय को हराने वाले आदमी इसमें नायक हैं। काल के साथ किये गये संघर्ष इस कविता संग्रह के अंतःसूत्र हैं। यह कविता-संग्रह बहु-चर्चित रहा है। इस पर इन्हें वर्ष-2000 में केन्द्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। यह दो बार पुनः प्रकाशित होकर हमारे सामने आया है। स्वयं एन.गोपि ने ऐसा कहा है कि 'इस काव्य-संग्रह की कविताएँ मन के अचेतन का वर्णन करनेवाली कविताएँ हैं।' प्रकृति का वर्णन है, प्रादेशिक विशेषता दर्शाने वाली कविताएँ (ब्लोआउट,

एपिटाफ़, पत्थर आदि) आज-कल के भूमण्डलीकरण के युग में देशीय भावना वैश्विक स्तर पर पहुँचाने का बड़ा महत्वपूर्ण कार्य अपनी कविताओं के माध्यम से एन.गोपि ने किया है। समय के अनेक पहलुओं के दर्शन इन कविताओं में होते ही हैं, लेकिन कवि की सकारात्मक दृष्टि के कारण वे समय से हार नहीं मानते। समय से लड़ना चाहते हैं और इस संघर्ष में जो सुख उन्हें होता है वही कवि की जिजीविषा का प्रतीक है। कवि की दृष्टि जीवन से डरकर भाग जाने की, पलायनवादी नहीं है उनका जीवन हवा के साथ तलवार चलानेवाले अखंड दीप की तरह है। कुछ कविताओं में कवि की भावनात्मक आत्मकथा दिखाई देती है। इस काव्य-संग्रह समय के अनेक पहलूओं को प्रतिबिंबित करता है। इसमें आर्ति, वेदना और व्याख्या है। इनके अनुसार ये कविताएँ एक प्रकार से अचेतनावस्था (Trance) में लिखी गयी। इस काव्य-संग्रह की रचना के कुछ समय पहले 17 साल की इनकी बेटी की मृत्यु हो गई थी। वे पाताल में गिर गये थे। बड़ी मुश्किल से ऊपर चढ़कर, धरती पर रेंगते हुए, समय से सवाल करते हुए, लिखी गई कुछ कविताएँ इस संग्रह में हैं। व्यक्तिगत दुख सामान्य धरातल पर आकर विश्वदुख के पास किस प्रकार पहुंच जाती है, इसी से संबंधित दृश्य इस संग्रह में दिखाई देंगे। यह संग्रह इनके मनुष्य के क़रीब ले गया। 'मेरी बेटी' (मा अम्मायी), घाव तो घाव ही है (गायम् गायमे), मरती हुई चिट्ठी (चच्चिपोतुन्न उत्तरम्), मौत का दुख (मृत्यु दुःखम्) पढ़कर पाठक की आँखे नम हो जाती है।

इस कविता संग्रह का हिंदी अनुवाद श्रीमति आर. शांता सुंदरी ने 'समय को सोने नहीं दूँगा' शीर्षक से किया है। ये पिछले 40 वर्षों से भी अधिक वर्षों से अनुवाद क्षेत्र में रहने के कारण हिंदी में इस कविता संग्रह का अनुवाद प्रभावपूर्ण ढंग से किया है। तेलुगु-हिंदी अनुवाद से संबंधी हर पहलू को छूते हुए इन्होंने अनुवाद किया है। इस अनुवाद

कार्य ने ही भारत के विविध भाषाओं में इस काव्य-कृति का अनुवाद होने में प्रेरणा दिया है।

इस कविता संग्रह को अनुवाद करने के बाद अनुवादक ने अपनी प्रतिक्रिया बताते हुए इस तरह कहती है कि- "अतीत के फल मैंने प्राप्त कर लिए। वर्तमान में चमक रहा हूँ। भविष्य में बीज बिखेर रहा हूँ। घावों से अभी मेरा मन हारा था। इस पुरस्कार ने उस पर चंदन का लेप लगा दिया है। मेरे काव्य जीवन में यह केवल पड़ाव है। मैं समझता हूँ कि भविष्य में नित्य सत्यन्वेषण करते रहने के लिए यह एक मार्ग बनेगा।"

'गोवालो समुद्रम' शीर्षक से डॉ.एन. गोपि ने गोवा का चित्र खींचकर हमारे सामने रखा है। यहाँ के खपरैल के मकान, समंदर के किनारे पर पुर्तगालियों के द्वारा खड़े किये गये दीपगृह, मीराभार, यहाँ के पहाड़, यहाँ के लोगों का बंधुत्व भाव, यहाँ की बारिश आदि सबको समेटकर अपनी कविताओं में ढाला है। यहाँ की प्राकृतिक हरीतिमा ने उनके संवेदनशील मन पर क्या जादू किया है, इसका वर्णन ये कविताएँ करती हैं।

पानी इस संसार की एक ऐसी चीज़ है जहाँ से सारी जीवित सृष्टि की रचना शुरू होती है, सारे जीवों के साथ पानी का यह रिश्ता बड़ा ही गहरा होता है। इसीलिए पानी के प्रति सभी जीवों में बहुत आकर्षण होता है। मनुष्य इस आकर्षण का प्रदर्शन बहुत सारे माध्यमों से करता है, कोई उसको कविता, कोई कथा, कोई चित्र, कोई संगीत तो कोई नृत्य या शिल्प में व्यक्त करता है तो कोई और किसी प्रकार से। डॉ. एन. गोपि गोवा के अपने इस आकर्षण और विचारों को सुंदर कविताओं के माध्मम से व्यक्त करते हैं।

इस छोटी-सी कविता संग्रह को श्रीमति आर. शांता सुंदरी ने हिंदी में 'गोवा, मैं और समुद्र' शीर्षक से किया है। अनुवादक का कहना है कि ये 18 कविताएँ गोवा के विशेषताओं के बारे में छोड़ देने पर, सिर्फ समुद्र, लहरें, समुद्र का तट इन सबको कवि

एन. गोपि ने एक नयी दृष्टिकोण से देखकर पाठकों के सामने लाया है। उनके द्वारा कालजल में भी समुद्र है और गोवा में भी समुद्र है। परंतु आठ वर्ष के अंतर में उनके दृष्टि में कितना भेद है।

'नानीलु' (Epigrams) (नन्हे मुक्तक) कविता-प्रक्रिया का प्रयोग आधुनिक तेलुगु काव्य-जगत् में 20 वीं शती के अंतिम दशक से नवीन प्रवृत्ति की सृष्टि है। इसी काव्य-संग्रह से गोपि ने हिंदी जगत में प्रवेश किया। नन्हे मुक्तकों के रूप में रूपायित होकर तेलुगु 'नानीलु' ने न केवल पाठकों का हृदय स्पर्श किया अपितु तेलुगु साहित्यिक जगत् के युवा और प्रौढ़ कवियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। 'नानीलु' ग्रंथ के रूप में प्रकाशित हुए अभी पूरे ग्यारह साल नहीं हुए, लेकिन सैकड़ों कवि इस नए छंद को अपनाकर कविताएँ लिखने लगे हैं। एक सौ से भी अधिक नानीलु के संकलन प्रकाशित हुए हैं। पत्र-पत्रिकाएँ अलग स्तंभ निर्धारित कर नानीलु के प्रचार में जुटी हुई हैं। इनके नन्हे मुक्तक उस समय की 'वार्ता' पत्रिका के संपादक ए.बी.के. प्रसाद जी ने 365 नन्हे मुक्तकों को संपादकीय पृष्ठ में लगातार 20 सप्ताह तक प्रकाशित हुए। नन्हे मुक्तकों में अधिकतर गाँव के जीवन की परिस्थितयाँ प्रतिबिंबित होते हैं। इस तरह नानीलु के कारण एन.गोपि तेलुगु कविता के क्षेत्र में ट्रेंड सेटर के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर रहे हैं। छोटी कविताएँ इसके पूर्व भी तेलुगु में प्रचलित रहीं। गत शती के 1980 के दशक में 'मिनी कविता' के नाम से छोटी कविताओं का ज़ोर रहा जिन की काव्य-वस्तु प्रमुखतः सामाजिक होती थी। 1990 दशक में 'हाईकू' कविता का ज़ोर रहा है जिसकी वस्तु प्रकृति-सौंदर्य और दार्शनिक रही। 80 और 90 दशकों के बीच एक और नया प्रयोग तेलुगु कविता के शिल्प में हुआ। वह था- डॉ.सी.नारायण रेड्डी के द्वारा पाँच चरणों में रूपायित 'प्रपंच पदुलु' छंद-विधान, जिस ग्रंथ के हिन्दी अनुवाद से प्रभाव ग्रहण कर मणिपुरी कवियों ने अपने

काव्य में पाँच चरणों के नए छंद को प्रवेश कराया। 90 दशक के अंत में एन.गोपि ने, जो मिनी कविता के सिद्धहस्त कवि माने गए, मिनी कविता एवं हाइकू दोनों प्रक्रियाओं को सम्मिलित कर एक नये देशी छंद विधान का निर्माण किया है, वही 'नानीलु' है। ये जापानी हाइकू की तरह की कविताएँ हैं। मगर जापानी हाईकू जापानी हैं, उनमें से इतना आनंद नहीं पाया जाता, जितना 'नन्हे मुक्तक' से पाया जाता है। इसकी वज़ह खास यह है कि ये रचनाएँ शुद्ध भारतीय हैं, और भारतीय शैली में लिखी गई हैं। ये चौपाई होती है। नानीयों की परंपरा में अब तक 15 काव्य-संग्रह निकल चुके हैं। और भी लोग नानीयों का अनुसरण करते हुए रचनाएँ कर रहे हैं। आजकल इस विधा को एक महान प्रयोग माना जा रहा है। इस कविता रूप के आविष्कर्ता, सृष्टिकर्ता, ट्रेण्ड सेटर, प्रवर्तक सब कुछ एन.गोपि ही है। तेलुगु में सामान्य पाठक से लेकर साहित्यकारों तक, सभी ने कविता की इस रूप-प्रक्रिया का स्वागत किया, आदर किया और प्रशंसा की। तेलुगु में नन्हे-मुक्तकों की इस रूप-प्रक्रिया का अनुसरण आज दो सौ तीस से अधिक कवि करते आ रहे हैं और लगभग उतनी ही पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं।

'नानीलु' कविता संग्रह में पूरे 365 नानीलु (मुक्तक) हैं। इसे अनुवादक डॉ. पोलि विजयराघव रेड्डी ने हिंदी में 'नन्हे मुक्तक' नामक शीर्षक से हिंदी में प्रकाशित किये, जिसका प्रकाशन 'क्षितिज प्रकाशन', दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। पहली बार विशाल हिंदी दुनिया में गोपि की साहित्य इसी कविता-संग्रह के माध्यम से आये। अनुवादक को भी हिंदी साहित्य जगत् में बड़ा ख्याति मिली। उपर्युक्त कथन से यह पता चलता है कि नन्हे मुक्तक अनुवाद से ही डॉ. एन. गोपि ने विशाल हिंदी जगत में प्रवेश किया।

'गोपि नानीलु' (गोपि के नन्हे मुक्तक) द्वितीय संग्रह हैं। इस संग्रह में कुल 365 नन्हे मुक्तक हैं। (वर्ष के कुल दिनों जैसा।) इसमें एन.गोपि की ढेर सारी अनुभूतियाँ

मिलती हैं। मन का चित्रण, मनुष्य का चित्रण, राजनीति, साम्यवाद, मानव-जीवन के वैविध्य का अत्यन्त गहराई के साथ चित्रण किया गया है। कुछ मुक्तकों में स्त्री और स्त्रीवादी तत्व उल्लेखनीय हैं। प्रतीकात्मता प्रशंसनीय है। सामाजिक चेतना अवलोकनीय है। सीमित अक्षर-सम्पदा में असीम भाव-संपन्नता की सृष्टि, एक और विशेषता है। यह भी हिन्दी और उर्दू दो भाषाओं में अनूदित हैं। ये सारे नन्हे मुक्तक जब गोपि वरंगल काकातीय विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे, उसी समय वरंगल से हैदराबाद आते-जाते कॉर में बैठे-बैठे लिखे गये थे।

इस कविता-संग्रह का अनुवाद डॉ. सना ने 'गोपि के नन्हे मुक्तक' शीर्षक से किया है। इन्होंने नन्हे मुक्तकों के अनुवाद बड़ी आकर्षक ढंग से किया है।

इस तरह उपरोक्त गोपि द्वारा लिखित सभी मूल एवं अनूदित कृतियों के विश्लेषण और मूल्यांकन के बिंदुओं के देखने पर हम यह कह सकते हैं कि डॉ. एन. गोपि तेलुगु साहित्य के बहुत बड़े कवि हैं। उनके द्वारा लिखित हर कविता-संग्रह को हिंदी में लाने की आवश्यकता है ताकि हिंदी साहित्य प्रेमी उनके गंभीर साहित्य से परिचित हो। अनुवाद एक ऐसी सेतु जो भिन्न दो भाषाभाषियों से एक-दूसरे से परिचित करता है। अनुवाद-साहित्य के मुताबिक भारत जैसी बहुभाषी देशवासी एक दूसरे के बारे में, एक दूसरे के साहित्य के बारे में जानकारी ले सके। इससे सही अर्थ में भारतीयकरण होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ (तेलुगु)

1. कालाग्नि निद्रपोनिव्वनु, एन. गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, 1998.
2. नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2001.
3. जलगीतम् (दीर्घ कविता), डॉ. एन.गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, प्रथम संस्करण, 2002.
4. गोपि नानीलु, डॉ. एन. गोपि, चैतन्य प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2002.
5. गोवालो समुद्रं (कवितालु), डॉ. एन. गोपि, जिष्णु प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2008.

आधार ग्रंथ (हिंदी)

1. समय को सोने नहीं दूँगा, (मूल तेलुगु कृति साहित्य अकादमी से पुरस्कृत), प्रो. एन. गोपि, अनुवाद. आर. शांता सुंदरी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2006.
2. नन्हे मुक्तक, तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवाद. डॉ. विजयराघव रेड्डी, क्षितिज प्रकाशन, दिल्ली, 2005.
3. जलगीत (लम्बी कविता), एन.गोपि, अनु. पी.माणिक्यांबा (प्रो.मणि), प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2005.
4. गोपि के नन्हे मुक्तक, अनुवादक. डॉ. सना, सारिका प्रकाशन, हैदराबाद, 2008.

5. समुद्र, मैं और गोवा (कविता संग्रह), तेलुगु मूल डॉ. एन. गोपि, अनुवाद. आर. शांता सुंदरी, गणेश्वर प्रकाशन, हैदराबाद, जनवरी 2009.
6. गोपि की कविता, संपादक आर. शांता सुंदरी, महती प्रकाशन, हैदराबाद, 2006.

सहायक ग्रंथ (तेलुगु)

1. जल दीपिक (एन.गोपि 'जलगीतम्' काव्यम् पइना व्यासालु-समीक्षलु), सं. एन.अरुणा, जिष्णु प्रचुरणलु, हैदराबाद, संस्करण-2008.
2. अक्षर (डॉ.एन.गोपि षष्ट्यिष्दिपूर्ति अभिनंदन संचिक) प्रधान सं. मद्दालि रघुराम, किन्नेर आर्ट थियेटर्स, हैदराबाद, संस्करण-25 जून, 2010.
3. गोपि साहित्य दर्शनम (दृक्कोणालु समीक्षणलु), संपादक आठ लेखक, हैदराबाद, 1998.
4. गोपि साहित्यविवेचन (व्यास संकलन), संपादक. डॉ. एन. रघु, अभव प्रचुरणलु, हैदराबाद, 25 जून, 2010.
5. गोपि कवित्वं-I (1967-2009), संपादक एन. अरुणा, अभव प्रचुरणलु, हैदराबाद, 25 जून, 2010.
6. गोपि कवित्वं-II (1967-2009), संपादक एन. अरुणा, अभव प्रचुरणलु, हैदराबाद, 25 जून, 2010.
7. गोपि कवित्वं-III (1967-2009), संपादक एन. अरुणा, अभव प्रचुरणलु, हैदराबाद, 25 जून, 2010.
8. ओ कवि स्वीयकथा, डॉ. एन. गोपि, अभव प्रचुरणलु, हैदराबाद, 2016.

सहायक ग्रंथ (हिंदी)

1. जल गीत : सृष्टि एवं दृष्टि, सं. डॉ.टी.वी.कट्टीमनी, ज्ञान भारती, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2009.
2. गोपि की कविता-अनुवादकों के अनुभव (A Festschrift for Prof. N.Gopi on his 60`Th Birthday), सं. पेरो.अस.वी.सत्यनारायण, जिष्णु पब्लिकेशन्स, हैदराबाद, संस्करण-25 जून, 2009.
3. गोपि की कविता, सं. आर.शांता सुंदरी, महती प्रकाशन, हैदराबाद, प्रथम संस्करण-2006.
4. गोपि के नन्हें मुक्तक, अनु. सना, सारिका प्राकशन, हैदराबाद, प्रथम आवृत्ति-2008.
5. अनुवाद विज्ञान, भोलनाथ तिवारी, शब्दकार, दिल्ली, संस्करण 1995.
6. अनुवाद क्या है ? डॉ. राजमल बोरा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 1996.
7. अनुवाद के विविध आयाम, डॉ.किशोरी लाल व्यास नीलकण्ठ, इन्दूर हिंदी समिति, हैदराबाद, 1999.
8. काव्यानुवाद की समस्याएँ, संपादक डॉ.भोलानाथ तिवारी, महेंद्र चतुर्वेदी, शब्दकार, दिल्ली, 1980.
9. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका, डॉ.मैनेजर पाण्डेय, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, तृतीय संस्करण-2006.

10. काव्य रचना प्रक्रिया, कुमार विमल, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1974.

11. मार्क्सवाद और कविता, अनु. रामनिहल गुंजन, चित्रलेखा प्रकाशन, इलाहाबाद, 1985.

12. छायावाद का समाजशास्त्र, शशि मुदिराज, परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988.

13. छठवाँ दशक, विजयदेव नारायण साही, हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, 1987.

14. कविता के नए प्रतिमान, नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली, 1990.

15. आंद्रेई वोज्नेसेन्सकी की कविताएँ (मूल रूसी के अनुवाद), अनु. वरयान सिंह, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 1985.

16. साहित्यानुवाद संवाद और संवेदना, डॉ. आरसु, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1995.

17. अनुवाद के नये परिप्रेक्ष्य, संतोष खन्ना, विधि भारती परिषद, नई दिल्ली, 2008.

18. अनुवादः समस्याएँ एवं समाधान, डॉ. अर्जुन चव्हाण, अमन प्रकाशन, कानपु, प्रथम 1999.

19. प्रायोगिक अनुवाद विज्ञान, डॉ. मनोहर सराफ, डॉ. शिवाकांत गोस्वामी, विद्या प्रकाशन, कानपुर, 1992.

20. अनुवाद कला, डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1987.

21. अनुवाद मूल्य और मूल्यांकन, डॉ. शशि मुदिराज, रुचिर प्रकाशन, नागपुर, 1988.

22. भारतीय भाषाएँ और हिंदी अनुवाद समस्या-समाधान, संपादक कैलाशचंद्र भाटिया, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 1996.

23. अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, डॉ. सुरेष कुमार, वाणी प्रकाशन, 1986.

24. अनुवाद-कार्यदक्षता (भारतीय भाषाओं की समस्याएँ), प्रो. डॉ. महेंद्रनाथ दुबे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006.

सहायक ग्रंथ (अंग्रेजी)

1. Gopi`s Poetry Experience of Translators (A Festschrift for Prof. N. Gopi on his 60th Birthday), Editor Prof. S. V. Satyanarayana, Jishnu Publications, Hyderabad, 25 June, 2009.
2. The Health Guide to literature, Bergman, David & Daniel Mark, Epstein, Canada, 1984.
3. Poetry festival India, Srikanth Verma, P.A. Nazareth, New Delhi, 1985.
4. Letters of Sri Aurobindo: Third Series, 1949.
5. “Virtual Article Reason” in the Art of Translation – Tutun Mukerjee.

पत्र-पत्रिकाएँ

तेलुगु

पत्रिका का नाम	अंक	वर्ष
1. मूसी	नवम्बर-दिसम्बर	1999
2. दिल्ली तेलुगुवाणी	फरवरी	2001
3. वार्ता	29 नवम्बर	2009
4. नदी (मास पत्रिका)	अप्रैल	2009
5. ईनाडु (महाराष्ट्र)	29, दिसम्बर	2004
6. नेटि निजम्	25 जनवरी	2001
7. वार्ता	रविवार, 14 जनवरी	2001
8. वार्ता	2 - 8, दिसम्बर	2000
9. विशालांध्र	सोमवार, 23 जून	2003
10. वार्ता	11 जून	2006
11. साहित्य प्रस्थानम्	जनवरी – मार्च	2003
12. जमीन राइतु	29 अक्तूबर	2004
13. पत्रिका	मई	2003
14. आन्धप्रदेश	फरवरी	2003
15. तेजोप्रभा	मई	2003
16. वार्ता	रविवार, 6 अप्रैल	2003
17. आंध्रज्योति	रविवार, 13 अप्रैल	2003
18. आंध्रप्रभ	8 फरवरी	2003

19. विशालांध्र	सोमवार, 13 दिसम्बर	2004
20. इंडिया टुडे	5 अगस्त	2003
21. आंध्रप्रभ	2 मार्च	2003
22. नडुस्तुन्न चरित्र	मार्च	2003
23. विशालांध्र	20 जनवरी	2002
24. विशालांध्र	रविवार, सितम्बर	2003

25. नेटि निजम् (साहिति केरटालु) हैदराहाद, दैनंदिन सामाचार पत्र (गुरुवार, 30-04-2015), संपादक बाइना देवदास

अंग्रेजी

1. Indian Express	14 March	2003
2. The Hindu	Sunday March	1993

हिंदी

1. साहित्य सेतु	जुलाआ-सितंबर	2016.
2. संकल्य	जुलाई-सितंबर	2016.

साक्षात्कार

1. साहित्य अकदमी का पुरस्कार स्वीकार करने के बाद, 20 फरवरी, 2001 को आयोजित लेखक – गोष्ठी में एन.गोपि द्वारा दिया गया भाषण।
2. सिरिसिल्ल में इंगिनेनी ट्रस्ट आवरण में 22 जनवरी, 2006 में इष्टागोष्टी में एन.गोपि के बातें।

कोश

1. विद्यार्थी हिंदी-हिंदी-तेलुगु कोश, सं.डॉ.एन.पी.कुट्टन पिल्लै, नीलकमल प्रा.लि. हैदराबाद, प्रथम संस्करण-2006
2. राजपाल हिंदी शब्दकोश, डॉ.हरदेव बाहरी, राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरि गेट, दिल्ली, 19 वां संस्करण, 2004.

वेबसाइट सामग्री

1. http://www.google.com
2. https://en.m.wikipedia.org
3. https://translate.google.com